कृष्णदास संस्कृत सीरीज ९९

छन्दोमञ्जरी

'सुधा' संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेता

(संशोधितं परिवर्द्धितं संस्करणम्)

व्याख्याकारः
पं. परमेश्वरदीन पाण्डेयः

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

कृष्णदास संस्कृत सीरीज

९९

****

श्रीगङ्गादासप्रणीता

छन्दोमञ्जरी

'सुधा'-संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेता

(संशोधितं परिवर्द्धितं संस्करणम्)

व्याख्याकारः

पं० परमेश्वरदीन पाण्डेयः

एम. ए., (संस्कृत-हिन्दी), साहित्याचार्यः, साहित्यरत्नम्

संस्कर्ता सम्पादकश्च

आचार्य पं० सत्यनारायणशास्त्री खण्डूड़ी

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : पुनर्मुद्रित, सन् २००९
मूल्य : रु. ४०.००

के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
(गोपाल मन्दिर के उत्तरी फाटक पर)
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन : २३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
(गोपाल मन्दिर के उत्तरी फाटक पर)
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : २३३३४५८ (आफिस), २३३४०३२ एवं २३३५०२० (आवास)
e-mail : cssoffice@satyam.net.in
web site : www.chowkhambaseries.com

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
99

***

CHANDOMAÑJARĪ

Of

GANGADAS

With

'Sudha' Sanskrit-Hindi Commentaries

By

Pt. Parameshwardin Pandey
M.A. (Sanakrit-Hindi), Sahityacharya, Sahityaratna

Edited By

Acharya Pt. Satyanarayan Shastri Khanduri

CHOWKHAMBA KRISHNADAS ACADEMY
Varanasi

Publisher : Chowkhamba Krishnadas Academy, Varanasi
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi

Oriental Publishers & Distributors
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1118, Varanasi- 221001
(INDIA)
Phone : 2335020

Also can be had from :

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
Publishers and Oriental and Foreign Book-sellers
K . 37/99, Gopal Mandir Lane
At the North Gate of Gopal Mandir
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi- 221001 (India)
Phone { Office : 2333458
Resi. : 2334032, 2335020
e-mail : cssoffice@satyam.net.in
web-site : www.chowkhambaseries.com

श्रीः

भूमिका

छन्दःशास्त्र का ऐतिहासिक परिचय

"छन्दः पादौ तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्"

प्राक्तन उक्तियों के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि षडङ्ग-वेदपुरुष का यह छन्दःशास्त्र पादस्वरूप प्रधान अंग है, पादप्रचलनक्रम से गतिशीलता प्राप्त होती है एवं वैदिक ऋचाएँ स्वरानुकूल छन्दः पर आधारित हैं, स्वर-व्यतिक्रम से अर्थ का अनर्थ हो जाता है, इसीसे वेद का पर्यायान्तर छन्दस् माना जाता है। साथ ही वैदिक वैशिष्टच के समान लौकिक वैशिष्टच भी छन्दःशास्त्र का सर्वमान्य है। इस प्रकार अनादिकाल से ही छन्दःशास्त्र की सत्ता विद्यमान है तथा वैदिक एवं लौकिक भेद से यह दो विधाओं में विभक्त है।

छन्दःशास्त्र के आदिप्रवर्तक भगवान् शंकर माने जाते हैं। देवेन्द्र, यास्कादि छः आचार्चों के अनन्तर परम्पराप्राप्त पिङ्गलाचार्य का नाम लिया जाता है। यद्यपि मतमतान्तरों के अन्तर्गत क्रमविपर्यय एवं नामविपर्यय भी पाया जाता है तथापि आदिप्रवर्तक आशुतोष शङ्कर तथा प्रधान आचार्य पिङ्गल निर्विवाद सिद्ध हैं।

छन्दोज्ञानमिदं भवाद्भगवतो लेभे सुराणां पतिः
तस्माद् दुश्च्यवनस्ततस्तु भरतो माण्डव्यनामा ततः।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिङ्गलः
तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं प्राप्यास्मदाद्यैः कृतम् ॥
छन्दशास्त्रमिदं पुरा त्रिनयानाल्लेभे गुहोऽनादित-
स्तस्मात् प्राप सनत्कुमारकमुनिस्तस्मात्सुराणां गुरुः।
तस्माद् देवपतिस्ततः फणपतिस्तस्माच्च सत्पिङ्गल-
स्तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिरथो मह्यां प्रतिष्ठापितम् ॥

पुराप्रवृत्त छन्दःशास्त्र की अत्यन्त दुरूहता को दृष्टिगत कर आचार्य पिंगल ने सर्वप्रथम 'छन्दःसूत्र' (पिङ्गल) की रचना कर इसे सुनियोजित करने का श्रेय प्राप्त किया। इसकी अनेक प्राचीन संस्कृत-टीकाएँ भी लिखी गयीं। तदनन्तर केदारभट्ट-विरचित वृत्तरत्नाकर, क्षेमेन्द्र-प्रणीत सुवृत्ततिलक, कालिदासकृत श्रुतबोध, हेमचन्द्रकृत छन्दोनुशासन तथा गङ्गादासरचित छन्दोमञ्जरी आदि प्रसिद्ध छन्दोग्रन्थों का प्रणयन हुआ।

अनावश्यक विस्तार को छोड़कर प्रस्तुत प्रसंग— छन्दोमञ्जरी-ग्रन्थ, ग्रन्थकार, छन्दः, छन्दभेद-प्रभेद, छन्दप्रयोग एवं उपयोगिता तथा संवर्धित नवीन इस संस्करण की विशेषता का संक्षेपतः दिग्दर्शन कराया जाता है।

छन्दोमञ्जरीकार गङ्गादास

ग्रन्थ के मंगलाचरण से ज्ञात होता है कि छन्दोमञ्जरीकार गंगादास के पिता का नाम वैद्य गोपालदास तथा माता का नाम सन्तोषा था। पितृनाम-निर्देशपूर्वक छन्दों के उद्धरणश्लोकों से प्रतीत होता है कि वैद्य गोपालदास पारिजातहरण आदि अनेक ग्रन्थों के रचयिता थे, तथा विद्वत्समाज में सम्मानित थे। गंगादास का जन्मकाल इतिहासकारों ने कई अनेक पुष्ट-प्रमाणों के आधार पर ईसवीय अट्ठारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध निश्चित किया है। इनकी अन्य रचनाएँ—अच्युतचरितमहाकाव्य, कृष्णशतक, सूर्यशतक आदि प्रसिद्ध हैं, यह इनके इसी ग्रन्थ की समाप्ति पर उपसंहारात्मक श्लोक से स्पष्ट हो जाता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ छन्दोमञ्जरी

छन्दो की मञ्जरी-स्वरूप—यह छन्दोमञ्जरी नाम सार्थक है। इससे पूर्व प्रचलित ग्रन्थ अतीव क्लिष्ट, विस्तृत अथवा सूत्रस्वरूप ही थे। साथ ही वैदिक छन्दों के दुरूह प्रसंगों से तथा अप्रचलित लौकिक छन्दों की बहुलता से विषय बोधगम्य नहीं हो पाता था। जो अन्य कुछ उपादेय भी रहे, वे भी सर्वांगपूर्ण, सम्यक् उदाहरण-प्रत्युदाहरणों से सम्पन्न तथा व्यावहारिक एवं भावावबोधन में सक्षम नहीं थे। इस महती त्रुटि की पूर्ति-हेतु गंगादास ने

सरल, सरस, मनोरम, प्राञ्जल भाषा-शैली में उदाहरण-प्रत्युदाहरणों से परिपूर्ण व्यावहारिक एवं आवश्यक छन्दों का ही इसमें समावेश कर सार्थक छन्दोमञ्जरी नामक ग्रन्थ की रचना की। जैसा कि स्वयं ग्रन्थ-समापन पर उनकी उक्ति है—

व्यवहारोचितं प्रायो मया छन्दोऽत्र कीर्तितम्।
प्रस्तारादिपुनर्नोक्तं केवलं कौतुकं हि तत्॥

यही कारण है कि इस छन्दोमञ्जरी-ग्रन्थ को सर्वत्र विद्वानों द्वारा समादर प्राप्त हुआ तथा इसकी उपयोगिता में वृद्धि होती गई। आज भी यह अधिकांश शिक्षा-संस्थानों द्वारा पाठ्यग्रन्थस्वरूप स्वीकृत है। और इसपर अनेक प्राचीन अर्वाचीन विद्वानों ने संस्कृत-हिन्दी-बंगला आदि अनेक भाषाओं में टीकाएँ कीं। अतः छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थों में इसका अपना एक विशिष्ट स्थान है।

छन्दः

"चित्ताह्लादजनकं छन्दः" जिससे चित्त आह्लादित हो उसे छन्दः कहते हैं। यूँ तो छन्दः के अनेक अर्थ हैं, किन्तु हमें यहाँ जो अभिप्रेत है, वह व्युत्पत्तिधायक शब्दार्थ उसका यही है। जिस प्रकार संगीत में स्वर, ताल, लय के द्वारा राग रागिणियों से रस प्रवाहित होता है और उससे श्रोता-वक्ता को चित्ताह्लाद की अनुभूति होने लगती है। ठीक इसी प्रकार लघुगुरुस्वरसंयोजित छन्दोबद्ध काव्य के वक्ता-श्रोता को भी चित्ताह्लाद की अनुभूति होती है, आनन्द प्राप्त होता है। वही 'छन्दः' छन्दःशास्त्रीय नियतनियमपूर्वक लघु-गुरुस्वरवर्णात्मक संयोजन से रचना में प्रयुक्त होता है तथा छन्दः नाम से कहलाता है।

छन्दोविधायक

छन्दःशास्त्र से सम्बन्धित कुछ पारिभाषिक शब्द, परिभाषाएँ, नियम, संकेत एवं मान्यताएँ हैं, जिनका समासरूप से परिचय आवश्यक प्रतीत होता है, सविस्तर ग्रन्थ में ही विन्यस्त है।

सर्वप्रथम यह ज्ञातव्य है कि समस्त छन्द-शास्त्र—म-य-र-स-त-ज-भ-न-ग-ल—इन संकेतात्मक दशवर्णों में ही समाहित है, जैसे परमात्मा में तीनों लोक।

म्यरस्तनम्नगैर्लान्तैरेभिर्दशभिरक्षरैः।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥

यह कैसे ? अतः इसे भली-भांति पहले अनुगम कर लेना चाहिए, तभी आगे गति सम्भव है। इसके पूर्व कुछ पारिभाषिक शब्दों का अर्थ समझ लें, जो नीचे दिये जा रहे हैं। इसी में उपरोक्त संकेतों का भी समावेश हो जायगा, समझने में भी सुविधा होगी।

गुरु-लघु—एकमात्रिक (ह्रस्व) वर्ण को लघु तथा द्विमात्रिक (दीर्घ) वर्ण को गुरु कहा जाता है। लघु का चिह्न एक सीधी खडी पायी (।.) है और गुरु का चिह्न एक अंग्रेजी एस के आकार का टेढ़ा विकार (ऽ) होता है। गुरु का संकेताक्षर 'ग' तथा लघु का संकेताक्षर 'ल' है। अर्थात् 'ग' से गुरु का बोध होता है तथा 'ल' से लघु का। जैसा कि उपरोक्त दस अक्षरों वाले सूत्र के अन्तिम 'ग.' 'ल.' अक्षर से बोध होता है।

एकमात्रो भवेद्ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्येत।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनश्चार्धमात्रकम् ॥
गुरुरेको गकारस्तु लकारो लघुरेककः।
क्रमेण चैषां रेखाभिः संस्थानं दर्श्यते यथा ॥

गुरु-लघु-विधान—ह्रस्व-दीर्घ मात्रा के अतिरिक्त लघु-गुरु-बोध का विधान रचना में यह है कि—दीर्घस्वरयुक्त वर्ण के अतिरिक्त लघु वर्ण भी यदि अनुस्वार से युक्त हो, विसर्गयुक्त हो एवं संयुक्त अक्षर से पूर्व हो तो गुरु हो जाता है। तथा पाद के अन्त का लघु वर्ण विकल्प से गुरु तथा गुरु वर्ण विकल्प से लघु हो जाता है। किन्तु यह विकल्प प्रयोजनानुसार ही होता है। जैसा छन्दःपूर्ति के लिए अपेक्षित हो।

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा ॥

गण—गण का सामान्य अर्थ समूह होता है। यहाँ गण शब्द पारिभाषिक है। छन्दःशास्त्र में गण कहने से किसी निश्चित संकेत का बोध होता है। ये गण उपरोक्त गुरु-लघु वर्णों के आधार पर बनते हैं। इनके बनाने का दो प्रकार से विधान है।

गणभेद—१. त्रिवर्णात्मक गण २. चतुष्कलात्मक गण।

त्रिवर्णात्मक गण—त्रिवर्णात्मक गण तीनों वर्णों के पृथक्-पृथक् गुरु-लघु संकेतों से बनते हैं। यह वृत्त-छन्दों में पूर्णतया तथा आर्यातिरिक्त छन्दों में आंशिक रूप से प्रयुक्त होते हैं। ये संख्या में पूर्वोक्त प्रकार से आठ हैं। इनके संकेताक्षर 'मयरसतजभन' पूर्व बताये जा चुके हैं। 'म' से मगण समझना चाहिए। इसमें तीनों वर्ण गुरु होते हैं। गुरु के तीन चिह्नों (ऽऽऽ) से उसे संकेतित किया जाता है। अर्थात् तीन ऽऽऽ गुरु चिह्नों से मगण का बोध होता है। 'म' के संकेताक्षर से मगण समझा जाता है। इसी प्रकार आठों गणों के नाम, संकेताक्षर तथा चिह्न नीचे दिये जा रहे हैं। उन्हें ध्यानपूर्वक अनुगम कर लें।

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ॥
आदिमध्यावसानेषु यरता यान्ति लाघवम्।
भजसा गौरवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम् ॥

गणबोधक तालिका

मगण = म.	यगण = य.	रगण = र.	भगण = भ.
ऽऽऽ	।ऽऽ	ऽ।ऽ	ऽ।।
सगण = स.	तगण = त.	जगण = ज.	नगण = न.
।।ऽ	ऽऽ।	।ऽ।	।।।

चतुष्कलात्मक गण—चार मात्राओं की गणना से एक चतुष्कलात्मक-गण बनता है। यह आर्या आदि छन्दों में प्रयुक्त होता है। इनकी संख्या पाँच है। नाम तथा चिह्न नीचे दिये जा रहे हैं—

सर्वगुरु	अन्तगुरु	मध्यगुरु	आदिगुरु	सर्वलघु
SS	IIS	ISI	SII	IIII

यति—उच्चारण करते समय जिस स्थान पर जिह्वा कुछ विश्राम लेती है, उसे यति कहते हैं। उचित स्थान पर यति-प्रयोग छन्दः का शोभाधायक होता है। प्रत्येक छन्दः में पृथक्-पृथक् स्थान पर यति-विधान मूल-लक्षण में ही कर दिया गया है। उसी-उसी स्थान पर यति करना चाहिए।

यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया॥
यदा तीव्रप्रयत्नेन संयोगादेरगौरवम्।
न च्छन्दोभङ्ग इत्याहुस्तदा दोषाय सूरयः॥
एवं यथा यथोद्वेगः सुधियां नोपजायते।
तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते॥
श्लोकेषु नियतस्थाने पदच्छेदं यतिं विदुः।
तदपेतं यतिभ्रष्टं श्रवणोद्वेजनं यथा॥

छन्दःप्रभेद

छन्दःशास्त्र की सत्ता अनादिकाल से विद्यमान है तथा वैदिक एवं लौकिक भेद से यह द्विधा विभक्त है, यह पूर्व ही प्रतिपादित कर दिया गया है।

इस प्रकार प्रथम वैदिक एवं लौकिक दो भेद छन्दः के हैं। वैदिक छन्दों का अतिविस्तृत वर्णन है, किन्तु समस्त वैदिक छन्दों में सात छन्दः प्रधान रूप से प्रसिद्ध हैं, जिनकी गणना—गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप् पृथ्वी, पंक्ति, त्रिष्टुप् तथा जगती नाम से की जाती हैं।

लौकिक छन्दः प्रथम दो प्रकार के होते हैं—

१. वृत्त एवं, २. जाति।

वृत्त—जिनमें अक्षरों की गणना होती है उन्हें वृत्तछन्दः कहा जाता है। जैसे—उक्थादि -श्री, स्त्री, स्रग्धरा, मन्दाक्रान्ता आदि।

जाति—जिनमें मात्राओं की गणना की जाती है उन्हें जातिछन्दः कहते हैं। जैसे—आर्या आदि।

पद्यं चतुष्पदी तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षरसंख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत्॥
अक्षरैर्गणना यत्र तद्वृत्तमिति कथ्यते।
मात्राभिर्गणना यत्र सा जातिरभिधीयते॥

इन वृत्त एवं जाति छन्दों के भेद, उपभेद एवं अवान्तर भेद भिन्न-भिन्न आचार्यों के मतानुसार भिन्न-भिन्न अनेक संख्याओं में विभक्त हैं। पुनः उनके भी अनेक अवान्तर भेद हो जाते हैं। यहाँ प्रस्तुत ग्रन्थ छन्दोमञ्जरी के मतानुसार ही सभी भेदोपभेदों का संक्षेपतः दिग्दर्शन मात्र कराया जा रहा है।

वृत्त

वृत्त—वृत्त में अक्षरों की गणना होती है, छन्दः में प्रयुक्त ह्रस्व-दीर्घ वर्ण के अनुसार लघु-गुरु संकेतों के आधार पर गण बनाकर छन्द का लक्षण घटाया जाता है। वृत्त के प्रथम निम्न निर्दिष्ट प्रकार से तीन भेद होते हैं—

१. सम, २. अर्धसम एवं, ३. विषम।

समवृत्त—जिस छन्दः के चारों पादों में एक समान वर्ण हों उन्हें समवृत्त कहा जाता है। वृत्त के इस समभेद के पुनः अक्षरों के ह्रास-वृद्धि-क्रम से २६ भेद होते हैं। जैसे – उक्था, अत्युक्था, मध्या, प्रतिष्ठा आदि। जिस छन्द के प्रत्येक पाद में एक अक्षर हो उसे उक्था, जिसके प्रत्येक पाद में दो अक्षर हों उसे अत्युक्था कहते हैं। इसी प्रकार एक-एक अक्षर की वृद्धि से प्रत्येक पाद में २६ अक्षर-पर्यन्त २६ भेद समवृत्त के हो जाते हैं। इन २६ प्रकार के उक्थादि छन्दों के पुनः अनेक अवान्तर भेद हैं।

इनके अतिरिक्त २७ वें अक्षर से ९ प्रकार के दण्डक छन्दों का प्रारम्भ होता है। इन ९ प्रकार के दण्डकों के भी अनेक अवान्तर भेद हैं। ये सभी समवृत्त छन्दों के अन्तर्गत ही आते हैं।

अर्धसमवृत्त—जिस छन्दः के प्रथम एवं तृतीय पाद में एक-समान तथा द्वितीय एवं चतुर्थ पाद में एक-समान वर्ण होते हैं उसे अर्धसमवृत्त कहते हैं। वृत्त के द्वितीय भेद इस अर्धसमवृत्त के भी मतान्तर से ६।१२।१८ अवान्तर भेद माने जाते हैं।

विषमवृत्त—जिस छन्द के चारों पाद भिन्न-भिन्न लक्षणों से युक्त हों उसे विषमवृत्त कहा जाता है। इसके भी पुनः उद्गतादि नाम से ८ अथवा ११ भेद भिन्नमतानुसार हो जाते हैं।

सममर्धसमं वृत्तं विषमञ्चेति तत् त्रिधा।
समं समचतुष्पादं भवत्यर्धसमं पुनः॥
आदिस्तृतीयवद् यस्य पादस्तुर्यो द्वितीयवत्।
भिन्नचिह्नचतुष्पादं विषमं परिकीर्तितम्॥

जाति

जाति—जाति छन्दों में मात्राओं की गणना होती है छन्द के जातिभेद मात्राछन्दों में पथ्या, विपुला, चपला, गीति आदि नव भेदों वाला आर्या छन्द माना जाता है। इसमें गण-शब्द से वर्णत्रयात्मक नगण आदि का ग्रहण नहीं होता है, अपितु चतुष्कलात्मक गणों को ही ग्रहण किया जाता है।

ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चार्यादिषु संस्थिताः॥

इनके अतिरिक्त वैतालीय, पज्झटिका आदि अपने अवान्तर भेदों के साथ कई प्रकार के होते हैं।

एवं प्रकार से छन्दों के अनेक प्रकार हैं। इनके प्रयोगों के भी छन्दः-शास्त्र में रसानुकूल नियम निर्धारित किये गये हैं। जिनका संकेतमात्र निर्दिष्ट है—

रसानुरूप एवं प्रसङ्गानुरूप छन्दों का प्रयोग

१. इतिहास-पुराण-प्रसङ्गों में, उपदेश-प्रधान वाक्य में एवं सामान्य

सर्गबन्ध काव्यों में अनुष्टुप् छन्दों का प्रयोग होता है। सर्ग की समाप्ति पर मालिनी छन्दः का प्रयोग उपयुक्त माना गया है।

२. शृङ्गाररस-प्रधान वर्णनों में एवं वसन्तादि ऋतुओं के वर्णन में उपजाति छन्दः का प्रयोग उत्तम है।

३. यौवनोद्भव, चन्द्रोदय, उद्यानादि उद्दीपक विभावों के वर्णन-प्रसङ्गों में रथोद्धता छन्दः का प्रयोग होता है।

४. विप्रलम्भशृङ्गार रस के कथानकों में; वर्षाऋतु के वर्णन में, प्रवास में, परदेशगमन में, वासनादियों के वर्णन में मन्दाक्रान्ता छन्दः का प्रयोग करना चाहिए।

५. उदारता, रुचिरता, महत्ता, औचित्य आदि के विचार-विमर्श में हरिणी छन्दः का प्रयोग श्रेष्ठ माना गया है।

६. विश्लेषणात्मक व्याख्यानों में, युक्तियुक्त अर्थों के समर्थक परिच्छेदों में शिखरिणी छन्दः का प्रयोग करना चाहिए।

७. राज्याधिपतियों, सेनानायकों, शासनाध्यक्षों, शूरवीरों की प्रशंसापरक स्तुतियों में शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग सर्वश्रेष्ठ है।

८. वीररस, रौद्ररस एवं इनसे सम्बन्धित प्रसङ्गों में वसन्ततिलका छन्द का उपयोग सर्वोत्तम कहा गया है।

९. वीरसेनानियों के प्रस्थान-प्रसंगों में दोधक वृत्त का प्रयोग छन्दः-शास्त्रज्ञों ने सर्वोपरि माना है।

१०. ट्रेन, बस, टेम्पो, स्कूटर आदि वाहन-प्रचलन-वार्ताओं में भी दोधक वृत्त उपयुक्त समझा गया है।

११. सैनिक, स्वयंसेवक एवं छात्रों के प्रशिक्षण प्रयोगों में तथा पथ-सञ्चलन आदि पदयात्राओं में द्रुतविलम्बित छन्द का प्रयोग होता है।

१२. समुद्र का ज्वार-भाटा, भूकम्प, विप्लव, उथल-पुथल आदि का वर्णन तोटक छन्द में किया जाता है।

१३. झंझावात का वर्णन स्रग्धरा छन्द में करना चाहिए।

१४. क्रोध, आक्षेप, धिक्कार आदि के प्रसङ्गों में पृथ्वी छन्द का प्रयोग उत्तम कहा गया है।

१५. सन्धि, विग्रह, यात्रा, उपेक्षा, आश्रय, द्वैधीभाव, कोष, दुर्ग, चतुरंग शक्ति, राजैश्वर्य, सम्पत्ति, ऊहापोह, पराक्रम, उद्योग, उत्साह, वृद्धि, क्षय अभ्युदय आदि वर्णन-प्रसङ्गों में वंशस्थ छन्द का प्रयोग ही सर्वश्रेष्ठ है।

१६. शान्तरस-प्रधान, भक्ति, श्रद्धा, देवस्तुति आदि रचनाओं में शिखरिणी छन्द उत्तम है।

छन्दः की उपादेयता

छन्दः शब्द अनेकार्थक है। छन्दः के पर्याय—वेद, इच्छा, रुचि, आच्छादन चित्ताह्लाद तथा वृत्त आदि प्रसिद्ध हैं। प्रकृत प्रसंग में 'वृत्त'-अर्थपरक छन्दः शब्द का ही ग्रहण है। जिसका अर्थ हुआ गुरुलघुयतिघटित नियतनियमनिबद्ध रचना। अतः जिस प्रकार संगीतादि में नियतस्वरलयतालघटित रागरागिणियों से चित्त की आह्लादकता उत्पन्नहोती है। ठीक इसी प्रकार त्रिवर्णात्मक-चतुष्कलात्मक-गणघटित नियतलघुगुरुयतिनियमनिबद्ध रचना भी चित्त की आह्लादक होती है, जिससे श्रोता-वक्ता आनन्दानुभव करता है। साथ ही रसानुकूल छन्दोनिबद्धता से तत्तद् रसों की सुतरां निष्पत्ति से परमानन्द ब्रह्मास्वाद की भी अनुभूति होती है तथा तज्जन्य फल की प्राप्ति भी अनायास ही अधिगत हो जाती है। जैसे देवतादि-स्तुतिपरक छन्दोबद्ध स्तुति-स्तोत्रादि के सस्वर पाठ से देवता-प्रसादन द्वारा मनोरथसिद्धि। वीररसप्रधान छन्दोबद्ध रचना के प्रसारण से शौर्यप्रदर्शनपूर्वक विजयसिद्धि। श्रेष्ठजन-प्रशंसापरक छन्दोबद्ध रचना के माध्यम से कार्यसिद्धि। अन्य शौर्य, यश, मित्रता, सामाजिकता, परोपकारिता आदि अनेक उत्कृष्ट गुणों का भी स्वयमेव सृजन होता है। इतना ही नहीं धर्म-अर्थ-काम-मोक्षादि-चतुर्वर्गफलप्राप्ति मानवमात्र को रसानुकूल छन्दोबद्ध रचना के माध्यम से सहज सुलभ हो जाती है। इस प्रकार इससे ऐहिलौकिक पारलौकिक उभयविध सुखों की प्राप्ति सुनिश्चित है और यही उभयविध सुख-प्राप्ति जीवन का सार है। यही छन्दः की उपादेयता भी सिद्ध है।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषता

अद्यावधिक उपलब्ध प्रकाशित संस्करणों से यह संस्करण अधिक संशोधित परिवर्द्धित एवं परिष्कृत है। इसके मूलपाठ तथा उद्धरण-श्लोकपाठ का संशोधन कलकत्ता से प्रकाशित वंगीयभाषानुवादयुक्त प्राचीन प्रामाणिक संस्करण के आधार पर किया गया है। ग्रन्थान्तर-प्रयुक्त प्रचलित अन्यान्य छन्दों के लक्षण-उदाहरण तत्तद्ग्रन्थ नामनिर्देशपूर्वक संस्कृत-हिन्दी-व्याख्या विवेचन सहित सविस्तृत दिये गये हैं, जो अन्य संस्करणों में एकत्र उपलब्ध नहीं है। छन्दों के नामान्तर भी यत्र-तत्र दिये हैं, जो अन्य ग्रन्थों में प्रयुक्त हैं। इसकी संस्कृत-हिन्दी टीका सरल सुबोध परिमार्जित भाषा-शैली में लिखी गयी है, जिससे प्रत्येक परीक्षार्थी, शिक्षार्थी, गवेषक, शिक्षक, पाठक आदि को अर्थावबोध में लेशमात्र भी असुविधा न हो। गण-विकार लक्षण के साथ सर्वत्र दिये गये हैं। प्रथम स्तबक में लघु, गुरु, गण, यति आदि विषयों का विवेचन उदाहरणों में घटाकर समझा-समझा कर विस्तारपूर्वक किया गया है।

इसके अतिरिक्त इस विस्तृत भूमिकाभाग में अनेक आवश्यक विषयों को समाविष्ट कर प्रस्तुत संस्करण को सर्वोपयोगी बनाया गया है। जिससे यह संस्करण, छात्र, अध्यापक, गवेषक तथा समस्त जिज्ञासु पाठकों के लिए भी समानरूप से उपयोगी प्रमाणित हो गया है। अतः यह संशोधित, परिवर्द्धित संस्करण प्रत्येक परीक्षार्थी व पाठक के लिए अनिवार्यरूप से पठनीय एवं संग्रहणीय है।

ज्ञातव्य है कि इस संस्करण के प्रकाशक **श्रीकृष्णदास अकादमी** के संचालक-गण हार्दिक प्रशंसा के पात्र हैं। जिन्होंने भारतीय-संस्कृति-संस्कृत के अमूल्य ग्रन्थरत्नों के प्रकाशन-कार्य में सेवापरकभाव से दत्तचित्त हो अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया है। एतावता हम सर्वतोभावेन इनके अभ्युदय की कामना करते हैं तथा पाठकों से सानुनय अनुरोध करते हैं कि श्रीकृष्णदास अकादमी से प्रकाशित ग्रन्थों को अधिक से अधिक संख्या में अपना कर सञ्चालक वर्ग का उत्साहवर्धन करें तथा सत्साहित्य से स्वयं भी लाभान्वित होवें। शुभम्।

दीपमालिका २०४७ — **सत्यनारायण खण्डूड़ी**
वाराणसी।

छन्दोमञ्जरी-विषयानुक्रमणिका

॥ श्रीः ॥

छन्दोमञ्जरी

'सुधा'-संस्कृत-हिन्दी-व्याख्योपेता

प्रथमः स्तबकः

देवं प्रणम्य गोपालं वैद्यगोपालदासजः ।
सन्तोषातनयश्छन्दो गङ्गादासस्तनोत्यदः ॥ १ ॥

अन्वयः—वैद्यगोपालदासजः सन्तोषातनयः गंगादासः देवं गोपालं प्रणम्य अदः छन्दः तनोति ।

व्याख्या—प्रकृत-ग्रन्थ-प्रणेता कविर्गङ्गादासः स्वेष्टदेवता-प्रणतिपुरःसर मङ्गलाचरणं कुर्वन् स्वप्रतिपाद्यविषयं विदधाति— देवमिति । वैद्यगोपाल-दासजः—वैद्यश्चासौ गोपालदासस्तस्माज्जातः = वैद्यगोपालदाससूनुः । सन्तो-षातनयः–सन्तोषायाः=तन्नाम्न्यस्तनयः सुतः । गङ्गादासः=गङ्गादासाभिधः । देवम्=प्रभुम् । प्रणम्य = नत्वा । अदः = एतत् । छन्दः = छन्दःशास्त्रम् । तनोति=विवेचयति ॥

हिन्दी—वैद्य गोपालदास के पुत्र, सन्तोषा देवी के आत्मज गङ्गादास प्रभु को प्रणाम कर इस छन्दःशास्त्र की विवेचना कर रहे हैं ॥ २ ॥

सन्ति यद्यपि भूयांसश्छन्दोंग्रन्था मनीषिणाम् ।
तथापि सारमाकृष्य नवकार्थो ममोद्यमः ॥ २ ॥

अन्वयः— यद्यपि मनीषिणां भूयांसः छन्दोग्रन्थाः सन्ति, तथापि सारम् आकृष्य नवकार्थः मम उद्यमः, अस्तीति ।

व्याख्या—सन्तीति। यद्यपि मनीषिणाम् = पूर्वविदुषाम्। भूयांसः = बहवः। छन्दोग्रन्थाः = वृत्तग्रन्थाः। सन्ति = वर्तन्ते। तथापि सारम् = छन्दःशास्त्रस्य तत्त्वम्। आकृष्य = निष्काष्य। नवकार्थः = नूतनार्थविषयकः। मम = गङ्गादासस्य। उद्यमः = एतत्प्रयासः। अस्तीति॥

हिन्दी—यद्यपि पूर्व विद्वानों द्वारा रचित अनेक छन्दःशास्त्रविषयक ग्रन्थ हैं, तथापि इस शास्त्र के तत्त्व (सारभूत) को निकाल कर नूतनार्थक मेरा यह प्रयत्न है॥ २॥

इयमच्युतलीलाढ्या सद्वृत्ता जातिशालिनी।
छन्दसां मञ्जरी कान्ता सभ्यकण्ठे लगिष्यति॥ ३॥

अन्वयः— इयम् अच्युतलीलाढ्या सद्वृत्ता जातिशालिनी कान्ता छन्दसां मञ्जरी सभ्यकण्ठे लगिष्यति।

व्याख्या—इयमिति। इयम्=एषा। अच्युतलीलाढ्या—अच्युतस्य=श्रीकृष्णस्य, लीला=क्रीडाः, ताभ्यः आढ्या=सम्पन्ना। सद्वृत्ता=उत्तमछन्दोयुक्ता। जातिशालिनी=विविधवृत्तसमोपेता। कान्ता=मनोरमा। छन्दसाम्= वृत्तानाम्। मञ्जरी=एषा छन्दोमञ्जरी। सभ्यकण्ठे—सभ्यानां=शिष्टजनानां विदुषां कण्ठे=गलदेशे। लगिष्यति=संगताभविष्यति, अर्थात् सद्विद्वांसः अस्याः समादरं करिष्यन्ति॥

हिन्दी--यह श्रीकृष्ण जी की क्रीडाओं से परिपूर्ण उत्तम छन्दों वाली, विविधवृत्तों से संपन्न मनोरम छन्दों की मञ्जरी (छन्दोमञ्जरी) सभ्य विद्वानों का कण्ठहार बन जायेगी अर्थात् सभ्य विद्वान् इसका समादर करेंगे॥

वृत्तपरिचयः

पद्यं चतुष्पदी, तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षरसङ्ख्यात जातिर्मात्राकृता भवेत्॥ ४॥

अन्वयः—पद्यं चतुष्पदी तत् च वृत्तं जातिः द्विधा (भवति) अक्षर-संख्यातं वृत्तं मात्राकृता जातिः भवेत्।

व्याख्या—पद्यमिति। पद्यम्=श्लोकम्। चतुष्पदी—चत्वारि पदानि सन्ति यस्मिन् तत् चतुष्पदयुक्तम् भवतीति। तत्=एतत् पद्यं च। वृत्तम् = वृत्तनामकम्। जातिः=जातिनामकं च। द्विधा=द्विविधम्। भवति। अक्षरसंख्यातम्= वर्णविगणितम्। वृत्तम्=वृत्ताख्यपद्यम्। मात्राकृता=गुरुलघुमात्रागणिता। जातिः=जातिनामकं पद्यम्। भवेत्=स्यात्॥

हिन्दी—श्लोक अथवा छन्द का चौथाई भाग पद या चरण कहलाता है। चार पदों अथवा चरणों वाला पद्य होता है। वह पद्य वृत्त तथा जाति दो प्रकार का होता है। जिसमें अक्षरों या वर्णों की गणना की जाती है उसे वर्ण-वृत्त या वार्णिक तथा जिसमें मात्राओं की गणना की जाती है उसे जाति (मात्रिक) छन्द कहा जाता है॥ ४॥

वृत्तभेदाः

सममर्धसमं वृत्तं विषमञ्चेति तत् त्रिधा।
समं समचतुष्पादं भवत्यर्धसमं पुनः॥ ५॥
आदिस्तृतीयवद् यस्य पादस्तुर्यो द्वितीयवत्।
भिन्नचिह्नचतुष्पादं विषमं परकीर्तितम्॥ ६॥

अन्वयः— तद् समं अर्द्धसमं विषमं च इति वृत्तं त्रिधा भवति, समचतुष्पादं समं, पुनः यस्य आदिः तृतीयवद् तुर्यः द्वितीयवत् तद् अर्धसमम्, भिन्नचिह्नचतुष्पादं विषमं परिकीर्तितम्।

व्याख्या--सममिति। तद्=वृत्तम्। समं=चतुष्पदेषु समानवर्णयुक्तम्। अर्द्धसमम्=प्रथमतृतीयचरणसमानम्, द्वितीयचतुर्थचरणसमानवर्णयुक्तम् वृत्तम्। विषमं=विभिन्नलक्षणचरणचतुष्टयम्। च। इति=एवम्। वृत्तं। त्रिधा= त्रिविधम् भवति। समचतुष्पादं समम्। यस्य=वृत्तस्य। आदिः=प्रथमश्चरणः। तृतीयचरणवत् = तृतीयपादसमम्। तुर्यः = चतुर्थश्चरणः। द्वितीयचरणवत्, तद् अर्द्धसमम्। भिन्नचिह्नचतुष्पादम् = विभिन्नचरणचतुष्टयम्। विषमम्= विषमाख्यं वृत्तम्। परिकीर्तितम्=कथितम्॥

हिन्दी—वृत्त तीन प्रकार का होता है—समवृत्त, अर्द्धसमवृत्त, विषमवृत्त। चार समान पदों वाला वृत्त समवृत्त होता है अर्थात् जिसके चारों चरण समान हों वह समवृत्त तथा जिसके प्रथम से तृतीय और द्वितीय से चतुर्थ चरण समान हो उसे अर्द्धसमवृत्त तथा जिसका कोई भी चरण समान न हो वह विषम वृत्त कहलाता है॥ ५-६॥

गणप्रतीकाः

म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तैरेभिर्दशभिरक्षरैः ।
समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥ ७ ॥

अन्वयः—एभिः म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तैः दशभिः अक्षरैः समस्तवाङ्मयं विष्णुना त्रैलोक्यं इव व्याप्तम्, अस्तीति ।

व्याख्या—म्यरस्तेति । एभिः=एतैः । म्यरस्तजभ्नगैर्लान्तैः=मश्च यश्च रश्च सश्च तश्च जश्च भश्च नश्च गुरुश्च लघुश्च । दशभिः=दशसंख्यकैः । अक्षरैः=वर्णैः । समस्तवाङ्मयम्—समस्तम्=सम्पूर्णम् वाङ्मयम्=साहित्यम् छन्दःशास्त्रं वा । विष्णुना=ईश्वरेण । त्रैलोक्यम्=त्रिभुवनम् । इव=यथा व्याप्तम्=युक्तम् । तथैव सम्पूर्णं छन्दःशास्त्रम् । व्याप्तम् अस्तीति । एभिः दशवर्णैरेव समस्तच्छंदांसि लक्षयिष्यन्ते ।

निम्नाङ्कित संकेतों के द्वारा ग्रन्थकार ने छन्दों का लक्षण किया है—

हिन्दी—म, य, र, स, त, ज, भ, न, ग, ल, इन दश वर्णों से समस्त छन्दःशास्त्र उसी प्रकार व्याप्त है जैसे भगवान् विष्णु के द्वारा तीनों लोक व्याप्त हैं ॥ ७ ॥

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः ।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ॥८॥

अन्वयः—त्रिगुरुः मः, च त्रिलघुः नकारः, आदिगुरुः भः, पुनः आदिलघुः यः, गुरुमध्यगतः जः, लमध्यः रः, अन्तगुरुः सः, अन्तलघुः तः कथितः ॥

व्याख्या—मस्त्रीति । त्रिगुरुः=त्रयः गुरुवर्णाः यत्र सः मगणः, तथा त्रिलघुः=यत्र त्रयः लघुवर्णाः भवन्ति सः नगणः । आदिगुरुः=यत्र प्रथमः वर्णः गुरुः शेषौ द्वौ वर्णौ लघू भवतः सः भगणः । पुनः=भूयः । आदिलघुः=यत्र प्रथमः वर्णः लघुः=ह्रस्वः तथा शेषौ द्वौ गुरुवर्णौ भवतः सः यगणः भवति । गुरुमध्यगतः= यत्र प्रथमस्तृतीयो वर्णश्च लघुः मध्ये च गुरुः सः जगणः । लघुमध्यः=यत्र प्रथमस्तृतीयो वर्णश्च गुरुः, मध्ये च लघुः सः रगणः । अन्तगुरुः=अन्ते गुरुः=गुरुवर्णः, शेषौ च लघुवर्णौ सः सगणः । अन्तलघुः=अन्ते लघुः यस्य सः तगणः भवतीति ।

हिन्दी—तीनों गुरु-वर्ण होने पर मगण, तीनों लघु-वर्ण होने पर नगण, प्रथम वर्ण गुरु तथा शेष दोनों लघु होने पर भगण तथा प्रथम वर्ण लघु एवम् शेष दोनों गुरु होने पर यगण होता है । बीच का अर्थात् द्वितीय गुरु होने पर जगण, बीच का लघु होने पर रगण, अन्त में गुरु वर्ण होने पर सगण तथा अन्त में लघु वर्ण होने पर तगण होता है ॥ ८ ॥

गुरुलघुप्रतीकः

गुरुरेको गकारस्तु लकारो लघुरेककः ।
क्रमेण चैषां रेखाभिः संस्थानं दर्श्यते यथा ॥ ९ ॥

अन्वयः—एकः गुरुः गकारः, एककः लघुः तु लकारः । एषां रेखाभिः यथा क्रमेण संस्थानं दर्श्यते ॥

व्याख्या—गुरुरिति । एकः गुरुः=एकवर्णो गुरुः । गकारः='ग' इति कथ्यते । एककः=एकलः । लघुः=लघुवर्णः । लकारः='ल' इत्युच्यते । एषां=मकारादिगणानाम् । रेखाभिः=चिह्नविशेषैः । यथाक्रमेण=क्रमानुसारम् । संस्थानम्=आकृतिः दर्श्यते=ज्ञायते यथा गुरुवर्णस्य 'ऽ' तथा लघुवर्णस्य '।' आकृतिरिति ॥

हिन्दी—'**ग**' कहने से एक गुरुवर्ण तथा '**ल**' से लघुवर्ण समझना चाहिए । इन मगण आदि चिह्न-विशेषों के साथ क्रमशः 'ऽ' तथा '।' गुरु लघु आकृति दिखलाई जाती है ॥ ९ ॥

जातिगणनिर्देशः

ज्ञेयाः सर्वान्तमध्यादिगुरवोऽत्र चतुष्कलाः ।
गणाश्चतुर्लघूपेताः पञ्चार्यादिषु संस्थिताः ॥ १० ॥

अन्वयः—अत्र चतुर्लघूपेताः सर्वान्तमध्यादिगुरवः चतुष्कलाः पञ्च गणाः आर्यादिषु संस्थिताः ॥

व्याख्या ज्ञेया इति । अत्र चतुर्लघूपेताः=चतुःसंख्यकाः लघुवर्णयुक्ताः । सर्वान्तमध्यादिगुरवः=सर्वगुरुः, अन्तगुरुः, मध्यगुरुः, आदिगुरुः, सर्वलघुश्चेति चतुकलाः=चतुर्मात्रायुक्ताः, पञ्चगणाः=पञ्चसंख्यकाः गणाः, आर्यादिषु= चतुर्मात्रारूपाः गणाः आर्यादिवृत्तेषु । संस्थिताः=ज्ञातव्याः ॥

हिन्दी—यहाँ (जाति गणों में) चार संख्या वाले लघुवर्णयुक्त—सर्वगुरु, मध्यगुरु, अन्तगुरु, आदिगुरु तथा सर्वलघु अर्थात् चारमात्रायुक्त पाँच गणों से आर्या आदि छन्द समझने चाहिए ॥ १० ॥

गुरुलघुविचारः

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत् ।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा ॥ ११ ॥

अन्वयः—सानुस्वारः गुरुः भवेत्, दीर्घः विसर्गी च (गुरुः भवेत्)। संयोगपूर्वः वर्णः तथा वा पादान्तगः अपि वर्णः वा गुरुः भवेत् ॥

व्याख्या—सानुस्वार इति। सानुस्वारः=अनुस्वारयुक्तः वर्णः । गुरुः= गुरुवर्णः भवेत् । दीर्घः=आ–ई–ऊ–ॠ–ए–ऐ–ओ–औ इति । विसर्गी=विसर्ग-युक्तो वर्णः च गुरुः भवेत् । संयोगपूर्वः=संयुक्ताक्षरपूर्ववर्णः । तथा वा=विकल्पेन । पादान्तगः=चरणान्तिमः अपि वर्णः गुरुः भवेत् ॥

हिन्दी—अनुस्वारयुक्त ह्रस्व (अ–इ–उ) वर्ण भी गुरु हो जाता है। दीर्घ (आ–ई इत्यादि) तथा विसर्ग युक्त वर्ण और संयुक्त वर्ण से पूर्व वाला लघु भी गुरु हो जाता है। एवम् पाद (चरण) के अन्त में लघु वर्ण विकल्प से गुरु होता है ॥

अत्र पादान्तगो लघुर्गुरुर्भवेद्वा यथा—

तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि ।
अल्पव्ययेन सुन्दरि ! ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति ॥

सुन्दरीति ग्राम्यशब्दे परे विकल्पेन लघुत्वम् ।

अन्वयः—सुन्दरि ! ग्राम्यजनः तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि दधीनि च मिष्टम् अल्पव्ययेन अश्नाति ।

व्याख्या—अत्र पादान्तस्य लघोर्विकल्पेन गुरुत्वम्, गुरोश्च लघुत्व मुदाहरति—तरुणमिति। सुन्दरि=हे सुवदने ! ग्राम्यजनः = ग्रामीणो नरः । तरुणं=नवीनम् । सर्षपशाकं = सिद्धार्थकशाकम् । नवौदनं = नूतनमोदनम् । पिच्छिलानि = स्निग्धानि । दधीनि=दधिपदार्थञ्च । मिष्टं=मधुरं यथा स्यात् तथा अल्पव्ययेन=स्तोकव्ययेन । अश्नाति=भुनक्ति ।

अत्रद्वितीय-चतुर्थपादयोरन्तिमवर्णयोर्गुरुत्वम् । तृतीय-पादस्यान्तिमस्येका-रस्य "ग्राम्येति" संयुक्तात्पूर्वत्वेऽपि न गुरुत्वम् ।

हिन्दी—यहाँ 'अश्नाति' पद के अन्त में लघु के स्थान पर विकल्प से गुरु तथा 'सुन्दरि' इस ग्राम्य शब्द में विकल्प से लघु हो जाता है। उदाहरण—

हे सुन्दरि ! ग्रामीण व्यक्ति नये सरसों के साग (कड़री) और नया भात तथा चिकनी दही, इनको थोड़ा-सा ही खर्च करके मीठा खाते हैं।

यह आर्या छन्द है जिसमें द्वितीय तथा चतुर्थ पाद के अन्तिम लघु वर्ण गुरु हो जाते हैं तथा तृतीय पाद का अन्तिम इकार संयुक्त के पूर्व होने पर भी पादान्तत्वात् विकल्प से लघु ही रहता है।

तथा भट्टिः—

अथ लुलितपतत्रिमालं रुग्णासनबाणकेशरतमालम् ।
स वनं विविक्तमालं सीतां द्रष्टुं जगामालम् ॥

अत्र प्रथमपादान्तगुरोर्लघुत्वम्

अन्वयः—अथ स अलं सीतां द्रष्टुं, रुग्णासनबाणकेशरतमालं लुलित-पतत्रिमालं विविक्तं वनं अलं जगाम ।

व्याख्या— अत्र पादान्तस्य गुरोर्विकल्पेन लघुत्वमुदाहरति-अथेति । अथ= नगरदाहानन्तरं, स = हनुमान्, अलं = पर्याप्तं, यथास्यात्तथा, सीतां = जानकीं द्रष्टुं = अवलोकयितुं, रुग्णासनबाणकेशरतमालं = असनश्च केशरश्च तमाल-श्चेति असनबाणकेशरतमालाः यत्र तत् तादृशं, तस्माच्च, लुलितपतत्रिमालं— लुलिता=चलिता पतत्रिणां=पक्षिणां, माला=पङ्क्तिर्यत्र तत् तादृशं, विविक्तं, वनं = अशोकाख्यं वनं, अलं = स्वच्छन्दं यथास्यात्तथा, जगाम = गतवानित्यर्थः ।

पद्येऽस्मिन् प्रथमपादान्तिमवर्णस्य 'लं' इत्यस्य सानुस्वारतया गुरुत्वेऽपि पादान्तत्वाद् विकल्पेन लघुत्वम् । अन्यथाऽत्र प्रथमपादे त्रयोदशमात्रा भवेयुरि-त्यार्याछन्दोलक्षणासङ्गतिः स्यादिति भावः ।

हिन्दी—हनुमान् जी लङ्कादहनानन्तर माता जानकी को भली प्रकार देखने के लिए, जिस बन के असन-बाण-केशर-तमाल आदि सभी वृक्ष नष्ट हो गये थे तथा (इससे जिस बन में पंक्तिबद्ध पक्षियों के समूह (आकाश में) विचरण कर रहे थे—ऐसे अशोक नामक बन में स्वच्छन्दतापूर्वक गये । (जहाँ सीता जी थीं) ।

यहाँ पर भी आर्या छन्द है। इसमें प्रथम पाद के अन्तवाला 'लं" वर्ण अनुस्वार सहित होने के कारण गुरु होना चाहिये था, किन्तु पादान्त होने के कारण विकल्प से लघु हो गया, अन्यथा प्रथम पाद में तेरह मात्राएँ हो जातीं, जिससे आर्या छन्द का लक्षण असंगत होने से छन्दोभंग दोष होता ।

तथा मत्पितुः पारिजातहरणनाटके—

सिन्दूरपूरकृतगैरिकरागशोभे शश्वन्मदस्रवणनिर्झरवारिपूरे ।
सङ्ग्रामभूमिगतमत्तसुरेभकुम्भकूटे मदीयनखराशनयो विशन्तु ॥
अत्र तृतीय-चतुर्थ-पादान्तलघ्वोर्गुरुत्वम् ।

अन्वयः- मदीयनखराशनयः सिन्दूरपूरकृतगैरिकरागशोभे शश्वन्मदस्रवणनिर्झरवारिपूरे विशन्तु । संग्रामभूमिगतमत्तसुरेभकुम्भकूटे विशन्तु ।

व्याख्या—सिन्दूर इति । मदीयनखराशनयः—मदीयाः = मत्सम्बन्धिनः नखाः=करजाः एव अशनयः=वज्राणि, ते । सिन्दूरपूरकृतगैरिकरागशोभे—सिन्दूरपूरेण=सिन्दूरराशिना कृता गैरिकरागस्य-गैरिकसदृशरक्तवर्णस्य शोभा=सुषमा यस्य तस्मिन् । शश्वन्मदस्रवणनिर्झरवारिपूरे—शश्वत् = निरन्तरं यन्मदस्रवणं=मदजलप्रवहणं तदेव निर्झरवारिपूरः = प्रस्रवणजलसमूहः, तस्मिन् । संग्रामभूमिगतमत्तसुरेभकुम्भकूटे—संग्रामभूमौ गतः=रणस्थलगतः यः मत्तः सुरेभः=मदयुक्तदेवगजः, तस्य कुम्भ एव कूटं=शिखरं, तस्मिन् । विशन्तु = प्रविशन्तु ।

अत्र तृतीय-चतुर्थपादान्तयोः 'म्भ' 'न्तु' वर्णयोः लघ्वोरपि गुरुत्वम् ।

(इन्द्र के प्रति क्रुद्ध गरुड का कथन)

हिन्दी—यथा मेरे (गंगादास के) पिता (गोपालदास) द्वारा रचित पारिजातहरण नाटक में—

मेरे नखरूपी वज्र-सेंदुर-समूह से बने लोहितवर्ण शोभा वाले जिससे निरन्तर मदजल का झरना झरता रहता है, युद्ध भूमि में पहुँचे मत्त देवगज ऐरावत के कुम्भरूपी शिखर में प्रवेश करें ।

यहाँ पर तृतीय तथा चतुर्थ चरणों में 'म्भ, न्तु' वर्णों में लघु के स्थान पर भी गुरु हो जाता है ।

तथा ममाच्युतचरितेऽपि—

रक्तेन केशिदशनक्षतसम्भवेन रेजे स मण्डिततरो हरिबाहुदण्डः ।
तद्दन्तसन्दलितभीमभुजप्रतापवह्नेरिव स्फुटकणप्रकरेण कीर्णः ॥
अत्र प्रथमतृतीयपादान्तस्यापि लघोर्गुरुत्वम् ।

अन्वयः- सः हरिबाहुदण्डः केशिदशनक्षतसम्भवेन रक्तेन मण्डिततरः तद्दन्तसन्दलितभीमभुजप्रतापवह्नेः इव स्फुटकणप्रकरेण कीर्णः रेजे ।

व्याख्या—रक्तेनेति । सः = असौ । हरिबाहुदण्डः—हरेः = विष्णोः बाहुदण्डः = भुजदण्डः । केशिदशनक्षतसम्भवेन—केशिनामराक्षसस्य दशनैः = दन्तैः क्षतसम्भवेन = व्रणजेन । रक्तेन=रुधिरेण । मण्डिततरः= अतिशयेन शोभितः । तद्दन्तसन्दलितभीमभुजप्रतापवह्नेः-तस्य=केशिराक्षसस्य दन्तैः=रदनैः सन्दलितः =कर्तितः यः भीमः= भयानकः भुजः=बाहुः तस्य प्रतापः = तेजः एव वह्निः= अग्निस्तस्य इव=यथा । स्फुटकणप्रकरेण—स्फुटः=प्रदीप्तः यः कणप्रकरः= कणसमूहस्तेन । कीर्णः = व्याप्तः । रेजे = शुशुभे ।

अत्र प्रथम-तृतीयपादान्तस्य नकारस्य पकारस्य च गुरुत्वं ज्ञेयम् ।

हिन्दी—उसी प्रकार मेरे 'अच्युतचरित' ग्रन्थ में भी—

वह भगवान् विष्णु का भुजदण्ड केशी राक्षस के दाँतों के घावों से उत्पन्न रुधिर से अतिशोभित, केशी राक्षस के दाँतों से काटे हुए भयङ्कर भुजप्रतापानल के समान दीप्यमान कण-समूह से शोभित हुआ ।

यहाँ पर तृतीय तथा चतुर्थचरण के अन्त में 'नकार' तथा 'पकार' लघु होकर भी गुरु हैं ।

'प्रह्ले' इति पुनः पिङ्गलमुनेर्विकल्पविधायकं सूत्रम् । उदाहरणं यथा कुमारसम्भवे—

सा मङ्गलस्नानविशुद्धगात्री गृहीतप्रत्युद्गमनीयवस्त्रा ।
निर्वृत्तपर्जन्यजलाभिषेका प्रफुल्लकाशा वसुधेव रेजे ॥
अत्र 'प्र'शब्दे परे गुरोर्लघुत्वम् ।

अन्वयः- मंगलस्नानविशुद्धगात्री गृहीतप्रत्युद्गमनीयवस्त्रा सा निर्वृत्तपर्जन्यजलाभिषेका प्रफुल्लकाशा वसुधा इव रेजे ।

व्याख्या-सेति । मङ्गलस्नानविशुद्धगात्री—मंगलस्नानेन=शुभाभिषेकेन विशुद्धं=स्वच्छं गात्रं=शरीरं यस्याः सा । गृहीतप्रत्युद्गमनीयवस्त्रा—गृहीतं = धृतं प्रत्युद्गमनीयवस्त्रं=पूतश्वेतवासः यया सा=पार्वती । निर्वृत्तपर्जन्यजलाभिषेका—निर्वृत्तः=कृतः पर्जन्यस्य = मेघस्य जलाभिषेकः=वारिस्नानं यया सा । प्रफुल्लकाशा—प्रफुल्लाः=विकसिताः काशाः=काशकुसुमानि यस्याः तथाविधा । वसुधा=भूमिः इव=यथा । रेजे=शुशुभे ।

अत्र 'प्र' इति संयुक्तात्पूर्ववर्तिनस्तकारस्य न गुरुत्वम् ।

हिन्दी--'प्र' तथा 'ह्र' रहने पर पूर्व वर्ण लघु विकल्प से गुरु होता है। यह पिङ्गलमुनि का गुरु-विकल्पविधायक सूत्र है। उदाहरण यथा कुमारसम्भवमें मंगल-स्नान से विशुद्ध शरीरवाली, पवित्रश्वेतवस्त्रधारण किये पार्वती मेघजल से स्नात विकसित काशकुसुमों वाली पृथ्वी के समान शोभित हुई।

यहाँ 'प्र' संयुक्त वर्ण से पूर्व 'गृहीत' का 'तकार' गुरु न होकर लघु ही है।

यथा माघे—

प्राप्य नाभिह्रदमज्जनमाशु प्रस्थितं निवसनग्रहणाय।
औपनीविकमरुन्ध किल स्त्री वल्लभस्य करमात्मकराभ्याम्॥

अत्र 'ह्र' शब्दे परे गुरोर्लघुत्वम्।

अन्वयः---स्त्री आत्मकराभ्यां नाभिह्रदमज्जनम् प्राप्य आशु निवसनग्रहणाय प्रस्थितम् औपनीविकं वल्लभस्य करम् अरुन्ध।

व्याख्या-प्राप्येति। स्त्री=काचिन्नारी। आत्मकराभ्यां—आत्मनः=स्वस्य कराभ्यां = हस्ताभ्याम्। नाभिह्रदमज्जनं—नाभिरेव ह्रदस्तस्मिन् मज्जनम्= निमज्जनम्। प्राप्य=अधिगत्य। आशु=शीघ्रम्। निवसनग्रहणाय=वस्त्रग्रहणाय। प्रस्थितम्=प्रवृत्तम्। औपनीविकं=नीवीसमीपमागतम्। वल्लभस्य=प्रियतमस्य। करम्=हस्तम्। अरुन्ध = रुद्धवती।

अत्र नाभेरिकारस्य 'ह्र'शब्दात्पूर्वस्य पूर्वनियमेन न गुरुत्वम्।

हिन्दी—कोई स्त्री अपने हाथों से नाभिरूपी कुण्ड में स्नान कर शीघ्र वस्त्र लेने के लिए प्रस्थित नीवी के पास पहुँचे प्रियतम के हाथ को रोकने लगी।

यहाँ पर 'नाभि' की 'इकार' के बाद 'ह्र'वर्ण होने से वह, पूर्वनियमानुसार लघु ही रहा, गुरु नहीं हुआ?

तीव्रप्रयत्नोच्चारणेनात्र लघुत्वमिति कण्ठाभरणः। संयुक्तात्पूर्वो गुरुरिति न सार्वत्रिको नियमः। यदुक्तम्—

यदा तीव्रप्रयत्नेन संयोगादेरगौरवम्।
न च्छन्दोभंग इत्याहुस्तदा दोषाय सूरयः॥

अन्वयः—तीव्रप्रयत्नेन संयोगादेः अगौरवं तदा छन्दोभंगः न दोषाय इति सूरयः वदन्ति।

व्याख्या—यदेति। तीव्रप्रयत्नेन=तीव्रप्रयासेन। संयोगादेः=संयुक्तक्षरात्पूर्ववर्णस्य। अगौरवम्=गुरुत्वं न, अपितु लघुत्वमेव भवति। तदा छन्दोभङ्गः न=वृत्तभङ्गो नास्ति। दोषाय=दोषनिमित्तम्। इति=एवम्। सूरयः=कवयः। वदन्ति=कथयन्ति।

तीव्रोच्चारणेन गुरुरपि लघुर्भवतीति कण्ठाभरणाचार्यमतम्। संयुक्ताक्षरात्पूर्वो गुरुरिति नियमो न सार्वत्रिकोऽस्ति।

तीव्र उच्चारण से गुरु भी लघु हो जाता है, ऐसा सरस्वती कण्ठाभरणकार का मत है। संयुक्ताक्षर से पूर्व गुरु होने का सर्वत्र नियम नहीं है। यथा—

हिन्दी—जब तीव्र उच्चारण से संयुक्ताक्षर से पूर्व का वर्ण लघु ही रहता है, तब इस प्रकार छन्दोभङ्ग का दोष नहीं होता है, ऐसा कविजन कहते हैं

यतिविचारः

यतिजिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया॥ १२॥

अन्वयः—जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिः यतिः उच्यते। सा निजेच्छया विच्छेदविरामाद्यैः पदैः वाच्या॥

व्याख्या—यतीति। जिह्वेष्टविश्रामस्थानम्—जिह्वायाः इष्टमभीष्टं विश्रामस्थानं=स्थितिस्थानम्। कविभिः=सूरिभिः। यतिः इति उच्यते= कथ्यते। सा यति.। निजेच्छया=उच्चारयितुरिच्छया। विच्छेदविरामाद्यैः= विस्च्छेद-विराम-प्रभृतिभिः। पदैः=शब्दैः। वाच्या=कथनीया॥

हिन्दी—जहाँ-जहाँ जीभ स्वेच्छा से रुकती है उस स्थान को विद्वान् 'यति' कहते हैं। इस यति के विच्छेद, विराम आदि अन्य नाम भी हैं॥१२॥

क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्वकृतिभिः
पदान्ते सः शोभां व्रजति पदमध्ये त्यजति च।
पुनस्तत्रैवासौ स्वरविहितसन्धि श्रयति तां
यथा कृष्णः पुष्णात्वतुलमहिमा मां करुणया॥ १३॥

अयं च श्लोकश्छन्दोगोविन्दे मम गुरोः।

अन्वयः—पूर्वकृतिभिः अभिहिता यतिः क्वचित् छन्दसि आस्ते। सा पदान्ते शोभां व्रजति। सैव पदमध्ये (शोभां) त्यजति च। पुनः तत्र एव असौ स्वरविहितसन्धिः तां श्रयति यथा अतुलमहिमः कृष्णः करुणया मां पुष्णातु।

व्याख्या--काचिदिति। पूर्वकृतिभिः=पूर्वविद्वद्भिः। अभिहिता=कथिता यतिः। क्वचित्=क्वापि। छन्दसि=छन्दोविषये। आस्ते=वर्तते, नतु सर्वत्र वर्तत इत्याशयः, परं या यतिः पादान्ते=पदसमाप्तौ स्थिता सती। शोभाम्=मनोरमताम्। व्रजति=याति सा एव। पदमध्ये = पदस्य मध्यभागे। शोभां त्यजति=मुञ्चति च। पुनः=भूयः। तत्र एव असौ=सा यतिः। स्वरविहितसन्धिः—स्वरेण=स्वरवर्णेन विहिता=कृता सन्धिर्यत्र तथाविधा यतिः शोभां श्रयति=समासादयति। यथा—अतुलमहिमा अतुलः=अनुपमः महिमा=महत्त्वं यस्य सः। कृष्णः=माधवः। करुणया=दयया। मां पुष्णातु=मामवतु॥

अत्र तृतीयपादे "पुष्णातु" इत्यत्र "त्व" स्वरसन्धेः शोभाधायकत्वम्।

हिन्दी--पूर्व विद्वानों द्वारा उक्त यति सर्वत्र नहीं होती, कहीं-कहीं ही छन्द में होती है। जो यति पदान्त में शोभा धारण करती है, वही पद के मध्य में शोभा को नष्ट कर देती है। पुनः वहीं (पदमध्य ही) वह (यति) स्वर सन्धि से युक्त होने पर मनोरमता धारण करती है। यथा—अतुल महिमा वाले कृष्ण जी कृपा कर मेरी रक्षा करें।

यह श्लोक छन्दगोविन्द में मेरे गुरु (पुरुषोत्तमदास) का है। यहाँ पर 'त्व' में यति पर स्वर-सन्धि है, जो शोभाधायक है।

कविकल्पलतायाम्—

एवं यथा यथोद्वेगः सुधियां नोपजायते।
तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते॥

अन्वयः--एवम् यथा यथा सुधियाम् उद्वेगः न उपजायते तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिः इष्यते।

व्याख्या- एवमिति। एवम्=इत्थम्। यथा यथा=येन येन प्रकारेण। सुधियाम्=सुमतीनाम्। उद्वेगः=वेगत्वम्। न उपजायेत=उत्पद्येत। तथा तथा=तेनैव प्रकारेण। मधुरतानिमित्तं=माधुर्यार्थम् यतिः इष्यते=कथ्यते। यस्मिन् यतिनिर्देशे सुश्रवता भवेत्सा यतिरादरणीया इत्यर्थः।

कविकल्पलता में--

हिन्दी—इस प्रकार जैसे-जैसे विद्वानों को उद्वेग उत्पन्न न हो सके, उसी प्रकार मधुरताहेतु यति बतलाई जाती है। अर्थात् जिस यति निर्देश में सुश्रवता हो वही यति आदरणीय है।

श्वेतमाण्डव्यमुख्यास्तु नेच्छन्ति मुनयो यतिम्।
इत्याह भट्टः स्वग्रन्थे गुरुर्मे पुरुषोत्तमः॥ १४॥

अन्वयः--श्वेतमाण्डव्यमुख्याः मुनयः यतिं न इच्छन्ति इति मे गुरुः पुरुषोत्तमः भट्टः स्वग्रन्थे आह॥

व्याख्या—श्वेतेति। श्वेतमाण्डव्यमुख्याः=श्वेतमाण्डव्यप्रभृतयः सुधियः। मुनयः=विद्वांसः। यतिम् न इच्छन्ति=न स्वीकुर्वन्ति। इति=एवम्। मे=मम गंगादासस्य। गुरुः=आचार्यः। पुरुषोत्तमभट्टः=पुरुषोत्तमभट्टाख्यः। स्वग्रन्थे=निजकृतौ। आह=उक्तवान्॥

हिन्दी—श्वेतमाण्डव्य आदि विद्वान् यति को अङ्गीकार नहीं करते हैं ऐसा मेरे गुरु पुरुषोत्तमभट्ट ने अपने ग्रन्थ में कहा है॥ १४॥

काव्यादर्शे—

श्लोकेषु नियतस्थाने पदच्छेदं यतिं विदुः।
तदपेतं यतिभ्रष्टं श्रवणोद्वेजनं यथा॥

अन्वयः--श्लोकेषु नियतस्थानं पदच्छेदं यतिं विदुः, यथा तदपेतं यतिभ्रष्टं श्रवणोद्वेजनम्।

व्याख्या—श्लोकेष्विति। श्लोकेषु वृत्तेषु। नियतस्थानं=निश्चितस्थलम्। पदच्छेदं यतिः इति विदुः=अजानन्त। यथा—येन प्रकारेण, तदपेतं=यतिहीनम्, यतिभ्रष्टं-यतिरहितं वा। श्रवणोद्वेजनम्=कर्णेभ्यः उत्तेजनात्मकं भवति। अतः यतिः नियतस्थान एव कार्या, अन्यथा दुःश्रवता सम्पद्येत।

काव्यादर्श में--

हिन्दी—श्लोकों में नियत स्थान पर पदच्छेद यति कहलाता है, उससे भिन्न यतिभ्रष्ट होना कानों को खटकता है। अतः नियतस्थान पर ही यति करनी चाहिए, अन्यथा वह कर्णकटु बन जाती है।

अत एव मुरारिः--

सन्तुष्टे तिसृणां पुरामपि रिपौ कण्डूलदोर्मण्डली-
लीलालूनपुनःप्ररूढशिरसो वीरस्य लिप्सोर्वरम्।
याच्ञादैन्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्वं वृणु
त्वं वृण्वित्यभितो मुखानि, स दशग्रीवः कथं कथ्यताम्॥

जनकं प्रति रावणपुरोहितस्य उक्तिरियम्।

अन्वयः--तिसृणां पुराम् अपि रिपौ सन्तुष्टे कण्डूलदोर्मण्डलीलीलालून-पुनःप्ररूढशिरसः वरं लिप्सोः वीरस्य यस्य मुखानि याञ्चादैन्यपराञ्चि अभितः त्वं वृणु, इति कलहायन्ते सः दशग्रीवः कथं कथ्यताम्।

व्याख्या-सन्तुष्टेरिति। तिसृणां पुराम्=त्रिभुवनानाम्। अपि रिपौ=शत्रौ शिवे। सन्तुष्टे=प्रसन्ने सति। कण्डूलदोर्मण्डलीलीलालूनपुनःप्ररूढशिरसः-कण्डूलया=कण्डूयनयुक्तया दोर्मण्डल्या=भुजसंहत्या लीलया=क्रीडया लूनानि=कर्तितानि पुनः प्ररूढानि=भूयः सञ्जातानि शिरांसि=उत्तमांगानि यस्य तथा-विधस्य। वरं=वांछितम्। लिप्सोः=प्राप्तुकामस्य। वीरस्य=बलशालिनः। यस्य मुखानि=आननानि। याञ्चादैन्यपराञ्चि=प्रार्थनोत्पन्नदैन्येनावनतानि सन्ति, अभितः=उभयतः। त्वं वृणु = वरं ब्रूहि। इति = एवम्। कलहायन्ते = कलहं कुर्वन्ति। एवम् सः=असौ दशग्रीवः-दश=दशसंख्यकाः ग्रीवाः = कण्ठाः सन्ति यस्य सः - रावणः। कथं = केन प्रकारेण। कथ्यताम्=वर्ण्यताम्।

द्वादशाक्षरावसाने यतिर्नियमः। अत्र सा तृतीयपादे 'कलहायन्त' इति 'हा'वर्णान्ते न संलक्ष्यते।

जनक के प्रति रावण के पुरोहित की उक्ति--

हिन्दी—त्रिभुवन रिपु शिव जी के सन्तुष्ट होने पर भुजाओं द्वारा खुजलाते-खुजलाते खेल-खेल में शिर काट देने वाले और फिर उत्पन्न-शिर युक्त वरदान पाने के इच्छुक जिस वीर रावण के मुख याचना से उत्पन्न दीनता के कारण अवनत हैं (उससे) 'तुम वर माँगो' इस प्रकार विवाद करते हैं, ऐसे दशकण्ठ रावण से कैसे कहा जा सकता है।

द्वादशाक्षर की समाप्ति पर यति का नियम है। वह तृतीय पाद में 'कलहायन्त' इसमें 'हा' वर्ण के अन्त में नहीं दिखलाई पड़ती है।

जयदेवोऽपि—

साध्वी माध्वीक चिन्ता न भवति भवतः शर्करे ! कर्कशासि
द्राक्षे ! द्रक्ष्यन्ति के त्वामृत ! मृतमसि क्षीर ! नीरं रसस्ते।
माकन्द ! क्रन्द कान्ताधर ! धरणितलं गच्छ, यच्छन्ति यावद्
भावं शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग्वचांसि ॥

अन्वयः—हे माध्वीक ! इह यावत् शृंगारसारस्वतमयजयदेवस्य वचांसि विष्वक् भावं यच्छन्ति (तावत्) भवतः चिन्ता न साध्वी। शर्करे ! (त्वं) कर्कशा असि, द्राक्षे ! त्वां के द्रक्ष्यन्ति। अमृत ! मृतम् असि, क्षीर ! ते रसः नीरम्। हे माकन्द ! क्रन्द, कान्ताधर ! धरणितलं गच्छ ॥

व्याख्या-साध्वीति। हे माध्वीक=हे मधो ! इह=अस्मिन् लोके। यावत्=यावत्कालम्। शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य-शृंगाररसभारपूरितकविजय-देवस्य। वचांसि=सूक्तानि। विष्वक्=समन्तात्। भावं=प्रेम। यच्छन्ति=ददति। तावत्=तावत्कालम्। भवतः=श्रीमतः। चिन्ता=विचारः। न साध्वी=नैवोत्तमा भवति। हे शर्करे ! त्वम् कर्कशा=कठोरा असि। हे द्राक्षे ! त्वां के द्रक्ष्यन्ति=अवलोकयिष्यन्ति। हे अमृत=हे सुधारस ! त्वम् मृतम्=निर्जीवम् असि। हे क्षीर=हे वारे ! ते=तव रसः नीरम्=जलम्। हे माकन्द ! हे रसाल ! त्वं क्रन्द=रोदनं कुरु। हे कान्ताधर ! हे रमणीरमण ! त्वं धरणितलम्=पातालम्। गच्छ=याहि।

अत्र तृतीयचरणे सप्तमाक्षरेण विहिता यतिः स्वरसन्धिवशात् सुश्रवैव किन्तु चतुर्थपादे सप्तमचतुर्दशयोर्यतिदोषः एव।

हिन्दी—हे मधो ! इस संसार में जबतक शृङ्गार-सारस्वतयुक्तजयदेव की सूक्तियाँ चारों ओर प्रेमभाव वितरित नहीं कर देते, तबतक आपको चिन्ता करना ठीक नहीं है। हे शर्करे ! तुम कठोर हो। हे दाख ! तुम्हें कौन रसज्ञ चखेगा। हे अमृत ! तुम निर्जीव हो। हे क्षीर ! तुम्हारा रस जल है। हे रसाल ! तुम रुदन करो, चिल्लाओ। हे कान्ताधर ! तुम पाताल चले जाओ।

यहाँ तृतीय पाद में सप्तमाक्षर में यति स्वरसन्धि के कारण सुखद है, परन्तु चतुर्थ पाद में सप्तम तथा चतुर्दश वर्णों में यति का दोष ही है।

एवमन्येऽपि—

कत्यद्रिप्रतिरोधिताः कति नदीपाथोनिधिप्लाविताः
कत्येवाटविताः गताः कति न वा भूदेवदेवैर्वृताः।
भूम्यो भूमिपतीन्द्र ! तावकयशःप्रस्तावनामण्डली
कोष्ठीकृत्य जगद्धनं कतिवराटीभिर्मुदं यास्यति ॥

अन्वयः—हे भूमिपतीन्द्र ! कति भूम्यः अद्रिप्रतिरोधिताः, नदीपाथोनि-

धिप्लाविताः कति एव च अटवितां गताः, भूदेवदेवैः न वृता, यशःप्रस्तावना-मण्डली जगद्धनम् कोष्ठीकृत्य कति वराटीभिः मुदं यास्यति ।

व्याख्या–कत्यद्रीति । हे भूमिपतीन्द्र–भूमेः पतयो भूमिपतयस्तेषामिन्द्रः, तत्सम्बुद्धौ=राजराज कति भूम्यः=कतिभूभागाः । अद्रिणा=पर्वतेन । प्रतिरोधिताः=अवरुद्धीकृताः । कति भूम्यः नदीपाथोधिप्लाविताः–नद्यः=सरितः पाथोनिधयश्च=समुद्राश्च, तैः प्लाविताः=आर्द्रीकृताः । कति एव च । अटवितां=अरण्यत्वम् । गताः=प्राप्ताः भूदेवदेवैः=विप्रश्रेष्ठैः । न वृताः=न गृहीताः, अपि तु गृहीता एव । तावत् यशःप्रस्तावना-मण्डली—यशसः=कीर्त्तेः प्रस्तावना-मण्डली=कथनमण्डली । जगद्धनम्—जगतः=विश्वस्य धनम्=अर्थम् । कोष्ठीकृत्य=वर्तुलीकृत्य संगृह्य । कति वराटीभिः=कतिपयवराटकैः । मुदं=प्रसन्नताम् । यास्यति=गमिष्यति ।

अत्र चतुर्थचरणे द्वादशाक्षरं यतिभंगः कविनाऽङ्गीकृत इति ।

इसी प्रकार अन्य भी—

हिन्दी—(किसी राजा की स्तुति से) हे नृपेन्द्र ! आपकी कितनी भूमि पर्वत द्वारा घिरी हुई है, कितनी ही नदियों तथा सागरों के जल से प्लावित है, कितनी ही भूमि जंगल बन गई है तथा कितनी ही ब्राह्मणों द्वारा घेर ली गई है, आपकी कीर्ति-कथन-मण्डली संसार भर के धन को कोष्ठित कर (तुच्छ मान कर) कितने विचारे लोगों द्वारा प्रसन्न की जायेगी ।

यहाँ पर चतुर्थ चरण में द्वादश अक्षरों पर यतिभंग कवियों ने स्वीकार किया है ।

उक्थादिवृत्तगणना

आरभ्यैकाक्षरात् पादादेकैकाक्षरवर्धितैः ।
पादैरुक्थादिसंज्ञं स्याच्छन्दः षड्विंशतिं गतम् ॥ १५ ॥
उक्थाऽत्युक्था तथा मध्या प्रतिष्ठाऽन्या सुपूर्विका ।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पंक्तिरेव च ॥ १६ ॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव तथातिजगती मता ।
शर्करी सातिपूर्वा स्यादष्टयत्यष्टीतथास्मृते ॥ १७ ॥
धृतिश्चातिधृतिश्चैव कृतिः प्रकृतिराकृतिः ।
विकृतिः संस्कृतिश्चैव तथाऽतिकृतिरुत्कृतिः ॥ १८ ॥

इत्युक्तश्छंदसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि साम्प्रतम् ।
लक्षणं सर्ववृत्तानां मात्रा वृत्तानुपूर्वकम् ॥ १९ ॥

अन्वयः—एकाक्षरात् पादात् आरभ्य एकाक्षरवर्धितैः पादैः षड्विंशतिं गतं छन्दः उक्थादि संज्ञं स्यात् । एवम् १ उक्था, २ अत्युक्था, ३ मध्या, ४ प्रतिष्ठा, ५ सुपूर्विका, ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८ अनुष्टुप्, ९ बृहती, १० पंक्ति ११ त्रिष्टुप्, १२ जगती, १३ अतिजगती, १४ शर्करी, १५ अतिशर्करी, १६ अष्टी, १७ अत्यष्टी १८ धृतिः, १९ अतिधृतिः, २० कृतिः, २१ प्रकृतिः, २२ आकृतिः, २३ विकृतिः, २४ संस्कृतिः, २५ अतिकृतिः, २६ उत्कृतिः, इति उक्ताः छन्दसां संज्ञाः क्रमशः साम्प्रतं सर्ववृत्तानां मात्रावृत्तानुपूर्वकं लक्षणं वच्मि ॥

व्याख्या–आरभ्येति । एकाक्षरात्=एकमक्षरं यस्मिन् तत्, तस्मात् पादात् आरभ्य=प्रारभ्य एकैकाक्षरवर्धितैः=द्व्यक्षरैः पादैः=चरणैः षड्विंशतिं=षड्विंशतिभेदत्वम् । गतम्=प्राप्तम् । छन्दः=वृत्तम् । उक्थादि नामकं स्यात्=भवेत् यस्य च्छन्दसः प्रतिपादमेकमक्षरं तदुक्था संज्ञकम्, द्व्यक्षररचितपादस्य अत्युक्थं नाम । एवं षड्विंशत्यक्षरं यावत्क्रमेण नाम ज्ञातव्यम्—उक्थादारभ्य उत्कृत्यन्त्यम् पूर्वोक्तम् । इति=एवम् । क्रमशः छन्दसां=वृत्तानाम् संज्ञाः, साम्प्रतम् मात्रावृत्तानुपूर्वकं सर्ववृत्तानां लक्षणं वच्मि=कथयामि ।

हिन्दी–एकाक्षर चरण से आरम्भ होकर एक-एक अक्षर बढ़कर २६ प्रकार के छन्द उक्थादि नामक होते हैं । प्रतिपाद एक अक्षर वाला उक्था, दो अक्षरों वाला अत्युक्था । इस प्रकार १. उक्था, २. अत्युक्था, ३. मध्या, ४. प्रतिष्ठा, ५. सुप्रतिष्ठा, ६. गायत्री, ७. उष्णिक्, ८. अनुष्टुप्, ९. बृहती, १०. पंक्ति, ११. त्रिष्टुप्, १२. जगती, १३. अतिजगती, १४. शर्करी, १५. अतिशर्करी, १६. अष्टि, १७. अत्यष्टि, १८. धृति, १९. अतिधृति, २०. कृति, २१. अतिकृति, २२. प्रकृति, २३. आकृति, २४. विकृति, २५. संस्कृति तथा २६. उत्कृति नामक छन्दों के मात्रानुपूर्वक सभी वृत्तों के लक्षण अब क्रमशः कह रहा हूँ ॥ १५–१९ ॥

इति परमेश्वरदीनपाण्डेयकृतया सुधाव्याख्यया संवलितः
छन्दोमञ्जर्याः मुखबन्धाख्यः
प्रथमः स्तबकः ।

द्वितीयः स्तबकः

अथ समवृत्तम्

१. उक्था (एकाक्षरा वृत्तिः)।

ग

ऽ

ग् श्रीः ।।१।।

श्रीस्ते । सास्ताम् ।

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे ग् = एको गुरुवर्णो भवति सा श्रीर्नाम । वृत्तलक्षणमेव तदुदाहरणम्—ग् श्रीः । अथवा—श्रीस्ते । सास्ताम् ।।

हिन्दी—लक्ष्मी जी या सरस्वती जी तुम्हारी होवें (बनें)। अथवा श्री छन्द तुम्हारे ज्ञान का कारण बने ।

जिस छन्द के एक चरण में एक गुरु अक्षर हो उसका नाम श्री छन्द है। और यही लक्षण उसका उदारण भी समझें। अथवा यथा उदाहरण "श्रीस्ते सास्ताम" भी है।

२. अत्युक्था (द्वयक्षरा वृत्तिः)

ग ग

ऽ ऽ

गौ स्त्री ।।१।।

गोपस्त्रीभिः । कृष्णः रेमे ।।

व्याख्या—गौ=द्विगुरुवर्णौ यस्मिन् वृत्ते एकपादे सा स्त्री नाम।

यथा—गोपस्त्रीभिः=गोपिकाभिः सह। कृष्णः=माधवः। रेमे=क्रीडितवान्।

हिन्दी—जिस वृत्त में एक चरण में दो गुरुवर्ण होते हैं, वह स्त्री नामक छन्द होता है ।।१।।

यथा गोपिकाओं के साथ कृष्ण जी खेलें।

३. मध्या (त्र्यक्षरा वृत्तिः)

म

ऽ ऽ ऽ

मो नारी ।।१।।

गोपानां नारीभिः । श्लिष्टोऽव्यात् कृष्णो वः ।।

व्याख्या–यत्र एकस्मिन् पादे त्रयो वर्णाः गुरवः, सा नारी नाम। अर्थात् मगणपादो नारी ।

यथा—गोपानां=गोपालानाम् । नारीभिः=स्त्रीभिः । श्लिष्टः=आलिंगितः। कृष्णः=माधवः । वः=युष्मान् । अव्यात्=पातु ।

हिन्दी—जहाँ एक पाद में तीनों वर्ण गुरु अर्थात् मगण हो वहाँ नारी नामक छन्द होता है ।

यथा—ग्वालों की स्त्रियों (गोपियों) द्वारा आलिंगित कृष्ण जी तुम्हारी रक्षा करें ।

र

ऽ । ऽ

रो मृगी ।।२।।

सा मृगीलोचना । राधिका श्रीपतेः ।

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे त्रिवर्णेषु मध्यमो लघुः, अर्थात् यत्र पादे रगणः सा मृगी नाम ।

यथा—श्रीपतेः—श्रियः पतिस्तस्य = कृष्णस्य । मृगीलोचना=मृगनयनी । सा राधिका=राधा प्रियतमा अस्तीति ।

हिन्दी—जहाँ एक पाद में तीनों वर्णों में मध्य वर्ण लघु हो, अर्थात् रगण हो वहाँ मृगी नाम का छन्द होता है ।

यथा—श्रीपति कृष्ण जी की मृगनयनी वह राधिका (प्रियतमा) है ।

४. प्रतिष्ठा (चतुरक्षरा वृत्तिः)

ग म

ऽ ऽ ऽ ऽ

ग्मौ चेत् कन्या ।।१।।

भास्वतकन्या, सैका धन्या । यस्याः कूले, कृष्णोऽखेलत् ।।

व्याख्या–यस्मिन् एकपादे त्रिवर्णाः गुरवः, चतुर्थश्चापि गुरुः, अर्थात् मगणो गुरुस्सा कन्या नाम ।

यथा—सा=अवर्णनीया । एका=अद्वितीया । भास्वतकन्या–भास्वतः= सूर्यस्य कन्या=दुहिता यमुना । धन्या=धन्यभाग्या । यस्याः=यमुनायाः । कूले= तटे । कृष्णः=माधवः । अखेलत्=क्रीडितवान् ।

हिन्दी—जहाँ एक पाद में चार वर्ण गुरु, अर्थात् मगण और एक गुरु वर्ण हो वह कन्या कहलाता है ।

यथा—वह सूर्यपुत्री यमुना धन्य है, जिसके तट पर कृष्ण जी ने क्रीडा की ।

न ग
। । । ऽ

नगि सती ।।२।।

मुररिपो ! तव पदम् । नमति सा ननु सती ।।

व्याख्या–यत्र एकस्मिन् पादे प्रथमत्रिवर्णाः ह्रस्वाः चतुर्थश्च गुरुः, अर्थात् नगणो गुरुश्च भवति सा सती संज्ञा ।

यथा—हे मुररिपो=हे मुरशत्रो कृष्ण । सा सती=साध्वी । तव=ते । पदम्= चरणम् । नमति=प्रणमति । ननु=किल ।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में चार वर्णों में प्रथम तीनों लघु, अर्थात् नगण और चौथा गुरु हो वह सती कहलाता है ।

यथा—हे मुररिपो कृष्ण ! आपके चरणों को वह साध्वी प्रणाम करती है ।

५. सुप्रतिष्ठा (पञ्चाक्षरा वृत्तिः)

भ ग ग
ऽ । । ऽ ऽ

भ्गौ गिति पंक्तिः ।।१।।

कृष्णसनाथा तर्णकपंक्तिः । यामुनकच्छे चारु चचार ।।

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे आदिगुरुर्भगणः, द्वौ गुरू च भवतः, तत् पंक्तिवृत्तं कथ्यते ।

यथा—तर्णकपंक्तिः=वत्सश्रेणिः । कृष्णसनाथा–कृष्णेन=माधवेन सनाथा= युक्ता । यामुनकच्छे=यमुनायास्तटे । चारु=रुचिरम् । चचार=बभ्राम ।

हिन्दी जहाँ प्रत्येक चरण में भगण तथा दो गुरु हों वहाँ पंक्ति नामक छन्द होता है ।

यथा—श्रीकृष्ण-युक्त बछड़ों की पंक्ति यमुना-तट पर मनोरम घूम रही थी ।

स ल ग
। । ऽ । ऽ

सलगैः प्रिया ।।२।।

व्रजसुभ्रुवो विलसत्कलाः । अभवन् प्रिया मुरवैरिणः ।।

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे सगणः लघुः गुरुश्च स्तः, तत् प्रियाच्छन्दो भवति ।

यथा—विलसत्कलाः—विलसन्त्यः=स्फुरन्त्यः कलाः=नृत्यादयः यासां ताः । व्रजसुभ्रुवः=व्रजसुन्दर्यः । मुरवैरिणः = मुरराक्षसरिपोः कृष्णस्य । प्रियाः=रुचिकराः । अभवन्=आसन् ।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में सगण लघु तथा गुरु हों वहाँ प्रिया नामक छन्द होता है ।

यथा—शोभित हो रही नृत्यविद्यादि कलाओं वाली व्रजसुन्दरियाँ मुरारि श्रीकृष्णजी को प्रिय बनीं ।

६. गायत्री (षडक्षरा वृत्तिः)

त य
ऽ ऽ । । ऽ ऽ

त्यौ चेत् तनुमध्या ।। १ ।।

मूर्तिर्मुरशत्रोरत्यद्भुतरूपा ।
आस्तां मम चित्ते नित्यं तनुमध्या ।।

व्याख्या–यत्र एकस्मिन् पादे तगण-यगणौ भवतस्तत्र तनुमध्या नामच्छन्दो भवति ।

यथा—मुरशत्रोः=मुरारेः कृष्णस्य । अत्यद्भुतरूपा=अतिविचित्रा । तनुमध्या=क्षीणकटिः । मूर्त्तिः=स्वरूपम् । मम=मे । चित्ते=मनसि । नित्यम्=सदा । आस्ताम्=भवतु ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में तगण तथा यगण हों वह **तनुमध्या** नामक छन्द होता है ।

यथा—मुरारि श्रीकृष्ण जी की क्षीण कटि वाली अत्यन्त अद्भुत छवि मेरे चित्त में सदैव निवास करे ।

न य
।।।।ऽऽ

शशिवदना न्यौ ॥२॥

शशिवदनानां व्रजतरुणीनाम् ।
अधरसुधोर्मिः मधुरिपुरैच्छत् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन पादे नगणो यगणश्च भवतः, तच्छशिवदनावृत्तं भवति ।

यथा—मधुरिपुः=मधुराक्षसशत्रुर्माधवः श्रीकृष्णः । शशिवदनानां—शशिरिव वदनानि यासां तासाम्=चन्द्रमुखीनाम् । व्रजतरुणीनाम्=व्रजांगनानां गोपीनाम् । अधरसुधोर्मिः—अधरः=ओष्ठमेव सुधोर्मिः=अमृततरंगम् । ऐच्छत्=अवाञ्छत् ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में नगण तथा यगण हो वहाँ **शशिवदना** नामक छन्द होता है ।

यथा—मधुरिपु श्रीकृष्ण जी ने चन्द्रमुखी व्रजांगनाओं के अधरामृततरंगों का पान करने की इच्छा की ।

य य
।ऽऽ।ऽऽ

द्विधा सोमराजी ॥३॥

हरे ! सोमराजीसमा ते यशःश्रीः ।
जगन्मण्डलस्य भिनत्त्यन्धकारम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे यगणौ स्तः, तत्र सोमराजीनाम वृत्तम् ।

यथा—हरे=हे कृष्ण ! सोमराजी—सोमस्य=चन्द्रस्य राजिः=पंक्तिरिव राजिः=पंक्तिः यस्याः सा । ते=तव । यशःश्रीः=कीर्तिश्रीः । जगन्मण्डलस्य=विश्वमण्डलस्य । अन्धकारम्=तमः । भिनत्ति=नाशयति ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में दो यगण हों वहाँ **सोमराजी** नामक छन्द होता है ।

यथा—हे हरे ! चन्द्रपंक्ति-सदृश तुम्हारी यशःश्री विश्वमण्डल के अन्धकार रूपी पाप का विनाश करती है ।

म म
ऽऽऽऽऽऽ

विद्युल्लेखा मो मः ॥४॥

क्वचित्पुस्तके विद्युल्लेखानाम वृत्तं नैव दृश्यते ।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे मगणौ स्तस्तत्र विद्युल्लेखानाम वृत्तम् ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो मगण होते हैं वहाँ **विद्युल्लेखा** वृत्त होता है । किसी-किसी पुस्तक में यह छन्द नहीं मिलता है ।

७. उष्णिक् (सप्ताक्षरा वृत्तिः)

न न ग
।।।।।।ऽ

ननगि वसुमती ॥ १ ॥

रविदुहितृतटे वनकुसुमततिः ।
व्यधित मधुमती मधुमथनमुदम् ॥

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे नगणौ गुरुश्च भवन्ति तत्र वसुमती संज्ञा वृत्तस्य ।

यथा—रविदुहितृतटे—रवेः=सूर्यस्य दुहिता=कन्या यमुना, तस्यास्तटे=कूले । मधुमती=मधुयुक्ता । वनकुसुमततिः—वनकुसुमानां=काननपुष्पाणाम् ततिः=पंक्तिः । मधुमथनमुदम्—मधु=दानवविशेषः, मकरन्दश्च, तं मथ्नातीति मधुमथनः=कृष्णः, पक्षे भ्रमरः, तस्य मुदम्=आनन्दम् । व्यधित=अकरोत् ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो नगण तथा एक गुरु होता है वहाँ **वसुमती** नामक छन्द होता है ।

यथा—सूर्यतनया यमुना के तट पर मधुयुक्त वनपुष्पों की पंक्ति ने मधुमथन श्रीकृष्ण (मधुप) को आनन्दित कर दिया ।

ज स ग

। ऽ । । । ऽ ऽ

कुमारललिता ज्सगाः ॥ २ ॥

मुरारितनुवल्ली कुमारललिता सा।
व्रजैणनयनानां ततान मुदमुच्चैः॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकपादे जगणः सगणः गुरुश्च भवन्ति तत्र कुमारललिता वृत्तं कथ्यते।

यथा—मुरारितनुवल्ली मुरारेः=मुररिपोः कृष्णस्य तनुः=शरीरमेव वल्ली=लता या सा। कुमारललिता—कुमारेण=कुमारावस्थया ललिता=शोभिता। सा व्रजैणनयनानां—व्रजस्य=व्रजमण्डलस्य एणनयनानां=मृगनेत्रीणाम्। मुदम्=आमोदम्। उच्चैः=अधिकम्। ततान=प्रसारयामास।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में जगण-सगण तथा गुरु हो वहाँ कुमारललिता छन्द होता है।

यथा—कुमारावस्था से मनोरम बनी हुई मुरारि श्रीकृष्ण की शरीररूपी लता ने व्रज की मृगनयनियों (सुन्दरी गोपियों) के आनन्द को बढ़ा दिया।

म स ग

ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

म्सौ गः स्यान्मदलेखा ॥ ३ ॥

रङ्गे बाहुविरुग्णात् दन्तीन्द्रान्मदलेखा।
लग्नाऽभून्मुरशत्रौ कस्तूरीरसचर्चा॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे मगणः सगणः गुरुश्च भवन्ति तन्मदलेखावृत्तमस्ति।

यथा—रञ्जत्यस्मिन्निति रङ्गस्तस्मिन्=रङ्गभूमौ। बाहुविरुग्णात् बाहुभ्यां=भुजाभ्यां विरुग्णात्=मारितात्। दन्तीन्द्रात्—दन्तीनामिन्द्रस्तस्मात्=गजेन्द्रात् कुवलयापीडात्। मुरशत्रौ=मुरारिशरीरे। लग्ना=खचिता मदलेखा=मदजलरेखा। कस्तूरीरसचर्चा=कस्तूरीरसाङ्गरागः। अभूत्=बभूव।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में मगण सगण और गुरु होते हैं वहाँ मदलेखा नामक छन्द होता है।

यथा—रङ्गभूमि में भुजाओं द्वारा मारे जाने से गजेन्द्र कुवलयापीड से मुरारि श्रीकृष्ण के शरीर पर लगी मदजलरेखा कस्तूरीरसाङ्गलेप-सी बन गई।

८. अनुष्टुप् (अष्टाक्षरा वृत्तिः)

भ भ ग ग

ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

चित्रपदा यदि भौ गौ ॥ १ ॥

यामुनसैकतदेशे गोपवधूजलकेलौ।
कंसरिपोर्गतिलीला चित्रपदा जगदव्यात्॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकचरणे द्वौ भगणौ तथा द्वौ गुरू स्तस्तत्र चित्रपदा नामकं वृत्तं भवति।

यथा—यामुनसैकतदेशे—यामुनायाः इति यामुनः, सिकतामयः सैकतः देशः=भूभागस्तस्मिन्=यमुनायाः सैकते प्रदेशे। (सैकतं सिकतामयम्। इत्यमरः)। गोपवधूजनकेलौ—गोपवधूनां=गोपाङ्गनानां जलकेलौ=जलक्रीडायाम्। कंसरिपोः=कंसारेः कृष्णस्य। चित्रपदा=अद्भुता। गतिलीला=गमनलीला। जगत्=विश्वम्। अव्यात्=पायात्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो भगण तथा दो गुरु हों वहाँ चित्रपदा वृत्त होता है।

यथा—रेतीले यमुनातट पर गोपाङ्गनाओं की जलक्रीडा में कंसारि श्रीकृष्ण जी की विचित्र गतिलीला विश्व की रक्षा करे।

भ त ल ग

ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ

भात्तलगा माणवकम् ॥ २ ॥

चञ्चलचूडं चपलैर्वत्सकुलैः केलिपरम्।
ध्याय सखे स्मेरमुखं नन्दसुतं माणवकम्॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे भगणः तगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तत्र माणवकं वृत्तम्।

यथा—सखे=हे मित्र ! चञ्चला=चपला चूडा=शिखा यस्य तम्=चपलशिखम् । चपलैः=चञ्चलैः । वत्सकुलैः=वत्सवृन्दैः । केलिपरम्=क्रीडामग्नम् । माणवकम् = बालकम् । स्मेरमुखम्=विहसितवदनम् । नन्दसुतम्=कृष्णम् । ध्याय=ध्यानं कुरु ॥

हिंदी—जहाँ प्रत्येक पाद में भगण-तगण लघु तथा गुरु हो वहाँ माणवक वृत्त होता है ।

यथा—हे मित्र ! लहराती चोटी वाले, चञ्चल वत्सवृन्द के साथ क्रीडामग्न प्रसन्नवदन बालक नन्दनन्दन का ध्यान करो ।

म म ग ग

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

मो मो गो गो विद्युन्माला ॥ ३ ॥

वासोवल्ली विद्युन्माला बर्हश्रेणी शाक्रश्चापः ।
यस्मिन् स स्तात् तापोच्छित्यै गोमध्यस्थः कृष्णाम्भोदः ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकपादे द्वौ मगणौ द्वौ गुरू च भवन्ति तद् विद्युन्माला वृत्तं कथ्यते ।

यथा—यस्मिन्=कृष्णघने । वासोवल्ली-वासः=वस्त्रमेव वल्ली=लता सा=वस्त्रलता । विद्युन्माला=तडित्पंक्तिः । बर्हश्रेणी-बर्हाणां=मयूरपिच्छानां श्रेणी=पंक्तिः । शाक्रः=शक्रसम्बन्धी चापः=धनुः, इन्द्रधनुः । सः गोमध्यस्थः—गवां=धेनूनां मध्ये=मध्यभागे स्थः=स्थितः, घनपक्षे तु—गवोः=द्यावापृथिव्योः मध्यस्थः=मध्यस्थितः । कृष्णाम्भोदः—कृष्ण=श्रीकृष्णः एव अम्भोदः=घनम्, सः पक्षे-श्याममेघः । तापोच्छित्यै-तापानां=दैहिकदैविकभौतिकदुःखानां विच्छित्तिः=विनाशस्तस्यै । पक्षे आतप-विनाशाय । स्तात्=भवतु ।

हिंदी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो मगण तथा दो गुरु, अर्थात् सभी आठों वर्ण गुरु हों वहाँ विद्युन्माला छन्द होता है ।

यथा—काले बादल में पीताम्बर, विद्युत्पंक्ति, मयूरों की पुछांड इन्द्रधनुष गायों के मध्यस्थित (आकाश तथा पृथ्वी के मध्यस्थित) श्यामघन (श्रीकृष्ण रूपी जल) आतपक्लेश (त्रिविध ताप) का विनाशक बने ।

र ज ग ल

ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ।

ग्लौ रजौ समानिका तु ॥ ४ ॥

यस्य कृष्णपादपद्ममस्ति हृत्तडागसद्म ।
धीः समानिका परेण नोचिताऽत्र मत्सरेण ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे रगणः जगणः गुरुः लघुश्च भवन्ति तत् समानिकावृत्तम् ।

यथा—कृष्णपादपद्मम्—कृष्णस्य=माधवस्य पादपद्मम्=चरणकमलम् । यस्य=यस्य जनस्य । हृत्तडागसद्म—हृत् = हृदयं तडागं=सरोवरं तदेव सद्म=गृहम् यस्य तत् । अस्ति, अत्र मत्सरेण=मात्सर्येण, ईर्ष्यया वा । परेण=अन्येन । समानिका=समाना धीः=बुद्धिः । नोचिता=नैव योग्या । कृष्णभक्तो नास्ति कस्यापि रिपुः इत्यर्थः ।

हिंदी—जहाँ प्रत्येक पाद में रगण-जगण गुरु तथा लघु हों वहाँ समानिका छन्द होता है ।

यथा—कृष्ण जी के चरणकमल जिस भक्त के हृदय रूपी तडाग का घर (आधार) है उसमें ईर्ष्याभाव से अन्य पुरुष (शत्रु आदि) के समान बुद्धि नहीं होनी चाहिए अर्थात् कृष्णभक्त का कोई शत्रु नहीं होता है ।

ज र ल ग

। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

प्रमाणिका जरौ लगौ ॥ ५ ॥

पुनातु भक्तिरच्युता सदाऽच्युतांघ्रि पद्मयोः ।
श्रुतिस्मृतिप्रमाणिका भवाम्बुराशितारिका ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे जगणः रगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तत्प्रमाणिकावृत्तम् ।

यथा—श्रुतिस्मृतिप्रमाणिका-श्रुतिः=वेदः स्मृतिः=धर्मसंहिता प्रमाणं यस्याः सा (श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः । इति नियमात्) भवाम्बुराशितारिका—भवरूपस्य=संसाररूपस्य अम्बुराशेः=सागरस्य तारिका=पार कर्त्री । अच्युतांघ्रिपद्मयोः—अच्युतस्य=कृष्णस्य अंघ्रिपद्मयोः=चरणकम-

लयोः। अच्युता=शाश्वती। भक्तिः=रतिः। सदा=नित्यम्। पुनातु= पवित्रान् करोतु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में जगण-रगण लघु तथा गुरु होते हैं वहाँ प्रमाणिका छन्द होता है।

यथा—वेदों तथा धर्म-संहिताओं द्वारा प्रमाणित, संसारसागर को पार करने वाली शाश्वती श्रीकृष्ण जी के चरणकमलों की भक्ति (भक्तों को) पवित्र करे।

न भ ल ग

। । । S । । । S

नभलगा गजगतिः ॥ ६ ॥

(क) रविसुतापरिसरे विहरतो दृशि हरेः।
व्रजवधूगजगतिर्मुदमलं व्यतनुत ॥
(ख) अवतु वो गिरिसुता शशिभृतः प्रियतमा।
वसतु मे हृदि सदा भगवतः पदयुगम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे नगणः भगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तद्गजगतिच्छन्दः ॥

यथा—(क) व्रजवधूगजगतिः—व्रजवधूनां व्रजवनितानां गजगतिः=करिसममन्थरगमनम्। रविसुतापरिसरे—रविसुतायाः—यमुनायाः परिसरे=तटे। विहरतः=विचरतः। हरेः=श्रीकृष्णस्य। दृशि=दृष्ट्याम्। अलम्=पर्याप्तम्। मुदम्=आनन्दम्। व्यतनुत=अप्रसारयत्।

(ख) शशिभृतः=चन्द्रमौलेः हरस्य। प्रियतमा=अतिशयेन प्रिया। गिरिसुता=गिरिजा। वः=युष्मान्। अवतु=रक्षतु। मे=मम। हृदि=चेतसि। सदा=नित्यम्। भगवतः=हरस्य। पदयुगम्=चरणयुगलम्। वसतु=तिष्ठतु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में नगण-भगण तथा एक लघु एक गुरु होते हैं वहाँ **गजगति** छन्द होता है।

यथा—(क) व्रजवनिताओं की गजसदृश मन्थर चाल यमुनातट पर विहार करती हुई कृष्ण जी की दृष्टि में अत्यधिक आनन्द फैला रही थी।

(ख) चन्द्रमौलि शिवजी की प्रियतमा गिरिसुता पार्वती तुम सबकी रक्षा करें। (तथा) मेरे हृदय में सदैव भगवान् शिवजी के चरण-युगल निवास करें।

म न ग ग

S S S । । । S S

म्नौ गौ हंसरुतमेतत् ॥ १ ॥

त र ल ग

S S । S । S । S

नाराचिका तरौ लगौ ॥ २ ॥

एते छन्दसी क्वचिन्न दृश्येते।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे मगणः नगणः द्वौ गुरू च भवन्ति तद् हंसरुतं वृत्तं कथ्यते।

यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे तगणः रगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तत्र नाराचिका वृत्तम्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में मगण-नगण और दो गुरु होते हैं वहाँ हंसरुत नामक छंद होता है।

जहाँ प्रत्येक चरण में तगण-रगण लघु तथा गुरु होते हैं वहाँ नाराचिका छंद कहलाता है। हंसरुत तथा नाराचिका छन्द कहीं दिखलाई नहीं पड़ते हैं।

९. बृहती (नवाक्षरा वृत्तिः)

न न म

। । । । । । S S S

भुजगशिशुभृता नौ मः ॥१॥

हृदतटनिकटक्षोणी भुजगशिशुभृता याऽऽसीत्।
मुररिपुदलिते नागे व्रजजनसुखदा साऽभूत् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे नगणः नगणः मगणश्च भवन्ति तत्र भुजगशिशुभृतावृत्तम्।

यथा—या हृदतटनिकटक्षोणी—हृदस्य=कालियकुण्डस्य तटनिकटे=

कूलसमीपे क्षोणी=भूमिः। भुजगशिशुभृता—भुजगानाम्=अहीनाम् शिशवः=शावकाः तैः भृता=परिपूर्णा। आसीत्। सा क्षोणी नागे=कालियनागे। मुरारिदलिते–मुरारिणा=कृष्णेन दलिते=विनाशिते सति। व्रजजनसुखदा–व्रजजनेभ्यः=गोपेभ्यः सुखदा=आनन्ददायिनी। अभूत्=बभूव।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो नगण और एक मगण होते हैं, वहाँ भुजंगशिशुभृता नामक छन्द होता है।

यथा—जो कालियकुण्ड की तटवर्ती भूमि साँपों के बच्चों से परिपूर्ण रहती थी वही श्रीकृष्ण जी द्वारा कालिय नाग का नाश करते ही व्रजवासियों के लिए सुखदायिनी बन गई।

भ म स

ऽ।। ऽऽऽ ।।ऽ

स्यान्मणिमध्यं चेद्भमसाः ॥२॥

कालियभोगाभोगगतस्तन्मणिमध्यस्फीतरुचा ।
चित्रपदाभो नन्दसुतश्चारु ननर्त स्मेरमुखः ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे द्वौ भगणौ सगणश्च भवन्ति तन्मणिमध्यं नाम वृत्तम्।

यथा—कालियभोगाभोगगतः—कालियस्य=कालियनामनागस्य भोगस्य=फणस्य यः आभोगः=विस्तारः सः। तन्मणिमध्यस्फीतरुचा—तस्य=कालियनागस्य मणिः=मणिरत्नम् तस्य मध्यात्=अन्तरालात् स्फीतरुचा=विकसितकान्त्या। चित्रपदाभः—चित्रा=अद्भुता पदाभा=चरणद्युतिर्यस्य सः। स्मेरमुखः=प्रसन्नवदनः। नन्दसुतः=नन्दनन्दनः। चारु=रुचिरम् ननर्त=अनृत्यत्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः दो भगण और सगण हों वहाँ मणिमध्य नामक छन्द होता है।

यथा—कालिय नाग के फण के मध्य विराजमान, नागमणि से फैलने वाली कान्ति से अद्भुत चरणद्युति वाले प्रसन्नवदन नन्दनन्दन सुन्दर नृत्य करने लगे।

स ज र

।।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

सजरैर्भुजङ्गसङ्गता ॥३॥

तरला तरङ्गरिङ्गितैर्यमुना भुजंगसंगता ।
कथमेति वत्सचारकश्चपलः सदैव तां हरिः ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमानुसारं सगणः जगणः रगणश्च भवन्ति तद् भुजंगसंगतावृत्तम्।

यथा—यमुना=सूर्यसुता। तरंगरिङ्गितैः–तरङ्गैः=वीचिभिः रिङ्गितैः=समुद्गतैः। तरला=चपला तथा भुजंगसंगता—भुजंगेन=कालियनागेन संगता=व्यापृता अस्तीति। चपलः=चंचलः। वत्सचारकः=गोपालकः। हरिः=कृष्णः। सदा=सर्वदा एव। ताम्=तथाविधां यमुनाम्। कथम्=केन प्रकारेण। एति=गच्छति?

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः सगण जगण तथा रगण हो वह भुजंगसंगता छन्द कहलाता है।

यथा—यमुना लोल-लहरों से तथा सर्पों से व्याप्त है, चपल गोचारक कृष्ण जी सदैव उस यमुना नदी पर कैसे जाते हैं?

क्वचिद् इमानि च्छन्दांसि वृत्तावस्यामधिकानि दृश्यन्ते—

र न स

ऽ।ऽ ।।। ।।ऽ

रान्सा विह हलमुखी ॥१॥

र न र

ऽ।ऽ ।।। ऽ।ऽ

भद्रिका भवति रो नरौ ॥२॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे रगणः नगणः सगणश्च भवन्ति तद् हलमुखी वृत्तं भवति। यत्र प्रत्येकस्मिश्चरणे क्रमशः रगणः नगणः रगणश्च भवन्ति तद् भद्रिका वृत्तम्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः रगण नगण सगण होते हैं, वहाँ हलमुखी, जहाँ रगण नगण रगण होते हैं, वहाँ भद्रिका छन्द होता है।

न न स
। । । । । । । । ऽ

द्विगुणनगणसहितः
सगण इह हि विहितः।
फणिपतिमतिविमला
क्षितिप ! भवति कमला ॥३॥ इति छं०पं०

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

अङ्कोन्माना वर्णा यत्र स्युः
सर्वे दीर्घाः सर्पेशेनोक्तम्
रूपामालीसंज्ञं तद् वृत्तं
यस्मिश्चेतः केषामुद्वृत्तम् ॥४॥ इति छं०

व्याख्या—यत्र प्रत्येकचरणे द्वौ नगणौ सगणश्च भवन्ति तत् कमलावृत्तं कथ्यते।

यथा—हे क्षितिप ! =राजन् ! फणपतिमतिविमला--फणिपतेः=शेषनागस्य मतिः=बुद्धिः इव विमला=स्वच्छा। कमला=लक्ष्मीः। भवति ॥३॥

व्याख्या—यत्र=यस्मिन् प्रत्येकपादे सर्वे वर्णाः=सर्वाक्षराणि। दीर्घाः=गुरवः अङ्कोन्मानाः=अङ्कपरिमिताः। तद्वृत्तं=तच्छन्दः रूपामाली संज्ञं भवति।

यथा—यस्मिन् केषां चेतः=चित्तम्। उद्वृत्तं भवतीति।

हिन्दी—जहाँ नगण नगण सगण होते हैं वहाँ कमला वृत्त संज्ञा होती है।

यथा—हे राजन् ! शेषनाग की बुद्धि-जैसी विमल बुद्धि वाली कमला (लक्ष्मी) होती है।

हिन्दी--जहाँ प्रत्येक चरण में सभी नौ वर्ण दीर्घ अर्थात् तीनों मगण हों वहाँ रूपामाली नामक छन्द होता है।

यथा—इस छन्द में किसी-किसी का मन उचट जाता है ॥ ४ ॥

१०. पंक्तिः (दशाक्षरा वृत्तिः)

भ भ स ग
ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

रुक्मवती सा यत्र भमस्गाः ॥१॥

कायमनोवाक्यैः परिशुद्धैर्यस्य सदा कंसद्विषि भक्तिः।
राज्यपदे हर्म्यालिरुदारा रुक्मवती विघ्नः खलु तस्य ॥

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे क्रमशः भगणः मगणः सगणः गुरुश्च भवन्ति तद् रुक्मवतीवृत्तं कथ्यते।

यथा—यस्य=यस्य भक्तस्य। परिशुद्धैः=विशुद्धैः। कायमनोवाक्यैः=शरीरमनोवचनैः। कंसद्विषि=कंसारेः कृष्णस्य। भक्तिः=अनुरागः, खलु=किल। तस्य राज्यपदे उदारा=प्रशस्ता। रुक्मवती=स्वर्णयुता। हर्म्यालिः=भवनपंक्तिः। विघ्नः=बाधकः एव भवति।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः भगण-मगण-सगण तथा गुरु हो वह रुक्मवती छन्द कहलाता है।

यथा जिस भक्त के विशुद्ध शरीर, मन तथा वाणी से कंसारि भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति हो, वास्तव में प्रशस्त स्वर्ण-संयुक्त प्रासाद-माला आदि उसके लिए बाधक होती है।

म भ स ग
ऽ ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ ऽ

ज्ञेया मत्ता मभसगसृष्टा ॥२॥

पीत्वा मत्ता मधु मधुपाली कालिन्दीये तटवनकुञ्जे।
उद्दीव्यन्तीर्व्रजजनरामाः कामासक्ता मधुजिति चक्रे ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् चरणे क्रमशः मगणः भगणः सगणः गुरुश्च भवन्ति तत् मत्तानामकं वृत्तं कथ्यते।

यथा–मधुपाली–मधुपान्तीति मधुपाः तेषामाली=चञ्चरीकपंक्तिः। कालिन्दीये=यमुनायाः। तटवनकुञ्जे=तटवर्त्तिनि काननकुञ्जे। मधु=पुष्परसम्। पीत्वा=पानं कृत्वा। मत्ता=मदयुक्ता सती। उद्दीव्यन्तीः=उद्दण्डतया क्रीडन्तीः। व्रजजनरामाः=व्रजाङ्गनाः। मधुजिति=श्रीकृष्णे। कामासक्ताः=मदनपीडिताः, चक्रे=कृतवती।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण-भगण-सगण तथा गुरु होते हैं वह मत्ता नामक छन्द कहलाता है।

यथा—भ्रमर-पंक्ति ने यमुना सम्बन्धिनी तटवर्ती काननलता-कुञ्ज में मधुरसपान कर मतवाली व्रजवनिताओं को मधुजित् श्रीकृष्ण जी में कामासक्त बना दिया।

न ज न ग

। । । । S । । । । S

त्वरितगतिश्च नजनगैः ॥ ३ ॥

(क) त्वरितगतिर्व्रजयुवतिस्तरणिसुताविपिनगता ।
मुररिपुणा रतिगुरुणा सह मिलिता प्रमदमिता ॥

(ख) क्षितिविजितस्थितिविहितिव्रतरतयः परगतयः ।
उरु रुरुधुर्गुरु दुधुवुर्युधि कुरवः स्वमरिकुलम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः जगणः नगणः गुरुश्च भवन्ति तत् त्वरितगतिसंज्ञकं वृत्तम्।

यथा—(क) त्वरितगतिः—त्वरिता गतिर्यस्याः सा=द्रुतगामिनी। तरणिसुताविपिनगता—तरणिसुतायाः=यमुनायाः विपिनगता=काननचारिणी। व्रजयुवतिः=व्रजतरुणी। रतिगुरुणा=रतिदक्षिणेन। मुररिपुणा=मुरारिणा श्रीकृष्णेन। सह=साकम्। मिलिता=संगता। प्रमदमिता—प्रमदम्=प्रसन्नताम् इता=प्राप्ता।

(ख) क्षितिविजितस्थितिविहितिव्रतरतय.—क्षितेः=भूमेः या विजितिः=जयः या च स्थितिः=मर्यादा, तयोर्या विहितिः=कृतिः सैव व्रतं, तत्र रतिः अनुरागः येषां ते। परगतयः—पराः=उत्कृष्टाः गतयः=दशाः येषां ते। कुरवः =धार्तराष्ट्राः। युधि=युद्धे। स्वम् अरिकुलम्=निजशत्रुसमुदायम्। उरु=अधिकम्। रुरुधुः=अरुन्धन्। गुरु=अधिकञ्च। दुधुवुः=प्रकम्पयामासुः॥

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण-जगण-नगण तथा गुरु होते हैं वह त्वरितगति नामक छन्द कहलाता है।

यथा—(क) द्रुतगामिनी यमुना के जंगल में भ्रमण करने वाली व्रजवनिता रतिगुरु मुरारि श्रीकृष्ण जी के साथ मिलकर अत्यन्त प्रमुदित हुई।

(ख) पृथ्वी की विजय तथा मर्यादा की रक्षा के व्रत में लगे उत्कृष्ट दशा-

वाले कौरव युद्ध में अपने रिपुवृन्द को अत्यन्त रोकने लगे तथा उन्हें अतीव कँपा दिये।

न र ज ग

। । । S । S । S । S

नरजगैर्भवेन्मनोरमा ॥ ४ ॥

तरणिजातटे विहारिणी व्रजविलासिनीविलासतः।
मुररिपोस्तनुः पुनातु वः सुकृतशालिनां मनोरमा ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः रगणः जगणः गुरुश्च भवन्ति तत् मनोरमा वृत्तं कथ्यते।

यथा—व्रजविलासिनीविलासतः—व्रजविलासिनीषु=व्रजवनितासु विलासतः=विहारनिमित्तम्। तरणिजातटे—तरणिः=सूर्यः, तस्माज्जाता=यमुना, तस्याः तटे=कूले। विहारिणी=विहारं कुर्वन्ती। सुकृतशालिनाम्=पुण्यात्मनाम्। मनोरमा=मनोहरा। मुररिपोः=मुरारेः श्रीकृष्णस्य। तनुः=शरीरम्। वः=युष्मान्। पुनातु=निष्कलुषान् करोतु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण-रगण-जगण तथा गुरु होते हैं, वह मनोरमा छन्द कहलाता है।

यथा—व्रज-वनिताओं के विलास से यमुना तट पर विहार करती हुई पुण्यात्माओं की मनोरम मुरारि श्रीकृष्ण की देह आप लोगोंको पवित्र करे।

मनोरमाच्छन्दसि इमान्यन्यान्यपि छन्दांसि दृश्यन्ते—

म स ज ग

S S S । । S । S । S

म्सौ ज्गौ शुद्धविराडिदं मतम् ॥ १ ॥

म न य ग

S S S । । । । S S S

म्नौ य्गौ चेति पणवनामेदम् ॥ २ ॥

र ज र ग

S । S । S । S । S S

र्जौ र्गौ मयूरसारिणी स्यात् ॥ ३ ॥

त ज ज ग

S S I I S I I S I S

तो जौ गुरुणेयमुपस्थिता ॥ ४ ॥ इति वृत्तरत्नाकरे ।

भ म ज ग

S I I S S S I S I S

दीपकमालां भ्मौ मता जगौ ॥ ५ ॥

म भ न ग

S S S S I I I I I S

ज्ञेया हंसी मभनगयुता ॥ ६ ॥ इति तत्परिशिष्टे ।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः सगणः जगणः गुरुश्च भवन्ति तच्छुद्धविराट् छन्दः । मगणः नगणः यगणः गुरुश्च, तत्पणवनाम । रगणः जगणः रगणः गुरुश्च तन्मयूरसारिणी । तगणः जगणौ गुरुश्च तदुपस्थिता । भगणः मगणः जगणः गुरुश्च तद्दीपकमाला । मगणः भगणः नगणः गरुश्च तद् हंसीसंज्ञकं वृत्तम् भवति ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण–सगण–जगण और गुरु हो वह शुद्धविराट्, मगण-नगण–यगण और गुरु हो तो पणवनामा, रगण-जगण-रगण और गुरु हो तो मयूरसारिणी, तगण–जगण–जगण और गुरु हो तो उपस्थिता एवं भगण-मगण-जगण और गुरु हो तो दीपकमाला तथा मगण-भगण–नगण और गुरु हो तो हंसी नाम के छन्द होते हैं ।

११. त्रिष्टुप् (एकादशाक्षरा वृत्तिः)

त त ज ग ग

S S I S S I I S I S S

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ॥ १ ॥

गोष्ठे गिरिं सव्यकरेण धृत्वा रुष्टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृष्टौ ।
यो गोकुलं गोपकुलञ्च सुस्थं चक्रे स नो रक्षतु चक्रपाणिः ॥

व्याख्या—यदि चरणे क्रमशः तगणौ जगणः द्वौ गुरू च भवन्ति तदिन्द्रवज्रा नाम वृत्तं भवति ।

यथा—यः चक्रपाणिः—चक्रं पाणौ यस्य सः चक्रपाणिः=कृष्णः । रुष्टेन्द्रवज्राहतिमुक्तवृष्टौ—रुष्टेन इन्द्रेण=कुपितेन शक्रेण वज्राहत्या=वज्रप्रहारेण मुक्ता=कृता वृष्टिः=वर्षा यत्र तस्याम् । गोष्ठे=गोशालायाम् । सव्यकरेण=वामहस्तेन । गिरिं=गोवर्द्धनपर्वतम् । धृत्वा=सन्धार्य । गोकुलं=गोवृन्दम् । गोपकुलम्=गोपसमूहञ्च । सुस्थं=विपत्तिरहितम् । चक्रे=अकरोत् । सः=असौ कृष्णः । नः=अस्मान् । रक्षतु=अवतु ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः दो तगण, जगण तथा दो गुरु हों वह इन्द्रवज्रा छन्द होता है ।

यथा—क्रुद्ध इन्द्र के द्वारा वज्राघात से की गई वर्षा में गोशाला में बाँये हाथ से गोवर्द्धन पर्वत धारण कर गोसमूह तथा गोपालवृन्द को जिन्होंने विपत्ति-रहित किया वह चक्रपाणि भगवान् श्रीकृष्ण हमारी रक्षा करें ।

ज त ज ग ग

I S I S S I I S I S S

उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा ॥ २ ॥

उपेन्द्रवज्रादिमणिच्छटाभिर्विभूषणानां छुरितं वपुस्ते ।
स्मरामि गोपीभिरुपास्यमानं सुरद्रुमूले मणिमण्डपस्थम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः जगणः तगणः जगणः द्वौ गुरुवर्णौ च भवन्ति तदुपेन्द्रवज्रा वृत्तम् ।

यथा—उपेन्द्रेति । उपेन्द्र=हे कृष्ण ! सुरद्रुमूले=देवतरुतले । मणिमण्डपस्थं—मणीनां-रत्नानां मण्डपे तिष्ठतीति तत्-रत्नमण्डपे विराजमानम् । विभूषणानाम् = अलङ्काराणाम् । वज्रादिमणिच्छटाभिः=वज्रादिरत्नकान्तिभिः । छुरितं=व्याप्तम् । गोपीभिः=गोपवनिताभिः । उपास्यमानं=सेव्यमानम् । ते=तव । वपुः=शरीरम् । स्मरामि=स्मरणं करोमि ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण–तगण–जगण तथा दो गुरु होते है वह उपेन्द्रवज्रा नामक वृत्त होता है ।

यथा—हे उपेन्द्र (कृष्ण) ! सुरपादपतले मणिमण्डप में स्थित आभूषणों की वज्रादिमणि की कान्ति से व्याप्त, गोपियों द्वारा सेव्यमान तुम्हारे शरीर का मैं स्मरण करता हूँ ।

ज त ज ग ग त त ज ग ग
। S । S S । । S । S S S S । S S । । S । S S

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ, पादौ यदीयावुपजातयस्ताः ।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु, वदन्ति जातिष्विदमेव नाम ॥३॥

यथा ममाच्युतचरिते—

(क) काचिन्मुरारेर्वदनारविन्दं सङ्क्रांतमालोक्य जले नवोढा ।
व्यक्तं सलज्जा परिचुम्बितुं तत्तदर्थमेवाम्भसि निर्ममज्ज ॥

(ख) मुखारविंदैर्व्रजसुन्दरीणामामोदमत्युत्कटमुद्गिरद्भिः ।
अहारि चित्तेन समं मुरारेर्हेमाम्बुजेभ्योऽपि मधुव्रतौघः ॥

(ग) तोयेषु तस्याः प्रतिबिम्बितासु व्रजाङ्गनानां नयनावलीषु ।
स्वबंधुपङ्क्तिभ्रमतोऽतिमुग्धा गोष्ठीं शफर्यो रचयाम्बभूवुः ॥

तथा गोपालशतके—

(घ) वनेषु कृत्वा सुरभिप्रचारं प्रकाममुग्धो मधुवासरेषु ।
गायन्कलं क्रीडति पद्मिनीषु मधूनि पीत्वा मधुसूदनोऽसौ ॥

एवमनयोर्नानाविधा अप्युपजातयो बोद्धव्याः ।

तथा वंशस्थबिलेन्द्रवंशयोरित्थमुदाहार्यम्—

(ङ) इत्थं रथाश्वेभनिषादिनां प्रगे गणो नृपाणामथ तोरणाद्बहिः ।
प्रस्थानकालक्षमवेशकल्पनाकृतक्षणक्षेपमुदैक्षताच्युतम् ॥इति माघे ।

व्याख्या—यदीयौ पादौ=यस्य चरणौ । अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ—अनन्तरोदीरितयोः=पूर्वोक्तयोः उपेन्द्रवज्रेन्द्रवज्रयोः लक्ष्मभाजौ लक्षणयुक्तौ स्तः । ताः उपजातयः=उपजातिसंज्ञकानि छन्दांसि भवन्ति । इत्थम्=अनेन प्रकारेण । किल=खलु । अन्यासु=अपरासु । जातिषु मिश्रितासु=द्विवृत्तलक्षणयुतासु अपि । इदम् एव नाम=उपजाति नाम एव । वदन्ति=कथयन्ति ।

यथा—(क)काचिदिति । काचित्=कापि । नवोढा=नवविवाहिता स्त्री । सलज्जा=लज्जायुक्ता । मुरारेः=श्रीकृष्णस्य । वदनारविन्दं=मुखकमलम् । जले=नीरे । संक्रान्तं=प्रतिबिम्बितम् । आलोक्य=दृष्ट्वा । तत् मुखकमलम् । व्याप्तं=प्रकाशम् । परिचुम्बितुम्=चुम्बनार्थम् । तदर्थं=तन्निमित्तम् एव अम्भसि=पयसि । निर्ममज्ज=निमग्ना अभूत् ।

(ख) मुखारविन्दैरिति । अत्युत्कटम्=महत्तीव्रम् । आमोदम्=सुरभिम् । उद्गिरद्भिः=निःसारयद्भिः । व्रजसुन्दरीणाम्=व्रजरमणीनाम् । मुखारविन्दैः=मुखकमलैः । हेमाम्बुजेभ्यः—हेमस्य=स्वर्णस्य अम्बुजेभ्यः=कमलेभ्यः अपि । मधुव्रतौघः=भ्रमरवृन्दम् । मुरारेः=श्रीकृष्णस्य । चित्तेन=चेतसा समं=सह । अहारि=आकृष्टः ।

(ग) तोयेष्विति । अतिमुग्धाः=अतिसुन्दर्यः, अतिमूढाश्च । (मुग्धस्तु सुन्दरे मूढे । इतिकोषः) । शफर्यः=मत्स्यविशेषाः । तस्याः=कालिंद्याः । तोयेषु=नीरेषु । प्रतिबिम्बितासु=प्रतिबिम्बत्वं गतासु । नयनावलीषु=नयनपंक्तिषु । स्वबन्धुभ्रमतः=स्वजातिभ्रमवशात् । गोष्ठीं=सभाम् । रचयाम्बभूवुः=रचयामासुः ।

तथा गोपालशतके=तन्नामग्रन्थे—

(घ) वनेष्विति । प्रकाममुग्धः=अतिसुन्दरः, मूर्खश्च । मधुसूदनः=माधवः, मधुपश्च । मधुवासरेषु=वसन्तदिनेषु । (मधु दैत्ये मधुश्चित्रे वसन्तु मधुरुच्यते । इति कोषः) । वनेषु=काननेषु, जलेषु च । सुरभिप्रचारं=गोचारणम्, वसन्तप्रचारञ्च । कृत्वा=सम्पाद्य । मधूनि=मधुरसान्, अधरामृतानि वा । पीत्वा=पानं कृत्वा । कलम्=मधुरम् । गायन्=गुञ्जन् । पद्मिनीषु=तन्नामनायिकाविशेषेषु, कमलिनीषु वा । क्रीडति=क्रीडां करोति ।

(ङ) इत्थमिति । इत्थम्=एवम् । प्रगे=प्रभाते । रथाश्वेभनिषादिनां=स्यन्दनवाजिगजारोहिणाम् । नृपाणां=नृपतीनाम् । गणः=समुदायः । तोरणात्=बहिर्द्वारात् । बहिः=बाह्यभागे । प्रस्थानकाले=गमनवेलायाम् । क्षमः=समर्थः यो वेशः=नेपथ्यम्, तस्य कल्पनया=विधानेन । कृतक्षणक्षेपं=कृतकालविलम्बम् । अच्युतं=श्रीकृष्णम् । उदैक्षत=प्रतीक्षितवान् ।

हिन्दी—जहाँ इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा दोनों छन्द मिश्रित हों वहाँ उपजाति छन्द कहलाता है ।

यथा—(क) कोई नवोढा (नवपरिणीता) मुरारि श्रीकृष्ण के मुखार-

विन्द को जल में प्रतिबिम्बित देखकर उस मुख-कमल का चुम्बन करने को उद्यत सलज्ज असमर्थ होकर जल में डुबकी लगाने लगी।

(ख) अतितीव्र सुगन्ध निकालते हुए व्रजवनिताओं के मुखारविन्द रूपी स्वर्ण-कमलों से भी भ्रमरकुल को मुरारि श्रीकृष्ण के चित्त के साथ ही हरण कर लिया।

(ग) अतिसुन्दर (अतिमूढ) शफरी मछलियाँ यमुना के जल में प्रतिबिम्बित नेत्रपंक्तियों में अपनी जाति की भ्रान्ति से गोष्ठी करने लगीं (इकट्ठी होने लगीं)।

(घ) अतिसुन्दर (मूर्ख) श्रीकृष्ण (भ्रमर) वसन्त के दिनों में वनों में (जल में) गायें चराकर (सुगन्धि फैलाकर) मधुपान कर (अधरामृत पान कर) मधुर गान करते हुए (गुञ्जारव करते हुए) पद्मिनियों (विशेष-नायिकाओं – कमलिनियों) में विहार करते हैं।

(ङ) इस प्रकार प्रातःकाल रथ, घोड़ा तथा हाथियों पर सवार भूपतियों का समूह बहिर्द्वार से बाहर प्रस्थान करते समय योग्य (उचित) वेषभूषा बनाने में विलम्ब करते हुए अच्युत श्रीकृष्ण जी की प्रतीक्षा करने लगा।

न　ज　ज　ल　ग

।।।।ऽ।।ऽ।।ऽ

नजजलगैर्गदिता सुमुखी ॥४॥

तरणिसुतातटकुञ्जगृहे वदनविधुस्मितदीधितिभिः।
तिमिरमुदस्य वृतं सुमुखी हरिमवलोक्य जहास चिरम् ॥

व्याख्या—यत्रैकपादे क्रमशः नगणः द्वौ जगणौ लघुः गुरुश्च भवन्ति तत् सुमुखीवृत्तम्।

यथा—सुमुखी=काचित्सुवदना। तरणिसुतातटकुञ्जगृहे—तरणिसुतायाः=कालिन्द्याः तटस्य=कूलस्य, कुञ्जगृहे=लताभवने। वदनविधुस्मित-दीधितिभिः—वदनविधोः=मुखचन्द्रस्य स्मितदीधितिभिः=मन्दहासकिरणैः। तिमिरम्=अन्धकारम् उदस्य=प्रक्षिप्य। व्रतम्=गुप्तम्। कृष्णं=माधवम्। अवलोक्य=दृष्ट्वा। चिरम्=बहुकालपर्यन्तम्। जहास=विहसितवती।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण-जगण-जगण लघु तथा गुरु होते हैं वह सुमुखी नामक छन्द होता है।

यथा—कोई सुवदना गोपी यमुना तट के कुञ्जगृह में मुखचन्द्र के मन्द हास रूपी किरणों से वहाँ के अन्धकार को दूर कर छिपे हुए श्रीकृष्ण को देखकर बहुत देर तक हँसती रही।

म　त　त　ग　ग

ऽऽऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः ॥५॥

अहो हन्ति ज्ञानवृद्धिं विधत्ते धर्मं दत्ते काममर्थं च सूते।
मुक्तिं दत्ते सर्वदोपास्यमाना पुंसां श्रद्धाशालिनी विष्णुभक्तिः ॥

व्याख्या यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः द्वौ तगणौ द्वौ गुरू च भवन्ति तच्छालिनीनाम वृत्तं भवति।

यथा—श्रद्धाशालिनी—श्रद्धाशीलं यस्यास्तादृशी=विश्वासयुक्ता। विष्णुभक्तिः=कृष्णप्रेम। सर्वदा=सदा। उपास्यमाना=सेव्यमाना सती। पुंसां=मानवानाम्। अहं=अघम्। हन्ति=नाशयति। ज्ञानवृद्धिं=ज्ञानातिशयम्। विधत्ते=करोति। धर्मं=पुण्यम्। दत्ते=ददाति। कामम्=इच्छितम्। अर्थम्=वित्तम्। च सूते=उत्पादयति। अतः श्रीकृष्णभक्तिः सदा करणीया।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण-तगण-तगण तथा दो गुरु होते हैं वह शालिनी नामक छन्द होता है।

यथा—श्रद्धाशालिनी श्रीकृष्णभक्ति सदा की जाती हुई, मनुष्यों के पाप को नष्ट करती, ज्ञान की वृद्धि करती तथा पुण्य को वितरित करती है। वह वांछित धनार्जन करती है। (अतः श्रीकृष्ण-भक्ति सदैव करनी चाहिए।)

म　भ　त　ग　ग

ऽऽऽऽ।।ऽऽ।ऽऽ

वातोर्मीयं गदिता म्भौ तगौ गः ॥६॥

ध्याता मूर्तिः क्षणमप्यच्युतस्य श्रेणी नाम्नां गदिता हेलयापि।
संसारेऽस्मिन् दुरितं हन्ति पुंसां वातोर्मी पोतमिवाम्भोधिमध्ये ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकचरणे क्रमशः मगणः भगणः तगणः द्वौ गुरू च भवन्ति तद् वातोर्मिनाम वृत्तं भवति।

यथा—अच्युतस्य=माधवस्य। मूर्तिः=प्रतिमा। क्षणमपि=निमिषमपि। ध्याता=कृतावधाना। सती। नाम्नां श्रेणी=कृष्णादिनामसमुदायः। हेलया=क्रीडया अनिच्छया वा। गदिता=कथिता। अस्मिन् संसारे=लोकेऽस्मिन्। पुंसां=मानवानाम्। दुरितम्=कलुषम्। वातोर्मी=पवनजाततरङ्गः। अम्भोधिमध्ये=सागरान्तरे। पोतम्=यानम्। इव=यथा। हन्ति=विनाशयति।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण-भगण-तगण तथा दो गुरु होते हैं वह वातोर्मि छन्द कहलाता है।

यथा—अच्युत श्रीकृष्ण की प्रतिमा क्षण-भर को भी ध्यान करते ही कृष्ण आदि विभिन्न नामों का समुदाय अनिच्छा से भी कहे जाते हुए, इस संसार में मनुष्यों के पापों को पवन से उत्पन्न हुई लहरें जैसे समुद्र में जहाज को नष्ट कर देती हैं, तथैव नष्ट कर देता है।

म ग न न ग

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ

मो गो नौ गो भ्रमरविलसिता ॥७॥

मुग्धे ! मानं परिहर नचिरात्तारुण्यं ते सफलयतु हरिः।
फुल्ला वल्ली भ्रमरविलसिताभावे शोभां कलयति किमु ताम् ?

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः एकः गुरुः, द्वौ नगणौ एकः गुरुश्च भवन्ति तत्र भ्रमरविलसितावृत्तं भवति।

यथा—मुग्धे=हे सुन्दरि ! मानम्=अहंकारम्। परिहर=परित्यज। हरिः=श्रीकृष्णः। ते=तव। तारुण्यं=यौवनम्। नचिरात्=अचिरात्, झटिति इत्यर्थः। सफलयतु=सफलतां करोतु। फुल्ला=विकचिता। वल्ली=लता। भ्रमरविलासिताभावे=अलिलास्यविरहे। तां=तथाविधां। शोभाम्=श्रियम्। कलयति। किमु ? अर्थात् नैव धारयति।

हिंदी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण एक गुरु, दो नगण तथा एक गुरु होते हैं वहाँ भ्रमर-विलसिता संज्ञक छन्द होता है।

यथा—हे सुन्दरि ! अभिमान छोड़ दे। श्रीकृष्ण भगवान् तुम्हारे यौवन

को शीघ्र ही सफल करें। जैसे प्रफुल्लिता लता भौरों की शोभा के अभाव में क्या वास्तविक शोभा पा जाती है ? अर्थात् नहीं।

भ त न ग ग

ऽ । । ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ

स्यादनुकूला भतनगगाश्चेत् ॥ ८ ॥

वल्लववेशा मुररिपुमूर्तिर्गोपमृगाक्षीकृतरतिपूर्तिः।
वाञ्छितसिद्ध्यै प्रणतिपरस्य स्यादनुकूला जगति न कस्य ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः भगणः तगणः नगणः द्वौ गुरू च भवन्ति तद् अनुकूलानामवृत्तं भवति।

यथा—वल्लववेशा=गोपालवेशा। गोपमृगाक्षीकृतरतिपूर्तिः—गोपमृगाक्षीभिः=गोपहरिणनेत्रीभिः कृता=विहिता रतिपूर्तिः=प्रेमपूर्तिः यस्याः सा। मुररिपुमूर्तिः=मुरारिश्रीकृष्णस्य प्रतिमा। जगति=संसारे। प्रणतिपरस्य=नम्रतायुक्तस्य। कस्य=कस्य नरस्य। वाञ्छितसिद्ध्यै=अभीप्सितप्राप्त्यै। अनुकूला=सहायकरा। न स्यात्=न भवेत्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः भगण—तगण—नगण तथा दो गुरु होते हैं वह अनकूला वृत्त कहलाता है।

यथा—गोपाल-वेशवाली, मृगनयनी ग्वालिनियों के द्वारा रति-पूर्ति की गई मुरारि श्रीकृष्ण जी की मूर्ति संसार में किस विनम्र पुरुष की वांछासिद्धि के लिए अनुकूल नहीं हो सकती है ? अर्थात् नम्रभक्तों को वांछित-सिद्धि अवश्य प्रदान करती है।

र न र लग

ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

रात्परैर्नरलगै रथोद्धता ॥ ९ ॥

राधिका दधिविलोडनस्थिता कृष्णवेणुनिनदैरथोद्धता।
यामुनं तटनिकुञ्जमञ्जसा सा जगाम सलिलाहृतिच्छलात् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः रगणः नगणः रगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तद् रथोद्धतासंज्ञं वृत्तं भवति।

म म य य
SSS S S S।SS।S S

बाणाश्वैश्छिन्ना वैश्वदेवी ममौ यौ ॥ ८ ॥

अर्चामन्येषां त्वं विहायाऽमराणामद्वैतेनैकं विष्णुमभ्यर्च भक्त्या।
तत्राशेषात्मन्यर्चिते भाविनी ते भ्रातः ! सम्पन्नाराधना वैश्वदेवी ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः द्वौ मगणौ द्वौ यगणौ च भवतः तद् वैश्वदेवीनाम वृत्तम्।

यथा—हे भ्रातः=बन्धो। त्वम् अन्येषाम्=अपराणाम्। अमराणाम्=देवानाम् (अमरा निर्जरादेवास्त्रिदशा विबुधाः सुराः। इत्यमरः)। अर्चाम्=पूजाम्। विहाय=परित्यज्य। अद्वैतेन—'एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म' इतिश्रुत्या=एकज्ञानेन। भक्त्या=अनुरागेण। एकं=केवलम्। कृष्णं=माधवम्। अभ्यर्च=पूजां विधेहि। अशेषात्मनि=विश्वरूपे। तत्र=तस्मिन् कृष्णे। अर्चिते=पूजिते ! ते=तव। वैश्वदेवी=सुरसंहतिः। सम्पन्नाराधना=कृता पूजा। भाविनी=भविष्यति।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो मगण तथा दो यगण हों वह **वैश्वदेवी** छन्द होता है।

यथा—कोई भक्त दूसरे भक्त से कहता है—

हे भाई ! तुम दूसरे देवताओं की पूजा छोड़कर अद्वैत भक्ति से केवल कृष्ण जी का पूजन करो। विश्वरूप उन कृष्णजी की पूजा करने पर तुम्हारी सभी देवों की पूजा हो जायेगी।

स ज स स
।।S।S ।।।S ।।S

प्रमिताक्षरा सजससैः कथिता ॥ ९ ॥

(क) अमृतस्य शीकरमिवोद्गिरती रदमौक्तिकांशुलहरीच्छुरिता।
प्रमिताक्षरा मुररिपोर्भणितिर्व्रजसुभ्रुवामधिजहार मनः।
(ख) प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ विफलत्वमेति बहुसाधनता।
अवलम्बनाय दिनभर्तुरभून्न पतिष्यतः करसहस्रमपि ॥
इति माघः।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः सगणः जगणः सगणः सगणश्च भवन्ति तत् प्रमिताक्षरावृत्तम्।

यथा—(क) अमृतस्य=सुधायाः। शीकरं=कणम्। उद्गिरती=वमती, विकिरन्ती वा। रदमौक्तिकानां=दन्तमुक्तानाम्। अंशुलहरी तस्या जालेन छुरिता=व्याप्ता। प्रमिताक्षरा=अल्पवर्णा। मुररिपोः=मुरारेः। भणतिः=कथनम्। व्रजसुभ्रुवां=व्रजसुन्दरीणाम्। मनः=चेतः। अधिजहार=अपहृतवती।

यथा—(ख) विधौ=दैवे इन्दौ च, प्रतिकूलतां=प्रतीपताम्, उपगते=प्राप्ते सति, बहुसाधनता=बहुकर्तव्यता, विफलत्वं=व्यर्थताम्, एति=प्राप्नोति। भाग्ये विरुद्धे सर्वं कृत्यजातं व्यर्थमेव भवतीत्यर्थः। पतिष्यतः=पतनोन्मुखस्य, दिनभर्तुः=भानोः, करसहस्रमपि=किरणसहस्रमपि पाणिसहस्रमपि च, अवलम्बनाय=साहाय्याय, न अभूत्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः सगण, जगण तथा दो सगण होते हैं वह **प्रमिताक्षरा** छन्द कहलाता है।

यथा—(क) अमृतरस-बिन्दु बिखेरती हुई दन्त-मौक्तिकों की किरणलहरी के जाल से व्याप्त अल्प अक्षरों वाली मुरारि श्रीकृष्ण की उक्ति ने व्रजसुन्दरियों का मन आकर्षित कर लिया।

(ख) यथा—भाग्य के (चन्द्रमा के) विपरीत होने पर बहुत उपाय आदि सब व्यर्थ ही होता है। सूर्यास्त के समय सूर्य के सहस्रों कर (किरण, हस्त) रोकने में समर्थ नहीं हुए।

न भ भ र
।।।S।।S। ।S ।S

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ ॥ १० ॥

तरणिजापुलिने नवबल्लवीपरिषदा सह केलिकुतूहलात्।
द्रुतविलम्बितचारुविहारिणं हरिमहं हृदयेन सदा वहे ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् चरणे नगणः भगणः भगणः रगणश्च भवन्ति तद् द्रुतविलम्बितं वृत्तं कथ्यते।

यथा—तरणिजापुलिने—तरणिजायाः=यमुनायाः पुलिने=तटे। नव-

बल्लकीपरिषदा=गोपिकायुवतिवृन्देन। सह=साकम्। केलिकुतूहलात्=क्रीडाकौतुकात्। द्रुतविलम्बितचारुविहारिणम्=त्वरितमन्दगमनाभ्याम् मनोरमनृत्यपरम्। हरिम्=माधवम्। अहम् हृदयेन=चेतसा। सदा=सर्वदा। वहे=धारयामि, स्मरणं करोमि।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, दो भगण तथा रगण हो वह द्रुतविलम्बित छन्द कहलाता है।

यथा—यमुना तट पर तरुण गोपीवृन्द के साथ खेल की इच्छा से तेज तथा मन्थर चालों से मनोज्ञनृत्य करने वाले श्रीकृष्णजी का मैं हृदय से ध्यान करता हूँ।

न न र र

। । । । । । S । S S । S

ननररघटिता तु मन्दाकिनी ॥ ११ ॥

(क) बलिदमनविधौ बभौ सङ्गता पदजलरुहि यस्य मन्दाकिनी।
सुरनिहितसिताम्बुजस्रङ्निभा हरतु जगदघं स पीताम्बरः॥

(ख) सहशरधिनिजं तथा कार्मुकं वपुरतनु तथैव संवर्मितम्।
निहितमपि तथैव पश्यन्नसिं वृषभगतिरुपाययौ विस्मयम्॥

इति भारविः।

(ग) अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रियामतनुतरतयेव सन्तानकः।
तरुणपाभृतः स्वनं रागिणामतनुत रतये वसन्तानकः॥

इति माघः।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे द्वौ नगणौ द्वौ रगणौ च भवतः तद् मन्दाकिनीवृत्तम्।

यथा—(क) मन्दाकिनी=भागीरथी। बलिदमनविधौ=वलिबन्धनकर्मणि यस्य=कृष्णस्य। पदजलरुहि=पादपद्मे। संगता=संयुक्ता सती। सुरनिहिता=अमरगणदत्ता या सिताम्बुजस्रङ्निभा=श्वेतकमलहारसदृशी। बभौ=शुशुभे। सः=असौ। पीताम्बरः=कृष्णः। जगदघं—जगतः=संसारस्याघं=पापम्। हरतु=नाशयतु।

(ख) वृषभगतिः=वृष इव मन्दगामी। सः=अर्जुनः। सहशरधिनिज=सतूणीरं स्वकम्। कार्मुकं=गाण्डीवं धनुः। तथैव=पूर्ववत्। संवर्मितम्=कवचयुक्तम्। अतनु=अक्षीणम्, महत्। वपुः=शरीरम्। निहितम्=स्थापितम्। असिं=करवालम् अपि। तथैव=पूर्ववत्। पश्यन्=अवलोकयन्। विस्मयम्=आश्चर्यम्। उपाययौ=आगच्छत्, समाप।

(ग) अतिसुरभिः=महत्सुगन्धयुतः। सन्तानकः=कल्पपादपः। पुष्पश्रियां=कुसुमसम्पदाम्। अतनुतरतया=बहुलतया। अभाजि=त्रुटितः इव। एवं वसन्तानकः—वसन्तस्य=मधुऋतोः आनकः=दुन्दुभिरूपः। तरुणपरभृतः=तरुणकोकिलः। रागिणां=प्रेमिजनानाम्। रतये=अनुरत्यै। स्वनं=शब्दं। कूजनम्। अतनुत=कृतवान्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो नगण तथा दो रगण हों वह मन्दाकिनी छन्द कहलाता है।

यथा—(क) गङ्गा बलि के बन्धनकर्म में जिन कृष्ण (विष्णु) के चरण कमल में होती हुई देवताओं द्वारा प्रदत्त श्वेतकमल-हार जैसी शोभित हुई वह पीताम्बर श्रीकृष्ण संसार के पाप का नाश करें।

(ख) बैल-सदृश मन्दगति वाले अर्जुन तरकस सहित अपने गांडीव धनुष तथा कवच-युक्त भारी शरीर को स्थिर कर खड्ग को भी पूर्ववत् देखते हुए आश्चर्य करने लगे।

(ग) अति सुगन्धयुक्त कल्पवृक्ष फूलों की शोभा की अधिकता के कारण टूट-सा गया। अर्थात् बहुत नीचे झुक गया। इस प्रकार वसन्त की नगाड़े रूपी तरुण कोयल अनुरागियों की रति के लिए कूकने लगी।

न य न य

। । । । S S । । । । S S

नयसहितौ न्यौ कुसुमविचित्रा ॥ १२ ॥

विपिनविहारे कुसुमविचित्रा कुतुकितगोपीमहितचरित्रा।
मुररिपुमूर्तिर्मुखरितवंशा चिरमवताद्वस्तरलवतंसा॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः यगणः नगणः यगणश्च भवन्ति तत्कुसुमविचित्रानाम वृत्तम्॥ १२॥

यथा—विपिनविहारे=क्रीडावने विचरणे। कुसुमविचित्रा—कुसुमैः=पुष्पैः विचित्रा=अलंकृता। कुतुकितगोपीमहितचरित्रा—कुतुकितगोपीभिः=उत्सुकगोपवनिताभिः महितचरित्रा=पूजिताचरणा। मुखरितवंशा=मुखरितः वंशः यया तथाविधा=वादितमुरलिका। तरलवतंसा=लोलकर्णभूषणा। मुररिपुमूर्तिः—मुररिपोः=मुरारेः श्रीकृष्णस्य मूर्तिः=शरीरम्। चिरम्=बहुकालं यावत्। वः=युष्मान्। अवतात्=पातु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में नगण, यगण, नगण, यगण क्रमशः हों वह कुसुमविचित्रा वृत्त होता है।

यथा—विपिन-विहार के समय पर पुष्पों से अलंकृत उत्कण्ठित गोपियों द्वारा उत्तम चरित्र वाली बांसुरी बजाने वाली, चञ्चल कर्णाभूषण धारण किये मुरारि श्रीकृष्ण जी की मूर्ति चिरकाल तक आप सबकी रक्षा करे।

न ज ज य

। । । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

इह वद तामरसं नजजा यः॥ १३॥

स्फुटसुषमामकरन्दमनोज्ञं व्रजललनानयनालिनिपीतम्।
तव मुखतामरसं मुरशत्रो! हृदयतडागविकाशि ममास्तु॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः जगण. जगणः यगणश्च भवन्ति तत् तामरसं नाम वृत्तम्।

यथा—हे मुरशत्रो=हे मुरारे कृष्ण! स्फुटसुषमामकरन्दमनोज्ञं—स्फुटसुषमा=स्पष्टकान्तिरेव मकरन्दः=पुष्परसः तेन मनोज्ञं=मनोरमम्। व्रजललनानयनालिनिपीतम्—व्रजललनानां=व्रजाङ्गनानां नयनालिभिः=नेत्रमधुपैः निपीतं=पीतम्। तव=ते। मुखतामरसं=मुखकमलम् (पङ्केरुहं तामरसं सारसं सरसीरुहम्। इत्यमरः)। मम=मे। हृदयतडागविकाशि—हृदयतडागस्य—हृदयं=चेतः एव तडागमिव तस्मिन् विकाशि=शोभायमानम्। अस्तु=भवतु।

हिन्दी—जिस छन्द के एक चरण में नगण, दो जगण तथा यगण होते हैं वह तामरस छन्द कहलाता है।

यथा—हे मुरारे कृष्ण! स्पष्ट कान्ति रूपी मधुरस से मनोरम, व्रजांगनाओं के नयन रूपी भ्रमरों से पान किया गया (अवलोकित) तुम्हारा मुखकमल मेरे हृदय रूपी तडाग को विकसित करे।

न ज ज र

। । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

भवति नजावथ मालती जरौ॥ १४॥

(क) इह कलयाऽच्युत केलिकानने मधुरससौरभसारलोलुपः।
कुसुमकृतस्मितचारुविभ्रमामलिरपि चुम्बति मालतीं मुहुः॥

(ख) अयि विजहीहि दृढोपगूहनं त्यज नवसङ्गमभीरु! वल्लभम्।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते वरतनु! सम्प्रवदन्ति कुक्कुटाः॥

इति भारविः।

व्याख्या—यस्याः एकपादे नगणः द्वौ जगणौ रगणश्च भवन्ति सा मालती।

यथा—(क) अच्युत=हे कृष्ण! कलय=अवलोकय। केलिकानने=क्रीडावने। मधुरससौरभसारलोलुपः—मधुरसस्य=कुसुमरसस्य सौरभसारे=सुगन्धे लोलुपः=लुब्धः। अलिः=भ्रमरः। कुसुमकृतस्मितचारुविभ्रमां—कुसुमैः=पुष्पैः कृतं=विहितं स्मितम्=स्तोकहास्यमेव चारुविभ्रमः=रुचिरविलासः यस्यास्ताम्। मालतीं=माधवीं मुहुः वारंवारम्। अलिः=मधुपः अपि चुम्बति=चुम्बनं करोति।

(ख) अयि! नवसंगमभीरु=नवलसमागमकातरे! दृढोपगूहनं—दृढं=गूढम् उपगूहनम्=आलिंगनम्। विजहीहि=परित्यज। वल्लभ=प्रियतमम्। त्यज=मुञ्च। (यतः) वरतनु=शोभनशरीरे! एषः=दृष्टिगोचरः। अरुणकरोद्गमः=रविरश्मिमात्रोदयः वर्तते। कुक्कुटाः=ताम्रचूडाः। सम्प्रवदन्ति=शब्दं कुर्वन्ति।

हिन्दी—जिसके एक चरण में क्रमशः नगण, दो जगण तथा रगण हों वह मालती वृत्त होता है।

यथा—(क) हे अच्युत! देखो—क्रीडा-कानन में मधुरस की सुगन्ध का लोभी भ्रमर पुष्पों द्वारा किये गये मन्द हास रूपी मनोरम विलास वाली मालती को बारम्बार चूम रहा है।

(ख) अरी नव-संगम-कातरे ! दृढ़ आलिंगन छोड़ दे, वल्लभ का भी त्याग कर। क्योंकि हे शुभशरीरे ! यह सामने सूर्य किरणों का उदय हो रहा है। कुक्कुट बोलने लगे हैं।

त य त य

ऽ ऽ ।। ऽ ऽ ऽ ऽ ।। ऽ ऽ

त्यौ त्यौ मणिमाला छिन्ना गुहवक्त्रैः ॥ १५ ॥

प्रह्वामरमौलौ रत्नोपलक्लृप्ते जातप्रतिबिम्बा शोणा मणिमाला।
गोविन्दपदाब्जे राजी नखराणामास्तां मम चित्ते ध्वान्तं शमयन्ती।

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे क्रमशः तगणो यगणस्तगणो यगणो भवन्ति सा मणिमाला भवति।

यथा—रत्नोपलक्लृप्ते=मणिसंयुक्ते। प्रह्वामरमौलौ=अवनतसुरमौलौ। जातप्रतिबिम्बा=उत्पन्नप्रतिमूर्तिः। (अतएव) शोणा=रक्तवर्णा। मणिमाला=रत्नहारसमा। गोविन्दपदाब्जे=श्रीकृष्णपादपद्मे। नखराणां=नखानाम्। राजी=पंक्तिः। मम=मे। चित्ते=मनसि। ध्वान्तम्=तमः, अज्ञानम्। शमयन्ती=नाशयन्ती। आस्ताम्=राजताम्।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में क्रमशः तगण, यगण, तगण तथा यगण हो वह मणिमाला छन्द होता है।

यथा—मणियों से युक्त अवनत देवकिरीट पर उत्पन्न प्रतिबिम्ब वाली रक्त मणिमाला श्रीकृष्ण जी के चरण-कमल में नाखूनों की पंक्ति मेरे हृदय में अज्ञानान्धकार को नष्ट करती हुई शोभित हो रही है।

म भ स म

ऽ ऽ ऽ ऽ ।।।। ऽ ऽ ऽ ऽ

मो भः स्मौ चेज्जलधरमालाऽब्ध्यन्त्यैः ॥ १६ ॥

या भक्तानां कलिदुरितोत्तप्तानां तापच्छेदे जलधरमाला नव्या।
भव्याकारा दिनपुत्रीकूले केलीलोला हरितनुरव्यात्सा वः॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः भगणः सगणः मगणश्च भवन्ति तज्जलधरमालानाम वृत्तं भवति।

यथा—या=श्रीकृष्णमूर्तिः। कलिदुरितोत्तप्तानां—कलेः=कलिकालस्य दुरितेन=पापेन उत्तप्तानाम्=आकुलितानाम्। भक्तानां=भक्तजनानाम्। तापच्छेदे=कष्टविनाशने। नव्या=नूतना। जलधरमाला=मेघपंक्तिरिव। भव्याकारा=दिव्यरूपा। दिनकरपुत्रीकूले—दिनकरस्य=सूर्यस्य पुत्री=दुहिता यमुना तस्याः कूले=तटे। केलीलोला=क्रीडाचपला। हरितनुः=श्रीकृष्ण-शरीरम्। वः=युष्मान्। अव्यात्=पायात्।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में क्रमशः मगण, भगण, सगण तथा मगण हों वह जलधरमाला वृत्त होता है।

यथा—जो कृष्णमूर्ति कलिकाल के पापों से पीड़ित भक्तों का ताप विनाश करने में नूतन मेघमाला के समान दिव्यरूपा सूर्यपुत्री यमुना के तट पर क्रीडा-चञ्चल श्रीकृष्ण जी की देह (मूर्ति) है, वह तुम सबकी रक्षा करे।

पुस्तकान्तरेष्वस्यां वृत्तावधिकानीमानि वृत्तानि दृश्यन्ते—

न न म य

।।।।।। ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ

वसुयुगविरतिर्नौ म्यौ पुटोऽयम् ॥ १ ॥

न भ ज र

।। । ऽ ।।। ऽ । ऽ । ऽ

भुवि भवेन्नभजरैः प्रियंवदा ॥ २ ॥

त भ ज र

ऽ ऽ । ऽ ।।। ऽ । ऽ । ऽ

धीरैरभाणि ललिता तभौ जरौ ॥ ३ ॥

न न भ र

।।।।।। ऽ ।। ऽ ऽ ऽ

ननभरसहिता गदितोज्ज्वला ॥ ४ ॥

न ज भ य

।। ।। ऽ । ऽ ।।। ऽ । ऽ

इह नवमालिका नजभयैः स्यात् ॥ ५ ॥

भ म स स

ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ

पञ्चमुनी म्भौ स्यात् सयुगा ललना ॥ ६ ॥

न न म र

। । । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ

ललितमभिहितं नौ म्रौ नामतः ॥ ७ ॥

न भ न य

। । । ऽ । । । । । । ऽ ऽ

द्रुतपदं भवति नभनयाश्चेत् ॥ ८ ॥

म म म म

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

सर्वं मा यस्मिन् सोऽयं विद्याधारः स्यात् ॥ ९ ॥

ज र ज र

। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

लघुर्गुरुर्वदन्ति पञ्चचामरम् ॥ १० ॥

त त त त

ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ ।

सारङ्गसंज्ञं समस्तैस्तकारैस्तु ॥ ११ ॥

ज ज ज ज

। ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ।

समस्तजमीर य मौक्तिकदाम ॥ १२ ॥

भ भ भ भ

ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

मोटकनाम समस्त भमीरय ॥ १३ ॥

न न न न

। । । । । । । । । । । ।

रविलघु तरलनयनमिह ॥ १४ ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः द्वौ नगणौ मगणः यगणश्च भवन्ति तद् वसुयुगाविरतिः, नगणः भगणः जगणः रगणश्च तत् प्रियम्वदा, तगणः भगणः जगणः रगणश्च तत् ललिता, द्वौ नगणौ भगणः रगणश्च तत् उज्ज्वला, नगणः जगणः भगणः यगणश्च तत्नवमालिका, भगणः मगणः द्वौ सगणश्च तल्ललना, द्वौ नगणौ मगणः रगणश्च तल्ललितम्, नगणः भगणः नगणः यगणश्च तद्द्रुतपदम्, सर्वे मगणाः यत्र तद् विद्याधारः, द्वौ जगण-रगणौ क्रमशस्तत्पञ्चचामरम्, चत्वारस्तगणाः तत्सारंगम्, चत्वारः जगणास्तन्मौक्तिकदाम, चत्वारो भगणास्तन्मोटकम्, चत्वारो नगणास्तरलनयनं नाम छन्दः ॥ १–१४ ॥

(१३) अतिजगती (त्रयोदशाक्षरा वृत्तिः)।

म न ज र ग

ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

त्र्याशाभिर्मनजरगाः प्रहर्षिणीयम् ॥ १ ॥

गोपीनामधरसुधारसस्य पानैरुत्तुङ्गस्तनकलशोपगूहनैश्च।
आश्चर्यैरपि रतिविभ्रमैर्मुरारेः संसारे मतिरभवत्प्रहर्षिणीह ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः नगणः जगणः रगणः गुरुश्च भवन्ति तत्प्रहर्षिणीवृत्तम्।

यथा—इह संसारे=विश्वेऽस्मिन्। गोपीनामधरसुधारसस्य—गोपीनां गोपवनितानाम् अधरसुधारसस्य=ओष्ठामृतरसस्य। पानैः=आस्वादनैः। उत्तुङ्गस्तनकलशोपगूहनैः-उत्तुङ्गानि=उन्नतानि स्तनानि=पयोधराणि तान्येव कलशाः=घटाः तेषामुपगूहनैः=आलिङ्गनैः। आश्चर्यैः=विस्मयकारकैः। रतिविभ्रमैः=सुरतिविलासैः च। मुरारेः=मुररिपोः कृष्णस्य। प्रहर्षिणी= आनन्ददायिनी मतिः=बुद्धिः अभवत्=बभूव (मतिः स्त्रीच्छाधियौ स्मृता। इति मेदिनी)।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण, नगण, जगण, रगण, गुरु होते हैं उसको प्रहर्षिणी वृत्त कहते हैं।

यथा—इस संसार में गोपियों के अधर-सुधारस के पान करने से, उन्नत

उरोज रूपी कुम्भों के आलिंगनों से तथा अद्भुत रति-विलासों से मुरारि श्री कृष्ण की उत्कृष्ट आनन्द देने वाली बुद्धि बन गई।

ज भ स ज ग

। ऽ । ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ

जभौ सजौ गिति रुचिरा चतुर्ग्रहैः ॥ २ ॥

(क) पुनातु वो हरिरतिरासविभ्रमी परिभ्रमन् व्रजरुचिराङ्गनान्तरे।
समीरणोल्लसितलतान्तरालगो यथा मरुत्तरलतमालभूरुहः॥

(ख) अभून्नृपा विबुधसखः परन्तपः श्रुतान्वितो दशरथ इत्युदाहृतः।
गुणैर्वरं भुवनहितच्छलेन यं सनातनः पितरमुपागमत् स्वयम्॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः जगणः भगणः सगणः जगणः गुरुश्च भवन्ति तद्रुचिरा वृत्तं कथ्यते।

(क) यथा—अतिरासविभ्रमी=अतिशयरासविहारी। हरिः=श्रीकृष्णः। समीरणोल्लसितलतान्तरालगः—समीरणोल्लसितानां=पवनप्रेरितवल्लीनाम्। अन्तरालगः=अभ्यन्तरगतः। मरुत्तरलः-मरुता=पवनेन तरलः=चञ्चलः। तमालभूरुहः=तमालपादपः यथा तथा। व्रजस्य=गोकुलस्य। रुचिराङ्गनान्तरे=मनोरमवनितामध्ये। परिभ्रमन्=विचरन्। वः=युष्मान्। पुनातु=पवित्रान् करोतु।

(ख) यथा—विबुधसखः-विबुधानां=देवानाम् विदुषां च सखा=मित्रं यः सः। परन्तपः=शत्रुमर्दनः। श्रुतान्वितः=ज्ञानयुक्तः, शास्त्रज्ञः। दशरथः=दशरथनामकः। उदाहृतः=विख्यातः। नृपः=राजा। अभूत्=बभूव। सनातनः=पुरातनो नारायणः। भुवनहितच्छलेन=लोकोपकारमिषेण। गुणैः=शौर्यादिभिर्वरं=श्रेष्ठं यं राजानं स्वयम्=आत्मना। पितरं=तातम्। उपागमत्=अङ्गीकृतवान्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, भगण, सगण, जगण, गुरु हों वह रुचिरा छन्द कहलाता है।

(क) अत्यन्त रासविलासी श्रीकृष्ण पवन, प्रकम्पित लताओं के मध्यगामी पवन से चञ्चल तमाल वृक्ष वाले गोकुल की मनोहर सुन्दरियों के बीच परिभ्रमण करते हुए तुम सबको पवित्र करें।

(ख) देवताओं और विद्वानों का प्रिय, रिपुमर्दन, शास्त्रज्ञ दशरथ नाम का प्रसिद्ध राजा था। जिस धैर्यशौर्यादिगुण-युक्त नृप को स्वयं नारायण ने संसार के उपकार के लिए अपना पिता स्वीकार किया।

म त । य स ग

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ

वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम् ॥ ३ ॥

(क) लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्तं नृत्यन्नीपामोदिपयोदानिलरम्यम्।
रासक्रीडाकृष्टमना गोपवधूभिः कंसध्वंसी निर्जनवृन्दावनमाप॥

(ख) हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विषण्णस्त-
स्यान्विष्यन् वेतसगूढं प्रभवं सः।
शल्यप्रोतं वीक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रं
तापादन्तःशल्य इवासीत्क्षितिपोऽपि॥

इति रघुवंशे।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः तगणः यगणः सगणः गुरुश्च भवन्ति तन्मत्तमयूरनामच्छन्दः।

यथा—(क) गोपवधूभिः=गोपीभिः सह। रासक्रीडाकृष्टमना—रासक्रीडया आकृष्टं मनो यस्य सः=रासविलासहृतचेता। कंसध्वंसी=कंसनाशकः कृष्णः। लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्तं—लीलया=क्रीडया नृत्यतां=नृत्यं कुर्वतां मत्तमयूराणां=मदयुक्तकेकीनां ध्वनिभिः=रवैः कान्तं=रमणीयम्। नृत्यन्नीपामोदिपयोदानिलरम्यं—नृत्यन्=चलन् नीपामोदी=कदम्बपुष्पसुरभितः पयोदानिलः=मेघसंयुक्तवातः तेन रम्यं=रमणीयम्। निर्जनवृन्दावनं=जनशून्यं वृन्दावनम्। आप=लब्धवान्।

(ख) सः क्षितिपः=भूपतिर्दशरथः। इति=एवम्। क्रन्दितं=रुदितम्। आकर्ण्य=श्रुत्वा। विषण्णः=खिन्नः, किं मया कृतमिति, तस्य=क्रन्दितस्य वेतसगूढं=वेत्रप्रच्छन्नम्। प्रभवम्=कारणम्। अन्विष्यन्=गवेषयन्। शल्यप्रोतं-शल्येन=बाणेन प्रोतं=विद्धम्। सकुम्भं—कुम्भेन सहितं=सघटम्। मुनिपुत्रं=ऋषिसुतं। वीक्ष्य=अवलोक्य। तापात्=दुःखात्। अन्तःशल्य इव=शरविद्धो यथा। आसीत्=अभूत्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, तगण, यगण, सगण तथा गुरु हों वह मत्तमयूर छन्द होता है ।

यथा—(क) गोपियों के साथ रासविलास से आकृष्ट मन वाले, कंसनाशक श्रीकृष्ण लीला से नृत्य करते हुए मत्तमयूरों की ध्वनि से मनोरम, चल रहे कदम्ब कुसुम सुगन्धित मेघपवन से रमणीक निर्जन वृन्दावन को पहुँचे ।

(ख) भूपति दशरथ इस प्रकार रुदन सुनकर दुःखी–'मैंने क्या कर डाला' यह कहते हुए उस रोने को बेतों के छिपे होने का कारण खोजते हुए बाण से विंधे घड़े सहित मुनिकुमार को देखकर इस प्रकार दुःखी हुए जैसे उन्हीं का बाण लगा हो ।

न न स स ग

। । । । । । । । S । S S

नयुगलसयुगलगैरिति चण्डी ॥ ४ ॥

जयति दितिजरिपुताण्डवलीला कुपितकवलकरकालियमौलौ ।
चरणकमलयुगचापलचण्डी पदनखरुचिजितभोगमणिश्रीः ॥

व्याख्या—यस्याः एकचरणे क्रमशः द्वौ नगणौ, द्वौ सगणौ गुरुश्च भवन्ति तच्चण्डीवृत्तम् ।

यथा—कुपितकवलकरकालियमौलौ—कुपितस्य=क्रुद्धस्य कवलकरस्य ग्रासं कुर्वतः कालियस्य=कालियनागस्य मौलौ=शिरसि । पदनखरुचिभिः=चरणनखकान्तिभिः । जितभोगमणिश्रीः—जिता=तिरस्कृता भोगमणेः=सर्परत्नस्य रुचिः यस्याः तथाविधा । चरणकमलयुगचापलचण्डी—चरणकमलयुगस्य=पादद्वयुगलस्य चापलेन=चपलतया चण्डी=भयङ्करा । दितिजरिपुताण्डवलीला—दितिजानां=दैत्यानां रिपुः=अरिः श्रीकृष्णः, तस्य ताण्डवलीला=उद्धतनृत्यक्रीडा । जयति=सर्वोत्कृष्टा भवति ।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में क्रमशः दो नगण, दो सगण तथा एक गुरु हो वह चण्डी वृत्त कहलाता है ।

यथा—क्रुद्ध कवल बनाते हुये कालियनाग के शिर पर चरण कमल की कान्ति सेनागमणि की शोभा को तिरस्कृत करती हुई, चरणकमल युगल की चपलता केकारण भयानक दैत्यारि श्रीकृष्ण की ताण्डव क्रीड़ा सर्वोत्कृष्ट होती है ।

स ज स ज ग

। । S । S । । । S । S । S

सजसा जगौ च यदि मञ्जुभाषिणी ॥ ५ ॥

अमृतोर्मिशीतलकरेण लालयंस्तनुकान्तिचोरितविलोचनो हरे ! ।
नियतं कलानिधिरसीति वल्लवी मुदमच्युते व्यधित मञ्जुभाषिणी ।

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे क्रमशः सगणः जगणः सगणः जगण गुरुश्च भवन्ति तन्मञ्जुभाषिणीवृत्तम् ॥५॥

यथा—हरे=हे माधव । तनुकान्तिचोरितविलोचनः–तनुकान्त्या=शरीरद्युत्या चोरितविलोचनः—चोरिते=आकृष्टे विलोचने=नयने यस्य तथाविधः । हरिः=कृष्णः । अमृतोर्मिशीतलकरेण=सुधारश्मिशीतलहस्तेन । लालयन्=लालनं कुर्वन् । नियतं=निश्चितरूपेण । कलानिधिः=विधुः असि । इति=एवं मञ्जुभाषिणी=मृदुवादिनी । वल्लवी=गोपिका । अच्युते=कृष्णे मुदम्=आमोदम् । व्यधित=चकार ।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण तथा गुरु हों वह मञ्जुभाषिणी छन्द होता है ॥५॥

यथा—हे माधव ! शरीरकान्ति से नयनों को आकृष्ट करने वाले श्री कृष्ण जी सुधारश्मि से शीतल हाथों से सहलाते हुए निश्चित रूप से चन्द्रमा हो । इस प्रकार मृदुवादिनी गोपी ने श्रीकृष्णजी में प्रसन्नता उत्पन्न की ।

न न त त ग

। । । । । । S S । S S । S

ननततगुरुभिश्चन्द्रिकाश्वर्तुभिः ॥ ६ ॥

(क) शरदमृतरुचश्चन्द्रिकाक्षालिते दिनकरतनयातीरदेशे हरिः ।
विहरति रभसाद्वल्लवीभिः समं त्रिदिवयुवतिभिः कोऽपि देवो यथा ॥

(ख) इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः सततमसुतरं वर्णयन्त्यन्तरम् ।-
अमुमतिविपिनं वेद दिग्व्यापिनं पुरुषमिव परं पद्मयोनिः परम् ॥

व्याख्या—अत्र एकस्मिन् पादे द्वौ नगणौ गुरुश्च भवन्ति तच्चन्द्रिकानामवृत्तम् ॥६॥

यथा—(क) हरिः=कृष्णः। शरदमृतरुचः—शरदः=शरत्कालस्य अमृतरुचः= चन्द्रमसः। चन्द्रिकाभिः=कौमुदीभिः। क्षालिते=प्रक्षालिते। अन्धकारेऽपहृते दिनकरतनयातीरदेशे—दिनकरतनयायाः=यमुनायाः तीरदेशे=तटभागे। वल्लवीभिः=गोपिसाभि समं=साकम्। त्रिदिवयुवतिभिः==सुरतरुणीभिः अप्सराभिरित्याशयः। सह। कोऽपि=कश्चिद् देवः=अमरः इव=यथा। रभसात्= हर्षात्। विहरति=विचरति।

(ख) इह=अत्र पर्वते। असुतरं==दुर्गमं, दुर्ज्ञेयं वा। अन्तरं=मध्यम्। पक्षे तत्त्वम्। दुरधिगमैः=दुरारोहैः दुर्ज्ञेयैः। अगमैः=पादपैः अन्यत्र आगमशास्त्रैः। किञ्चिदेव=किमप्येव। सततं==निरन्तरम्। वर्णयन्ति=कथयन्ति बुधाः इति। किञ्च अतिविपिनं=महद्गहनम्। दिग्व्यापिनं=दिग्वर्तिनम्। अमुं=पर्वतम्। परं पुरुषम् इव=ईश्वरमिव। परं=केवलम्। पद्मयोनिः= विधाता एव वेद=वेत्ति नान्यो जनः।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में दो नगण दो तगण तथा गुरु हो वह चन्द्रिका छन्द होता है।

यथा—(क) श्रीकृष्ण जी शरत्कालीन चन्द्रमा की ज्योत्स्ना से धौत अन्धकार-रहित यमुना तट पर गोपिकाओं के साथ अप्सराओं के साथ किसी देवता के समान सहर्ष विहार करते हैं।

(ख) इस पर्वत पर दुर्गम (दुर्ज्ञेय) मध्य भाग (तत्त्व) को दुरारोह (दुर्बोध्य) वृक्षों (आगमशास्त्रों) से कुछ ही विद्वान् निरन्तर वर्णन करते हैं। किन्तु अतिगहन दिग्व्यापी इस पर्वत को परमात्मा के समान केवल ब्रह्मा ही जानते हैं।

स ज स स ग

। । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ ऽ

सजसा सगौ च कथितः कलहंसः ॥ ७ ॥

यमुनाविहारकुतुके कलहंसो व्रजकामिनीकमलिनीकृतकेलिः।
जनचित्तहारिकलकण्ठनिनादः प्रमदं तनोतु तव नन्दतनूजः ॥
सिंहनादः क्वापि।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः सगणः जगणः द्वौ सगणौ गुरुश्च भवन्ति तत् कलहंसनामवृत्तम् ॥७॥

यथा—यमुनाविहारकुतुके—यमुनायां विहारकुतुके=क्रीडाविहारे। व्रजकामिन्यः=व्रजयुवत्यः एव कमलिन्यः=पद्मिन्यः, तासु कृतकेलिः= विहितक्रीडः जनचित्तहारी=लोकमनोमुग्धकारी यः कलकण्ठनिनादः=मधुरकण्ठध्वनिः कलहंसः=हंसविशेषरूपः श्रीकृष्णः। नन्दतनूजः=माधवः। तव= ते। प्रमदं=आमोदं। तनोतु=प्रसारयतु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में सगण, जगण, दो सगण तथा गुरु होते हैं वह कलहंस नामक छन्द होता है।

यथा—यमुना तट पर विहार-कौतुक में व्रज-युवतियों रूपी कमलिनियों में क्रीडा करने वाले, व्रजजनों का चित्त आकृष्ट करने वाले कलकण्ठ ध्वनिवाले कलहंस के समान नन्दनन्दन श्रीकृष्ण जी तुम्हारे आनन्द का विस्तार करें।

स ज स ज ग

। । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

सजसा जगौ च भवति प्रबोधिता ॥ ८ ॥

शयिता मृषा चटुलमाननिद्रया रतिकेलिकुञ्जनिलये विलासिनी।
मुरवैरिणा श्रवणखर्जनादिना स्मितमाततान सपदि प्रबोधिता ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः सगणः जगणः सगणः जगणः गुरुश्च भवन्ति तत्प्रबोधितावृत्तम् भवति ॥ ८ ॥

यथा—मृषा=मिथ्या। चटुलमाननिद्रया=चपलप्रणयकोपनिद्रया। रतिकेलिकुञ्जे=रतिविहारलतागृहे। शयिता=सुप्ता विलासिनी=कापि गोपिका मुरवैरिणा=मुरारिणा श्रीकृष्णेन। श्रवणखर्जनादिना=कर्णकण्डूयनादिकर्मणा सपदि=शीघ्रम्। प्रबोधिता=जागरिता सती स्थितम्=मन्दहसितम्=चकार।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः सगण, जगण, सगण, जगण तथा गुरु होते हैं वह प्रबोधिता नामक छन्द कहलाता है।

यथा—झूठ मूठ चञ्चल प्रणयकोप की नींद से रतिकेलि-लतागृह में सोई हुई कोई गोपबाला मुरारि श्रीकृष्ण के द्वारा कान आदि खुजला कर-सी जगाई हुई मन्द-मन्द मुस्कराने लगी।

न ज ज र ग

। । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

भवति मृगेन्द्रमुखं नजौ जरौ गः ६ ॥

गुरुभुजवीर्यभरं हरिं मदान्धा युधि समुपेत्य न दानवा जिजीवुः ।
क्षुधितमृगेन्द्रमुखं मृगा उपेत्य क्व नु खलु बिभ्रति जीवनस्य योगम् ? ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः, जगणद्वौ, रगणः गुरुश्च भवन्ति तन्मृगेन्द्रमुखं नाम वृत्तं कथ्यते ॥ ९ ॥

यथा—मदान्धाः—मदेन=अहङ्कारे अन्धाः=मूढाः दानवाः=दैत्याः । युधि=रणे । गुरुभुजवीर्यभरं–गुरुः=महान् भुजयोः=बाह्वोः वीर्यभरः=शक्तिपूर्णः यस्य तथाविधम् । हरिं=माधवम् । समुपेत्य=समागत्य । न जिजीवुः= नहि जीवितवन्तः, मृताः इत्याशयः । मृगाः=हरिणाः अन्यवन्यपशवश्च । क्षुधितस्य=बुभुक्षोः, बुभुक्षया पर्याकुलस्येति वा । मृगेन्द्रस्य=सिंहस्य । मुखम्= आननम् । उपेत्य=गत्वा क्व नु खलु जीवनस्य=प्राणस्य । योगं=सम्बन्धम् । बिभ्रति=धारयति ।

हिन्दी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, जगण, जगण, रगण तथा गुरु होते हैं वह मृगेन्द्रमुख नामक छन्द होता है ॥ ९ ॥

यथा—मदान्ध दानव युद्ध में महान् भुजाओं के पराक्रमी माधव के समीप जाकर जीवित नहीं रह सके, जैसे हरिणादि पशु भूखे मृगेन्द्र के मुँह में पहुँच कर वास्तव में जीवित बच नहीं पाते हैं ।

इमानि वृत्तान्यधिकानि दृश्यन्ते पुस्तकान्तरेषु—

य म र र ग

। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

यमौ रौ विख्याता चञ्चरीकावली गः (१) ॥ १ ॥

न स र र ग

। । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

नसरयुगगैश्चन्द्ररेखतु लोकैः ॥ २ ॥

ज स त स ग

। ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ

उपस्थितमिदं ज्सौ त्सौ सगुरुकं चेत् ॥ ३ ॥

ज त स ज ग

। ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ

जतौ सजौ गो भवति मञ्जुहासिनी ॥ ४ ॥

य य य य ग

। ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ

इदं कन्दुकं यत्र येस्यश्चतुर्भ्यो गः ॥ ५ ॥

व्याख्या—यत्र एकस्मिन् पादे क्रमशः यगणः मगणः द्वौ रगणौ गुरुश्च भवन्ति तत् चञ्चरीकावली, नगणः सगणः द्वौ रगणौ गुरुश्च तञ्चन्द्ररेखा, जगणः सगणः तगणः सगणः गुरुच तदुपस्थितं, जगणः तगणः सगणः जगणः गुरुश्च तन् मञ्जुहासिनी, सर्वैः यगणाः गुरुश्च तत्कन्दुकं नाम वृत्तानि भवंति ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण दो रगण तथा गुरु हों तो वह चंचरीकावली, नगण सगण दो रगण तथा गुरु हों तो चन्द्ररेखा, जगण सगण तगण सगण तथा गुरु हों तो उपस्थित, जगण तगण सगण जगण तथा गुरु हों तो मञ्जुहासिनी एवम् चार यगण तथा गुरु हों तो कन्दुक नाम छन्द होते हैं ।

त भ स ज ग

ऽ ऽ । ऽ । । । । । ऽ । ऽ । ऽ

एते क्रमात्तभसजसंज्ञका गणा
गश्चान्ततो यदि निहितो महीपते ! ।
वेदैर्ग्रहैश्च भवति यतिश्च शोभना
नागाधिपो वदति तथा प्रभावतीम् ॥ १ ॥

इति वृत्तरत्नावल्याम् ।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः तगणः भगणः सगणः जगणः गुरुश्च भवन्ति तत्प्रभावतीनाम वृत्तम् ॥ १ ॥

उपर्युक्तं लक्षणमेवोदाहरणम् ।

यथा—महीपते=हे भूपते! यदि एते=इमे तभसजसंज्ञकाः गणाः क्रमशः भवन्ति येषामन्ते गुरुश्चैको निहितो भवति, वेदैः=चतुर्भिः ग्रहैः=नवभिश्चाक्षरैः शोभना=सुस्पष्टमुपलभ्यमाना यतिश्च स्यात्, नागाधिपः=पिंगलमुनिः तत्प्रभावतीवृत्तं वदति=कथयति ॥ १ ॥

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः, तगण, भगण, सगण, जगण और गुरु होते हैं, उस ४ थे तथा ९वें अक्षरों पर यति से शोभित होने वाले छन्द को नागाधिप पिंगल आचार्य प्रभावती नामक छन्द कहते हैं ॥ १ ॥

(१४) शर्करी (चतुर्दशाक्षरा वृत्तिः)।

म ग ग न न म

S S S S S । । । । । । S S S

मो गौ नौ मश्चेच्छरनवभिरसम्बाधा ॥ १ ॥

वीर्याग्नौ येन ज्वलति रणवशात्क्षिप्ते दैत्येन्द्रे जाता धरणिरियमसम्बाधा।
धर्मस्थित्यर्थं प्रकटिततनुसम्बन्धः साधूनां बाधां प्रशमयतु स कंसारिः ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः द्वौ गुरू द्वौ नगणौ मगणश्च भवन्ति तदसम्बाधा नाम वृत्तं भवति ॥ १ ॥

यथा—येन=माधवेन। रणवशात्=युद्धवशात्। ज्वलति=दीपिते वीर्याग्ना—वीर्यं=पराक्रममेवाग्निः=दहनः, शत्रूणां भस्मीकरणात् इति तस्मिन्। दैत्येन्द्रे=दैत्यराजे कंसे। क्षिप्ते=प्रक्षिप्ते सति, निहिते इत्याशयः। इयम्=एषा धरणिः=भूमिः। असम्बाधा=दुःखरहिता जाता। धर्मस्थित्यर्थं=धर्मरक्षा-निमित्तं प्रकटितः=प्रकाशितः तनुसम्बन्धः=शरीरपरिग्रहो येन तथाविधः स्वमा-यया=निजाविर्भूतसगुणमूर्तिः सः कंसारिः=कृष्णः साधूनां=महात्मनाम्। बाधा=दुःखम्। प्रशमयतु=शान्तं करोतु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, दो गुरु, दो नगण तथा मगण हो तो वह असम्बाधा नामक छन्द कहलाता है ॥ १ ॥

यथा—जिन श्रीकृष्ण भगवान् ने युद्ध के वश होकर प्रवृद्ध पराक्रम रूपी अग्नि में दैत्येन्द्र कंस को हुत दिया जिससे यह पृथ्वी दुःख रहित हो गई। धर्मरक्षार्थ प्रकटित शरीर सम्बन्ध वाले अपनी माया से प्रकटित सगुण मूर्ति कंसारि श्रीकृष्ण महात्माओं की पीड़ा का निवारण करें।

त भ ज ज ग ग

S S । S । । । S । । S । S S

ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः ॥ २ ॥

फुल्लं वसन्ततिलकं तिलकं वनाल्या
लीलापरं पिककुलं कलमत्र रौति।
वात्येष पुष्पसुरभिर्मलयाद्रिवातो
यातो हरिः स मथुरां विधिना हताः स्मः ॥

सिंहोद्धता क्वापि।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः तगणः भगणः द्वौ जगणौ द्वौ गुरू च भवन्ति तद् वसन्ततिलकं नाम वृत्तं कथ्यते ॥ २ ॥

वसन्ततिलका, उद्धर्षिणी, मधुमाधवी, सिंहोन्नताऽप्यस्यैव नामान्तरं छन्द-शास्त्रप्रवर्तकैरन्यैः प्राक्तनैराचार्यैरुक्तम्। तदुक्तं वृत्तरत्नाकरे—

उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः
सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकाश्यपेन।
उद्धर्षिणीति गदिता मुनिसैतवेन
रामेण सेयमुदिता मधुमाधवीति ॥

यथा—वनाल्याः=वनमालायाः इव तिलकं=विशेषकरूपम्। वसन्ततिलकं—वसन्तस्य=वसन्तऋतोः, तिलकं=तिलपुष्पम्। फुल्लं=विकसितम्। लीलापरं=क्रीडासक्तम्। पिककुलम्=कोकिलवृन्दम्। कलम्=मधुरम्। रौति—पञ्चमस्वरेण कूजति। पुष्पसुरभिः=कुसुमसुगन्धिः। मलयाद्रिवातः—मलयाद्रेः=मलयाचलस्य वातः=मन्दसुगन्धिरनिलः। वाति=मन्दं मन्दं चलति। परं विनोदनक्षमः=प्रियतमः हरिः=माधवः। मथुरां=मथुरानगरीम्। यातः=गतः (अतः) वयं विधिना हताः स्मः=दैव-दुर्विदग्धेन पीडिताः स्मः।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, दो जगण तथा दो गुरु होते हैं वह **वसन्ततिलक** वृत्त कहलाता है ॥ २ ॥

यथा—वनमाला जैसा तिलक रूपी वसन्त ऋतु का तिलक (तिल पुष्प) फूल रहा है, क्रीडामग्न कोकिल-वृन्द पञ्चम स्वर से मधुर कूजन कर रहा है तथा पुष्प सुगन्ध से मनोरम मलयाचल का शीतल मन्द पवन चल रहा है परन्तु विनोदप्रिय श्रीकृष्ण मथुरा को गये हैं (अतः हम सबको) दुर्भाग्य ने तो मार ही डाला है।

न न र स ल ग

। । । । । । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ

ननरसलघुगैः स्वरैरपराजिता ॥ ३ ॥

यदनवधिभुजप्रतापकृतास्पदा यदुनिचयमूः परैरपराजिता।
व्यजयत समरे समस्तरिपुव्रजं स जयति जगतां गतिर्गरुडध्वजः ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः द्वौ नगणौ रगणः सगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तद् अपराजितावृत्तम् ॥ ३ ॥

यथा—यदनवधिभुजप्रतापकृतास्पदा—यस्य = यस्य श्रीकृष्णस्यानवधौ = असीमिते भुजप्रतापे = बाहुबले कृतमास्पदं = स्थितिर्यया सा। परैः = रिपुभिः। अपराजिता = अनभिभूता। यदुनिचयचमूः = यदुवृन्दसेना। समरे = रणे। समस्तं रिपुव्रजं = निखिलमरिकुलम्। व्यजयत = पराजितवती। जगतां = त्रिभुवनानाम् गतिः = स्थितिः, परायतः सः = असौ गरुडध्वजः = गरुड एव ध्वजा यस्य रथस्य तथाविधः माधवः श्रीकृष्णः। जयति = सर्वोत्कृष्टो भवति।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण रगण सगण लघु तथा गुरु होते हैं वह **अपराजिता** वृत्त कहलाता है ॥ ३ ॥

यथा—जिन गरुडध्वज भगवान् श्रीकृष्ण के असीमित बाहुबल का आश्रय लेकर शत्रुओं द्वारा अपराजिता यदुकुल-सेना ने युद्ध भूमि में समस्त शत्रु-समुदाय को जीत लिया, त्रिभुवन की गति वाले उन गरुड़ध्वज श्रीकृष्ण की जय हो।

न न भ न ल ग

। । । । । । ऽ । । । । । । ऽ

ननभनलगिति प्रहरणकलिका ॥ ४ ॥

व्यथयति कुसुमप्रहरण ! कलिका प्रमदवनभवा तव धनुषि तता।
विरहविपदि मे शरणमिह ततो मधुमथनगुणस्मरणमविरतम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः द्वौ नगणौ भगणः नगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तत्प्रहरणकलिकानाम वृत्तम् ॥८॥

यथा—कुसुमप्रहरण—कुसुमानि = सुमनानि प्रहरणानि = बाणाः यस्य सः, तत्सम्बुद्धौ = हे कुसुमायुध। तव = ते। धनुषि = चापे। तता = आरोपिता। प्रमदवनभवा—प्रमदवने = अन्तःपुरे भवा = सञ्जाता। कलिका = कोरकः। व्यथयति = पीडयति। विरहविपदि—विरहस्य = वियोगस्य विपत् = विपत्तिस्तस्याम्। अविरतम् = निरन्तरम्। मधुमथनस्य = माधवस्य गुणस्मरणं = गुणध्यानमेव। मे = मम। शरणम् = आश्रयम् अस्तीति।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद मे क्रमशः दो नगण, भगण, नगण, लघु तथा गुरु हो वह **प्रहरणकलिका** नामक छन्द होता है।

यथा—हे कुसुमायुध कामदेव ! तुम्हारे धनुष पर आरोपित अन्तःपुर-संजात कलिका मुझे पीडित कर रही है, विरह-विपत्ति में निरन्तर मधुमथन माधव श्रीकृष्ण का गुणस्मरण ही मेरी शरण (आश्रय, रक्षक) है।

म त न म ग ग

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

मात्तो नो मो गौ यदि गदिता वासन्तीयम् ॥ ५ ॥

भ्राम्यद्भृङ्गीनिर्भरमधुरालापोद्गीतैः
श्रीखण्डाद्रेरद्भुतपवनैर्मन्दान्दोला ॥
लीलालोलापल्लवविलसद्धस्तोल्लासैः
कंसारातौ नृत्यति सदृशी वासन्तीयम् ॥

व्याख्या—यदि प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः तगणः नगणः मगणः द्वौ गुरू च भवन्ति स वासन्ती, वासन्तीनामवृत्तम्। गदिता = कथिता ॥५॥

यथा—कन्सारातौ = कंसरिपौ श्रीकृष्णे । नृत्यक्रीडां कुर्वति सति । श्रीखण्डाद्रेः = मलयाचलस्य । अद्भुतपवनैः = विचित्रवातैः, मन्दान्दोला — मन्दः = मन्थरः आन्दोलः = प्रकम्पः यस्याः सा । भ्राम्यद्भृङ्गीनिर्भरमधुरालापोद्गतैः—भ्राम्यन्तीनामितस्ततः चङ्क्रमणन्तीनां भृङ्गीणामलीनां निर्भरैः = अतिशयैः मधुरैः = मृदुभिः आलापैः = गुञ्जारवैः उद्गीतैः उच्चैर्गानैः (उपलक्षिता) लीलालोलापल्लवविलसद्हस्तोल्लासैः—लीलालोला = क्रीडाचपला पल्लवाः एव विलसन्तः = भ्राजमानाः हस्तोल्लासाः = उल्लसितकराः, तैरुपलक्षिता । इयम् = एषा वासन्ती = माधवीलता सदृशी = समा अभूत् ।

हिन्दी—जहाँ मगण के बाद तगण नगण मगण तथा दो गुरु हों वह वासन्ती वृत्त होता है ।

यथा—कंसारि श्रीकृष्ण के नाचते ही मलयाचल की अद्भुत वायु से मन्द आन्दोलित मड़राती हुई भ्रमरियों की मधुर गुञ्जन ध्वनि से उच्च गायनों से उपलक्षित क्रीडाचञ्चल पल्लवशोभि हस्तलताओं वाली यह माधवी लता श्रीकृष्ण के नृत्य जैसी नाच रही थी ।

म स म भ गग

ऽऽऽ।। ऽऽ ऽऽ ऽ।।ऽऽ

द्विःसप्तच्छिदि लोला म्सौ म्भौ गौ चरणे चेत् ॥ ६ ॥

मुग्धे ! यौवनलक्ष्मीर्विद्युद्विभ्रमलोला
त्रैलोक्याद्भुतरूपी गोविन्दोऽतिदुरापः ।
तद् वृन्दावनकुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गसनाथे
श्रीनाथेन समेता स्वच्छन्दं कुरु केलिम् ॥

व्याख्या—यत्र चरणे द्विसप्तच्छिदि—द्विः = द्विरावृत्तैः सप्तभिः = सप्तवर्णैः यतिः स्यात् अर्थात् क्रमशः मगणः सगणः मगणः भगणः द्वौ गुरू च भवन्ति सा लोला कथ्यते ॥ ६ ॥

यथा—हे मुग्धे = अयि मूढे ! यौवनलक्ष्मीः = तारुण्यसुषमा । विद्युद्विभ्रमलोला—विद्युतः = तडितः विभ्रमवत् लोला = चपला = क्षणविलासिनी । त्रैलोक्ये = संसारे अद्भुतरूपः = विलक्षणसुन्दरः गोविन्दः = माधवः । अतिदुर्लभः । न स सर्वाभिः सरलतया लभ्यः । तत् = ततः गुञ्जद् भृङ्गसनाथे — गुञ्जद्भिः = गुञ्जारवं कुर्वद्भिः भृङ्गैः = मधुपैः सनाथे युक्ते । वृन्दावनकुञ्जे = वृन्दावनस्य कुञ्जे = लतामण्डपे । श्रीनाथेन = श्रीकृष्णेन समेताः = सहिताः । स्वच्छन्दम् = स्वतन्त्रतया केलिं = विहरणम् । कुरु = विधेहि ।

हिन्दी—जहाँ चरण में दो बार सप्तवर्णों से यति हो अर्थात् क्रमशः मगण सगण मगण भगण गुरु होते हैं वहाँ लोला वृत होता ॥ ६ ॥

यथा—हे मुग्धे ! यौवनश्रीः विद्युद्भ्रम-सी चपल, संसार में अद्भुत सौन्दर्य वाले गोविन्द अतिदुर्लभ हैं अतः गुन-गुनाते हुये भ्रमरों से युक्त वृन्दावन कुञ्ज में श्रीकृष्ण सहित स्वच्छन्द क्रीडा करो ।

न न त त ग ग

। । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

स्वरभिदि यदि नौ तौ च नान्दीमुखी गौ ॥ ७ ॥

सरसखगकुलालापनान्दीमुखीयं
लहरिभुजलयाचारुफेनस्मितश्रीः ।
मुरहर ! कलयासत्तिमासाद्य किं ते
प्रमुदितहृदया भानुजा नृत्यतीह ? ॥

व्याख्या—यदि चरणे क्रमशः द्वौ नगणौ द्वौ तगणौ द्वौ गुरू च भवन्ति तन्नान्दीमुखीवृत्तम् ।

यथा—मुरहरः = हे मुरारे ! सरसखगकुलालापनान्दीमुखीयम्—सरसः = मधुरः यः खगकुलस्य = पक्षिवृन्दस्य आलापः = कलरवः स एव नान्दीमुखं = मंगलस्तुतिप्रारम्भः यस्याः सा । लहरिभुजलयाचारुफेनस्मितश्रीः— चार्वी = मनोरमा फेना एव स्मितश्रीः = मृदुहासशोभा यस्याः सा, लहर्यः = तरंगाः एव भुजलया = हस्तक्षेपा यस्याः सा । इयम् = एषा भानुजा = कालिन्दी । ते = तव । आसत्तिं = सान्निध्यम् । आसाद्य = प्राप्य । प्रमुदितहृदया = प्रफुल्लितचित्ता इव = यथा नृत्यति किं कलय = पश्य ।

हिन्दी—जिसके चरण में दो नगण, दो तगण तथा दो गुरु हों वह नान्दीमुखी छन्द कहलाते हैं ।

यथा—हे मुरारे ! सरस पक्षिवृन्द का कलरव रूपी नान्दीमुखीय

मंगलस्तुति प्रारम्भ मनोरम तरंगों रूपी हस्तक्षेप वाली यह कालिन्दी तुम्हारी समीपता पाकर प्रमुदितहृदया नाच-सी उठी है, देखो ।

(१५) अतिशर्करी (पञ्चदशाक्षरा वृत्तिः)

न न न न स

। । । । । । । । । । । । । । ऽ

गुरुनिधनमनुलघुरिह शशिकला ॥ १ ॥

मलयजतिलकसमुदितशशिकला
व्रजयुवतिलसदलिकगगनगता ।
सरसिजनयनहृदयसलिलनिधिं
व्यतनुत विततरभसपरितरलम् ॥

व्याख्या—अत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशश्चत्वारो नगणाः सगणश्च भवन्ति तत् शशिकला वृत्तम् ।

यथा—व्रजयुवतीनां = व्रजतरुणीनाम् लसत् = शोभायमानमलिकं= ललाटं, तदेव गगनं=नभस्तत्र गता=प्रयाता । मलयजतिलकसमुदितशशिकला—मलयजस्य=चन्दनस्य तिलकं=विशेषकमेव समुदिता=समुद्भूता शशिकला चन्द्रकला कर्त्री । सरसिजनयनहृदयसलिलनिधिं – सरसिजनयनस्य=कमलाक्षस्य श्रीकृष्णस्य हृदयं = मन एव सलिलनिधिस्सागरस्तम् विततरभसपरितरलम्—विततेन=महता रभसेन=हर्षेण ('रभसो वेगहर्षयोः' इत्यमरः) । परितरलं = सर्वतश्चपलम् । व्यतनुत=चकार ।

हिन्दी—जहाँ अन्तिम वर्ण दीर्घ तथा शेष सब लघु हो अर्थात् चार नगण एवं सगण हो वह शशिकला वृत्त कहलाता है ।

यथा—व्रजयुवतियों के शोभायमान ललाट रूपी आकाश में स्थित चन्दनतिलक से उत्पन्न हुई शशिकला कमलनयन श्रीकृष्ण के हृदयसागर को बड़े हर्ष से पूर्ण चञ्चल कर दिया ।

स्रगियमपि च रसनवरचितयतिः ॥ २ ॥

अयि ! सहचरि ! रुचिरतरगुणमयी
म्रदिमवसतिरनपगतपरिमला ।

स्रगिव निवस विलसदनुपमरसा
सुमुखि ! मुदितदनुजदलनहृदये ॥

व्याख्या—इयं शशिकलावृत्तमपि । रसनवरचितयतिः—रसैः=षड्भिः नवैः = नवाक्षरैः रचिता यतिः यस्यां सा । स्रक् इति नाम कथ्यते ।

यथा—अयि सुमुखि=हे शुभानने ! सहचरि=सखि ! रुचिरतरगुणमयी—रुचिरतरा = अतिशयमनोरमा गुणमयी = गुणयुक्ता । म्रदियवसतिः—म्रदिम्नः = कोमलतायाः वसतिः = निवासा । अनपगतपरिमला —अपगतः = नैव दूरीकृतः परिमलाः = सुगन्धिः यस्याः सा = अभुक्तयौवना पक्षे सुगन्धियुक्ता । विलसदनुपमरसा—विलसन् =शोभायमानः अनुपमः=अतुलनीयः रसः= अनुरागः यस्याः सा, पक्षे मधु च । त्वं मुदितदनुजदलनहृदये —मुदितस्य = आनन्दितस्य दनुजदलनस्य = राक्षससंहारकस्य श्रीकृष्णस्य हृदये = वक्षसि । स्रग् इव=मालेव । निवस = निवासं कुरु ।

हिन्दी—यह शशिकला नामक छन्द यदि ६वें तथा ९वें अक्षरों से बनी यति वाला हो तो स्रक् नाम से विख्यात होता है ।

यथा—हे सुमुखि सखि ! अतिशय गुणों से युक्त कोमलता का निवासस्थान अद्वितीय सुगन्धि वाली, शोभायमान अनुपम आनन्द वाली (पक्ष में मधुरा) तुम प्रसन्न दानव-संहारक श्रीकृष्ण जी के वक्षःस्थल पर माला के समान निवास करो ।

वसुमुनियतिरिति मणिगुणनिकरः ॥ ३ ॥

नरकरिपुरवतु निखिलसुरगति-
रमितमहिमभरसहजनिवसतिः ।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचितः
सरिदधिपतिरिव धृततनुविभवः ॥

व्याख्या—वसुमुनियतिरिति—वसुभिः=अष्टाभिः मुनिभिः = सप्तभिश्च यतिरिति=यत्यस्ति यस्याः सा तदा शशिकला मणिगुणनिकरनामकं वृत्तं भवति ।

यथा—निखिलसुरगतिः—निखिलानाम् = अखिलानां सुराणां = विबुधा-

नाम् गतिः = आश्रयः ('अमरा निर्जरा देवास्त्रिदशाः विबुधाः सुराः' इत्यमरः) अमितमहिमभरसहजनिवसतिः—अमितः = अपरिमितः यः महिमभरः = महत्त्वातिशयः तस्य सहजः = स्वाभाविकः निवसतिः = निवासः यस्य सः। अनवधिमणिगुणनिकरपरिचितः—अनवधयः = असीमिताः ये मणयः=रत्नानि यथादीप्यमानाः गुणाः=वैशिष्ट्यानि, तेषां निकरेण = समूहेन परिचितः=विदितः, पक्षे अनवधीनाम्=अगणितानां मणीनां=रत्नानां गुणानां= वर्णानां च निकरेण=वृन्देन परिचितः=उद्भासितः। सरिदधिपतिः-सरितां= नदीनामधिपतिः=प्रभुः = सागर इव। धृततनुविभवः—धृतः=स्वीकृतः तनोः= शरीरस्य विभवः = वैभवं येन तथाविधः नरकरिपुः = नरकासुरसंहारकः श्रीकृष्णः। अवतु= पातु।

हिन्दी—यदि १५ अक्षरों वाली शशिकला के आठवें तथा सातवें अक्षरों पर यति हो तो वह मणिगुणनिकर छन्द कहलाता है।

यथा—समस्त देवताओं का आश्रय, अमितमहिमा का स्वाभाविक निवास-स्थान असंख्य मणियों के समान देदीप्यमान मणियों के समूह से परिचित (असंख्य मणियों के गुणवर्णों के समुदाय से परिचित समुद्र के समान शरीर-वृद्धि धारण करने वाले नरकासुररिपु श्रीकृष्ण जी सब की रक्षा करें।

न न म य य

। । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः ॥ ४ ॥

मृगमदकृतचर्चा पीतकौशेयवासा
रुचिरशिखिशिखण्डाऽऽबद्धधम्मिल्लपाशा।
अनृजुनिहितमंसे वंशमुत्क्वाणयन्ती
धृतमधुरिपुलीला मालिनी पातु राधा॥

व्याख्या— भोगिलोकैः = अष्टभिः सप्तभिश्च यतौ ननमययुता = नगण-नगण-मगण-द्वियगणयुक्ता च मालिनी भवति।

यथा—मृगमदकृतचर्चा—मृगमदेन=कस्तूरिकया कृता = विहिता चर्चा = चर्चणं यया सा। पीतकौशेयवासा—पीत = पीतवर्णं कौशेयवासं=क्षौमवस्त्रं

यस्याः सा। रुचिरशिखिशिखण्डाऽऽबद्धधम्मिल्लपाशा—रुचिरैः = मनोहरैः शिखिनां केकीनां शिखण्डैः=बर्हैः आबद्धः=सम्बद्धः धम्मिल्लपाशः=कचकलापः यया सा तथा पाशा=माला यस्याः सा मालिनी = स्रग्विणी। अंसे=स्कन्धदेशे अनृजनिहितं=अनृजं=वक्रं निहितं=स्थापितं वंशं=मुरलिकाम्। उत्क्वणयन्ती= वादयन्ती (अत एव)धृतमधुरिपुलीला—धृता = अंगीकृता मधुरिपोः = मध्वरेः कृष्णस्य लीला=क्रीडा यया सा। राधा = राधिका। पातु=अवतु।

हिन्दी—आठ तथा सात अक्षरों से यति होने पर दो नगण, मगण तथा दो यगणयुक्त मालिनी वृत्त होता है।

यथा—कस्तूरी-चर्चित पीत-कौशेय वस्त्रों वाली, मनोरम मयूर-पुच्छांड से आबद्ध केशपाश वाली मालायुक्त कन्धे पर तिरछी बांसुरी रखे बजाती हुई मधुरिपु श्रीकृष्ण की लीला वाली वृषभानुजा राधा सब की रक्षा करें।

म म म म म

ऽऽऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

एकन्यूनौ विद्युन्मालापादौ चेल्लीलाखेलः ॥ ५ ॥

(क) पायाद्वो गोविन्दःकालिन्दीकूलक्षोणीचक्रे
रासोल्लासक्रीडद्गोपीभिः सार्धं लीलाखेलः।
मन्दाकिन्यास्तीरोपान्ते स्वैरक्रीडाभिर्लोलो
यद्वद् देवानामीशः स्वर्वेश्याभिः खेलन्तीभिः॥

(ख) मा कान्ते! पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सीः।
कान्तं वक्त्रं वृत्तं पूर्णं चन्द्रं मत्वा रात्रौ चेत्।
क्षुत्क्षामः प्राटंश्चेतो राहुः क्रूरः प्राद्यात्तस्माद्
ध्वान्ते हर्म्यस्यान्ते शय्यैकान्ते कर्तव्या॥

कण्ठाभरणः।

व्याख्या—एकन्यूनौ = एकाक्षरहीनौ। विद्युन्मालापादौ=विद्युन्मा-लायाः चरणौ स्याताम् तदा लीलाखेलं=लीलाखेलनामकं वृत्तं स्यात्। अर्थात् पञ्चभिर्मगणैर्युक्तं लीलाखेल-नामकं वृत्तं भवति।

यथा--(क) कालिन्दीकूलक्षोणीचक्रे = कालिन्द्याः = यमुनायाः कूले = तटे यत् क्षोणीचक्रं = वर्तुलाकारो भूप्रदेशः, तत्र । रासोल्लास-क्रीडद्गोपीभिः—रासे = रासक्रीडायां उल्लासः = हर्षः यासां ताः, अत एव क्रीडन्त्यः = क्रीडां कुर्वन्त्यः गोप्यः = गोपिकाः ताभिः । सार्धम् = साकम् । स्वैरक्रीडाभिः = स्वच्छन्दखेलैः खेलन्तीभिः = क्रीडन्तीभिः । स्वर्वेश्याभिः = अप्सरोभिः । लोलः = चपलः मन्दाकिन्याः = गङ्गायाः तीरोपान्ते = तट-प्रदेशे । देवानां = सुराणाम् ईशः = प्रभुः यद्वत् = सुरेन्द्रः शक्रवत् श्रीकृष्ण वः = युष्मान् पायात् = रक्षेत् ।

यथा--(ख) कान्ते = हे प्रिये ! शुक्लपक्षस्य अन्ते = समाप्तौ पूर्णिमायाम् । पर्याकाशे-परि = परितः आकाशे = गगने, अनावृतस्थाने । देशे = प्रदेशे । रात्रौ = निशायां मा स्वाप्सीः = शयनं मा कुरु । चेत् = यदि क्षुत्क्षामः-क्षुधा = बुभुक्षया क्षामः क्षीणः क्रूरः = निर्दयः राहुः = राहुग्रहः । इतः प्राटन् = इतस्ततः परिभ्रमन् । कान्तं = मनोरमम् वर्तुलाकारं वक्त्रं = मुखम् (तवेति) पूर्णं = सम्पूर्णम् चन्द्रं विधुं मत्वा = विज्ञाय प्राद्यात् = ग्रसेत्, तस्मात् हर्म्यस्यान्ते = प्रासादस्य अन्तरे ध्वान्ते = तमसि । एकान्ते = निर्जन-स्थाने शय्या = शयनीयम् । कर्त्तव्या = करणीया ।

हिन्दी—यदि विद्यु-माला छन्द के दो चरण एक अक्षर से न्यून हों तो लीलाखेल नामक छन्द होता है अर्थात् बाद में पाँचो मगण होने पर लीलाखेल नामक वृत्त होता है ।

यथा--(क) यमुनातट के वर्त्तुलाकार प्रदेश में, रासोल्लास खेलती हुई गोपियों के साथ मन्दाकिनी गङ्गा के तट समीप स्वच्छन्द क्रीडाओं द्वारा खेलती हुई अप्सराओं से चञ्चल सुरेन्द्र के समान श्रीकृष्ण जी तुम सब की रक्षा करें ।

(ख) हे कान्ते ! शुक्ल पक्ष के अन्त में अर्थात् पूर्णिमा पर चारों ओर से खुले स्थान पर रात्रि में शयन मत करो । यदि भूख से पीडित क्रूर राहु ग्रह इधर-उधर घूमता हुआ मनोरम वर्त्तुल तुम्हारे मुख को पूर्ण चन्द्र समझकर ग्रस ले, इस कारण महल के अन्दर अन्धेरे में एकान्त स्थान पर शयन करना चाहिए ।

न स न र र

। ।।।। ऽ ।।। ऽ । ऽ ऽ । ऽ

विपिनतिलकं नसनरेफयुग्मैर्भवेत् ॥ ६ ॥

विपिनतिलकं विकसितं वसन्तागमे
मधुकृतमदमधुकरैः क्वणद्भिर्वृतम् ।
मलयमरुता रचितलास्यमालोकयन्
व्रजयुवतिभिर्विहरति स्म मुग्धो हरिः ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः सगणः नगणः द्वौ रगणौ च भवन्ति तद् विपिनतिलकं नाम वृत्तम् ॥६॥

यथा—मुग्धः = मनोहरः हरिः = माधवः । वसन्तागमे--वसन्तस्य = ऋतु-राजस्य आगमे = आगमनकाले । विकसितं = प्रफुल्लितं, मधुकृतमदमधुकरैः--मधुना = कुसुमरसेन कृतः = जनितः मदः येषां तथा विधाः मधुकराः = भ्रमरास्तैः । क्वणद्भिः = गुञ्जद्भिः वृतम् = आवृतम् । मलयमरुता--मलयस्य = मलयपर्वतस्य मरुत् = पवनस्तेन = मन्दसुगन्धितवायुना । रचितलास्यं = कृतनृत्यम् । विपिनतिलकं = काननतिलकपुष्पम् । आलोकयन् = पश्यन् । व्रजयुवतिभिः = व्रजतरुणीभिः सह विहरतिस्म = विहारं करोतिस्म ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः नगण, सगण, नगण तथा दो रगण हों वह विपिन-तिलक नामक छन्द होता है ॥६॥

यथा—मुग्धमाधव वसन्त के आने पर प्रफुल्लित मधुरस से जनित मद वाले गुन-गुनाते भौंरों से आवृत, मलय पवन से मानो लास्य (नृत्य) करते हुए वनतिलक को देखते हुए व्रजयुवतियों के साथ विहार किया करते थे ।

ग ल र ज ग ल र लग

ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

तूणकं समानिकापदद्वयं विनाऽन्तिमम् ॥ ७ ॥

सा सुवर्णकेतकं विकासि भृङ्गपूरितं
पञ्चबाणबाणजालपूर्णहेमतूणकम् ।

राधिका वितर्क्य माधवाऽद्य मासि माधवे
मोहमेति निर्भरं त्वया विना कलानिधे ! ॥

व्याख्या—पूर्वोक्त-समानिकानाम वृत्तस्य पदद्वयं = चरणद्वयम् । अन्तिमं विना=अन्तिम-अक्षरं विना स्थितं यस्यैक पादं तत् तूणकं = तूणक नाम वृत्तं भवेत् ।

यथा—कलानिधे—कला=नृत्यादिचतुःषष्ठिकलास्तां निधिः=कोषः, तत्सम्बुद्धौ हे कलानिधे ! माधव ! सा राधिका=वृषभानुसुता । त्वया विना=माधवेन विना । अद्य = सम्प्रति माधवे मासि= वसन्ततौ मासे वैशाखे इति । विकासि=विकसितम् । भृङ्गपूरितं—भृङ्गैः=अलिभिः पूरितं = युक्तम् । सुवर्णकेतकं = पीतं केतकीपुष्पम् । पञ्चबाणस्य = पञ्चशरस्य कामस्य ('मदनो मन्मथो मारः प्रद्युम्नो मीनकेतनः । कन्दर्पो दर्पकोऽनङ्गः कामः पञ्चशरः स्मरः । इत्यमरः) बाणजालेन = सायकसमूहेन पूर्णं=परिपूर्णम् । हेमतूणकं =स्वर्णतूणीरम् । वितर्क्य = तर्कं कृत्वा, मत्वा । त्वया विना=त्वद् विरहाकुलिता । निर्भरम् = अत्यन्तम् । मोहम् = अचेतनदशाम् । एति = गच्छति प्राप्नोतीत्याशयः ।

हिन्दी— जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः गुरु, लघु, रगण, जगण, गुरु, लघु, रगण तथा गुरु, लघु हों वह तूणक वृत्त कहलाता है ।

यथा—हे कला निधे, माधव ! वह राधिका तुम्हारे बिना इस माधव मास वैशाख में प्रफुल्ल पीत केतकी पुष्प को पञ्चशर मदन के बाण-समूह से परिपूर्ण स्वर्ण-तूणीर (तरकस) मान कर तुम्हारे विरह से व्याकुल अत्यन्त मूर्च्छा को प्राप्त होती है । अर्थात् बेहोश हो जाती है ।

म र म य य
ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ

म्रौ म्रो यौ चेद्रुवेतां सप्ताष्टकैश्चन्द्रलेखा ॥ ८ ॥

विच्छेदे ते मुरारे ! पाण्डुप्रकाशा कृशाङ्गी
म्लानच्छायं दुकूलं न भ्राजते बिभ्रती सा ।
राधाऽम्भोदस्य गर्भे लीना यथा चन्द्रलेखा
किन्त्वार्ता त्वां स्मरन्ती धत्ते ध्रुवं जीवयोगम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः मगणः रगणः मगणः द्वौ यगणौ चेति गणाः भवन्ति, पञ्चदशाक्षरैः सा चन्द्रलेखा भवति ।

यथा—मुरारे = हे माधव ! ते = तव । विच्छेदे = विरहे । कृशांगी= तन्वी । पाण्डुशुभ्रप्रकाशा—पाण्डुः = शुभ्रः प्रकाशः=प्रभा यस्याः सा राधा । म्लाना = मलिनाच्छाया=कांतिर्यस्य तथा विधम् । दुकुलं = कौशेयवस्त्रम् । बिभ्रती = दधाना । अम्भोदस्य = मेघस्य । गर्भे = मध्ये । लीना=प्रच्छन्ना । चन्द्रलेखा इव = विधुकान्तिरिव । न भ्राजते = नैव शोभते । किन्त्व=परञ्च । आर्ता=वियोगपीडिता । त्वां = कृष्णम् । स्मरन्ती = विचिन्तयन्ती । जीवयोगं= जीवनसम्बन्धम् । धत्ते = धारयति ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण रगण मगण तथा दो यगण हो वह चन्द्रलेखा वृत्त कहलाता है ।

यथा—हे मुरारे ! तुम्हारे वियोग में शुभ्र प्रकाशवाली दुर्बलतन राधा मलिन कान्ति वाले कौशेय वस्त्र को धारण किये हुए मेघों में छिपी चन्द्रकान्ति के समान शोभित नहीं हो रही है बल्कि व्याकुल (राधा) तुमको स्मरण करती हुई जीवन का सम्बन्ध बनाये हुए है अर्थात् जीवित है ।

म म म य य
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ

चित्रा नाम च्छन्दश्चित्रं चेत्त्रयो मा यकारौ ॥ ९ ॥

गोपालीलीलालोला यद्वत् कलिन्दात्मजाऽन्ते
खेलन्मुक्ताहाराऽऽरण्यस्रग्लसन्मूर्धचित्रा ।
कंसारातेर्मूर्तिस्तद्वन्मे हृदि क्रीडतीयं
कोऽन्यः स्वर्गो मोक्षो वाऽस्काद्विद्यते तन्न जाने ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः त्रिमगणाः द्वौ यगणौ च भवन्ति तत् चित्रं नाम वृत्तम् ।

यथा—गोपालीलीलालोलाः—गाः = धेनूः पालयन्ति इति गोपालास्तेषां स्त्रियः गोपाल्यः = गोपिकाः, तासां लीलया = क्रीडया लोलाः = चञ्चलाः । खेलन् मुक्ताहारा—खेलने = क्रीडने वक्षसि मुक्ताहारः = मौक्तिकमाला यस्याः सा । आरण्यस्रक्लसन्मूर्धचित्रा—आरण्यस्रजा=वन्यमालया लसन्=शोभायमानः

यः मूर्धा=मस्तकं तेन चित्रा=अद्भुता । कंसारातेः—कंसस्य आरातिः= कंसरिपुस्तस्य श्रीकृष्णस्य । इयम्=एषा । मूर्तिः=प्रतिमा । तद्वत्=तथा । मे=मम हृदि=हृदये क्रीडति । अस्मात्=एतस्मात् । अन्यः=अपरः । स्वर्गः= मोक्षः । विद्यते=वर्तते । वा=अथवा न नैव वर्तते इति ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः तीन मगण तथा दो यगण हों वह चित्रा वृत्त कहलाता है ।

यथा—गोपियों की लीलाओं से चपल, खेलते हुए वक्षःस्थल पर से मुक्ताहार से पृथक् हुए वनमाला से शोभित अद्भुत मस्तक वाली कंसारि श्री कृष्ण की यह मूर्ति जैसे यमुना तीर पर खेल रही है वैसे ही मेरे हृदय में भी खेलती है । ऐसी श्री कृष्ण मूर्ति से भिन्न अन्य स्वर्ग या मोक्ष है अथवा नहीं है ।

(१६) अष्टिः (षोडशाक्षरा वृत्तिः)

ग ल र ज ग ल र ज

ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ।

चित्रसंज्ञमीरितं समानिकापदद्वयन्तु ॥ १ ॥

विद्रुमारुणाधरौष्ठशोभिवेणुवाद्यहृष्ट-
वल्लवीजनाङ्गसङ्गजातमुग्धकण्टकाङ्ग ।
त्वां सदैव वासुदेव ! पुण्यलभ्यपाद ! देव !
वन्यपुष्पचित्रकेश ! संस्मरामि गोपवेश ! ॥

व्याख्या—यत्र समानिकापदद्वयम्=समानिकावृत्तलक्षणयुक्तं पदद्वयम् =पादद्वयेन एकपादस्तच्चित्रसंज्ञं=चित्रनामक वृत्तम् ईरितम्=कथितम् ।

यथा—विद्रुमारुणाधरौष्ठशोभिवेणुवाद्यहृष्टवल्लवीजनाङ्गसङ्गजातमुग्धकण्टकाङ्ग—विद्रुमः = प्रवालः इव अरुणः = रक्तवर्णो यः अधरोष्ठः, शोभते=राजत इति विद्रुमारुणाधरौष्ठशोभी, स चासौ वेणुः=वंशस्तस्य वाद्येन हृष्टानां=मुदितानां वल्लवीजनानां=गोपस्त्रीणाम् अंगसंगेन=शरीर-स्पर्शेन जातः=समुत्पन्नः मुग्धः=मनोहरः कण्टकः=रोमाञ्चः यत्र तथाविधम् अंगं=शरीरं यस्य सः, तत्सम्बुद्धौ । पुण्येन=सुकृतेन लभ्यौ=प्राप्यौ पादौ=

चरणौ यस्य तत्सम्बोधने । देव=हे कृष्ण वासुदेव । वन्यपुष्पचित्रकेश= हे गोपवेश ! अहम् त्वां=भवन्तम् । सदैव = नित्यमेव । संस्मरामि=चिन्तयामि ।

हिन्दी—जहाँ समानिका के दो पादों का एक पाद हो वह चित्र नामक वृत्त होता है अर्थात् चित्र वृत्त के प्रत्येक पाद में गुरु लघु रगण-जगण गुरु लघु रगण जगण होते हैं ।

यथा—हे विद्रुममणि के समान लाल ओष्ठाधर शोभी वेणु (बांसुरी) के बजाने से प्रसन्न गोपियों के अंग स्पर्श से समुत्पन्न मनोरम रोमाञ्च शरीर वाले ! पुण्य से प्राप्य चरणों वाले हे कृष्ण वासुदेव गोपवेश ! मैं आपको सदैव स्मरण करता हूँ ।

भ र न न न ग

ऽ । । ऽ । ऽ । । । । । । । । । ऽ

भ्रत्रिनगैः स्वरात्खमृषभगजविलसितम् ॥ २ ॥

यो हरिरुच्चखान खरतरनखशिखरै-
र्दुर्जयदैत्यसिंहसुविकटहृदयतटम् ।
किन्विह चित्रमेव यदखिलमपहृतवान्
कंसनिदेशदृप्यदृषभगजविलसितम् ॥

व्याख्या—भ्रत्रिनगैः=भगणः रगणः त्रयो नगणाश्च, तैः । स्वरात्=सप्त-मात् परम् अनन्तरम् खं=शरीरच्छिद्रनवकं यतिः स्थानं यत्र तद् ऋषभगज-विलसितं वृत्तं स्यात् ।

यथा—यो हरिः = कृष्णः । खरतरनखशिखरैः-खरतरैः=महत्तीक्ष्णैः नख-शिखरैः=नखाग्रैः । दुर्जयदैत्यसिंहसुविकटहृदयतटम्-दुर्जयस्य=पराक्रमिणः दैत्यसिंहस्य=राक्षसवरस्य हिरण्यकशिपोः सुविकटम्=अतिकठोरं यद् हृदयं= वक्षस्तदेव तटं स्थलम्, तत् । उच्चखान=विदारितवान् । एषः श्रीकृष्णः । अखिलम्=सम्पूर्णम् । कंसनिदेशदृप्यदृषभगजविलसिते-कंसस्य=औग्रसेनिनः निदेशेन=आदेशेन दृप्यतोः=जाताभिमानयोः ऋषभगजयोः=वृषकरिरूप-धारिणोः अरिष्टकुवलयराक्षसयोः । विलसितं=चेष्टितं यत् तत् । अपहृत-वान्=व्यर्थतां नीतम् । किं नु इह चित्रम्=अत्र विषये किमाश्चर्यम् ।

हिन्दी—जहाँ भगण रगण तीन नगण तथा गुरु हो तो वह ऋषभगजविलसित छन्द होता है।

यथा—जिन श्रीकृष्ण जी ने अति तिक्ष्ण नखाग्रों से दुर्जन दैत्यराज हिरण्य कशिपु के सुविशाल वक्षःस्थल को फाड़ डाला वही यह श्रीकृष्ण समस्त कंसराज के आदेश से गर्वित वृष तथा हस्ती रूपधारी अरिष्ट तथा कुवलय राक्षसों की चेष्टाओं को विफल कर दिया तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

भ स म त न ग

ऽ । । । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । ऽ

भात् समतनगैरष्टच्छेदे स्यादिह चकिता ॥ ३ ॥

दुर्जयदनुजश्रेणीदुश्चेष्टाशतचकिता
यद्भुजपरिघत्राता याता साध्वसविगमम्।
दीव्यति दिविषन्माला शश्वन्नन्दनविपिने
गच्छत शरणं कृष्णं तं भीता भवरिपुतः॥

व्याख्या—भात्=भगणात् परम्। सगणः मगणः तगणः नगणः गुरुश्चेत् तर्हि तैः इह=अस्मिन् वृत्ते। अष्टच्छेदे=अष्टभिः वर्णैश्छेदो विरामो भवति। अतस्तच्चकिता वृत्तम् कथ्यते।

यथा—दुर्जयदनुजश्रेणीदुश्चेष्टाशतचकिता—जेतुमशक्या दुर्जया दनुजानां=दानवानां श्रेणीः = पंक्तिः तस्याः दुश्चेष्टाशतैः = बहुभिर्दुष्कर्मैः चकिता = आश्चर्यं गता, भीता वा। दिविषन्माला—दिविषदां=सुराणां माला =समूहः। यद्भुजपरिघत्राता—यस्य माधवस्य भुजः=बाहुरेव परिघः=शस्त्रविशेषस्तेन त्राता=रक्षिता। साध्वसविगमम्—साध्वसस्य = त्रासस्य विगमं= विनाशम् तत् याता=गता। नन्दनविपिने=नन्दनवने। दीव्यति=स्वतन्त्रतया विहरति। भवरिपुतः—भवस्य=जगद्रूपस्य रिपुतः=अरेः भीताः = त्रस्ताः यूयं तं=माधवं, शरणम् = आश्रयम् गच्छत=प्रयात यतो भवरिपुत्राता हरिरेव।

हिन्दी—भगण के बाद क्रमशः सगण मगण तगण नगण और गुरु हो तो उनसे इस छन्द में आठवर्णों से विराम होता है, ऐसा चकिता नामक वृत्त कहलाता है।

यथा—कठिनतासे जीते जा सकने वाले दानवों की श्रेणी अनेक दुष्कर्मों से चकित देवताओं की पंक्ति जिनकी भुजारूपी परिघ (शस्त्रविशेष) से रक्षित भय के विनाश को प्राप्त नन्दन वनमें स्वतन्त्रता से विहार करते हुए संसार रूपी शत्रु से भयभीत तुम सब उन्हीं श्रीकृष्णजी की शरण में जाओ।

ज र ल ग ज र ल ग

। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ

प्रमाणिकापदद्वयं वदन्ति पञ्चचामरम् ॥ ४ ॥

सुरद्रुमूलमण्डपे विचित्ररत्ननिर्मिते
लसद्वितानभूषिते सलीलविभ्रमालसम्।
सुराङ्गनाभवल्लवीकरप्रपञ्चचामर-
स्फुरत्समीरवीजितं सदाऽच्युतं भजामि तम्॥

व्याख्या—पूर्वोक्तस्य प्रमाणिकायाः – प्रमाणिकावृत्तस्य पदद्वयम्= चरणद्वयम्। पञ्चचामरं नाम वृत्तं भवति अर्थात् पंचचामरवृत्ते जगणः रगणः जगणः रगणः जगणः गुरुश्च भवन्ति।

यथा – विचित्ररत्ननिर्मिते—विचित्रैः = विविधवर्णैः रत्नैः मणिभिः निर्मिते=रचिते अलंकृते वा लसद्वितानभूषिते—लसता=शोभमानेन वितानेन विभूषिते=शोभिते सुरद्रुमूलमण्डपे—सुरद्रोः=देववृक्षस्य मूले = अधस्तले यो मण्डपस्तस्मिन्। सलीलविभ्रमालसम्—लीलया सह विद्यते सलीलः=सक्रीडः यः विभ्रमः विलासस्तेन अलसं=श्रान्तम्। सुराङ्गनावल्लवी—सुरांगनानाम् = अप्सरःसमानाम् वल्लवीनां=गोपिकानां करेषु = हस्तेषु प्रपञ्चा=प्रसृता ये चामराः=वालव्यजनानि तेभ्यः स्फुरता=सञ्चरता समीरेण = पवनेन वीजितं = सेवितं, तम्=तथाविधम्। अच्युतं=श्रीकृष्णम्। सदा=नित्यं भजामि = चिन्तयामि।

हिन्दी—प्रमाणिका छन्द के दो चरणों से एक चरण वाले छन्द को विद्वान् पञ्चचामर छन्द कहते हैं।

यथा—विविधवर्ण की मणियों से निर्मित, शोभायमान वितान (चंदोवा) से अलंकृत कल्प वृक्ष की जड़ (मूल) रूपी मण्डप में सकौतुक विलास से श्रान्त (थके) अप्सराओं के समान सुन्दरी गोपियों के हाथों में लम्बे चौरों से

स्फुरित पवन मे सेवित उन अच्युत श्री कृष्ण जी का मैं सदैव स्मरण करता हूँ।

म भ न म न ग

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ ऽ । । । ऽ

म्भौ नो म्नौ गो मदनललिता वेदैः षड्ऋतुभिः ॥५॥

विभ्रष्टस्रग्गलितचिकुरा धौताधरपुटा
ग्लायत्पत्रावलिकुचतटोच्छ्वासोर्मितरला ।
राधाऽत्यर्थं मदनललिताऽऽन्दोलालसवपुः
कंसाराते रतिरसमहो ! चक्रेऽतिचटुलम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे मगणभगणौ नगणः, मगणनगणौ गुरुश्च स्यात् तन्मदनललितावृत्तं भवति । तत् वेदैः=चतुर्भिः । षड्ऋतुभिः =षड्भिश्चाक्षरैः यतिः भवेत् ।

यथा—विभ्रष्टस्रगलितचिकुरा–विभ्रष्टा = पतिता स्रक् = माला यस्याः =सा गलिता=श्लथिताश्चिकुरा.=कचाः यस्याः सा । धौताधरपुटा—धौतं =क्षालितम् अधरपुटम्=ओष्ठपुटं यस्याः सा । ग्लायन्ती = मलिनापत्रावली पत्रसंरचनं यत्र तथाविधं कुचतटं=पयोधरतटं यस्याः सा उच्छ्वासा=दीर्घश्वासाः ऊर्मयः=तरङ्गाः इव यथा तैस्तरला=चपला । मदनललिताऽऽन्दोलालसद्वपुः—मदनस्य=मन्मथस्य ललितेन=विलासेन आन्दोलं=चापल्यं तेनालसम्=आलस्ययुक्तं वपुः-देहः यस्याः सा तथाविधा राधा=वृषभानुजा । कंसारातेः—कंसस्य=औग्रसेनिनः आरातेः=रिपोः श्रीकृष्णस्य । अतिचटुलम्= अत्युत्सुकम् । रतिरसम्=प्रेमानुरागम् । चक्रे=अकरोत् । अहो=आश्चर्यमस्ति ।

हिन्दी—जहाँ भगण मगण नगण मगण नगण तथा गुरु हो और चार व छह वर्णों पर यति हो वह मदनललिता छन्द कहलाता है ।

यथा—नीचे गिरी माला जैसी श्लथा केशों वाली, अङ्गराग पुछे अधर पुटों वाली, मलिन पत्र रचनायुक्त पयोधर तट वाली उच्छ्वासतरंगों से मानो चञ्चल बनी हुई मदन विलास से चञ्चलता के कारण अलसाई देह वाली राधा कंसारि श्रीकृष्ण के अति उत्सुक प्रेमानुराग को किया यह आश्चर्य है ।

न ज भ ज र ग

। । । । ऽ । ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

नजभजरैर्यदा भवति वाणिनी गुयुक्तैः ॥ ६ ॥

स्फुरतु ममाननेऽद्य ननु वाणि ! नीतिरम्यं
तव चरणप्रसादपरिपाकतः कवित्वम् ।
भवजलराशिपारकरणक्षमं मुकुन्दं
सततमहं स्तवैः स्वरचितैः स्तवानि नित्यम् ॥

व्याख्या—यदा नगण-जगण-भगण-जगण-रगणैः एकेन गुरुवर्णेन युक्तं पदं भवति तदा सा वाणिनी कथ्यते ।

यथा—हे वाणि = हे भारति ! तव = ते । चरणप्रसादपरिपाकतः— चरणयोः=पादयोः प्रसादस्य=कृपायाः परिपाकतः=परिणामतः । नीतिरम्यं— नीतिनिमित्तं रम्यं=नयमनोरमम् । कवित्वं=कविताम् । मम=मे । आनने=मुखे । स्फुरतु=समुद्भवतु (येन) अहं स्वरचितैः=निजकृतैः । स्तवैः=स्तुतिभिः । भवजलराशिपारकरणक्षमम्—भवः = ससारः एव जलराशिः=सागरः, त पारकरण = पारगमने क्षमं = समर्थम् । मुकुन्दं = माधवम् नित्य = सदा स्तवानि = स्तुतिं करोमि ।

हिन्दी—जब छन्द में क्रमशः नगण जगण भगण जगण रगण के साथ गुरु होता है तो वह वाणिनी वृत्त कहलाता है ।

यथा—हे सरस्वति ! तुम्हारे चरणों की कृपा से नीति मनोरम कवित्व मेरे मुख में अवस्फुरित हो उठे जिससे मैं स्वरचित स्तोत्रों के द्वारा भवसागर पार करने में समर्थ मुकुन्द श्रीकृष्णचन्द्र का सदैव स्मरण कर सकूँ ।

य म न स र ग

। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ

यमौ नस्रौ गश्च प्रवरललितं नाम वृत्तम् ॥ ७ ॥

भुजोत्क्षेपः शून्ये चलवलयझङ्कारयुक्तो
मुधा पादन्यासः प्रकटिततुलाकोटिनादः ।
स्मितं वक्त्रेऽकस्माद् दृशि पटुकटाक्षोर्मिलीला
हरौ जीयादीदृक् प्रवरललितं वल्लवीनाम् ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः यगणः मगणः नगणः सगणः रगणः गुरुश्च भवन्ति तत्प्रवरललितं नाम वृत्तं भवति ।

यथा—शून्ये = आकाशे । चलवलयझंकारयुक्तः-चलानां=चपलानां वलयानां=कंकणानां झंकारेण = निनादेन युक्तः=संयुक्तः । भुजोत्क्षेपः—भुजयोः = बाह्वोः उत्क्षेपः = प्रसृतिः । प्रकटिततुलाकोटिनादः—प्रकटितः=प्रकाशितः तुलाकोटीनां=नूपुराणां नादः = झंकृतिः येन तथाविधः । मुधा=व्यर्थम् । पादन्यासः=चरणप्रक्षेपः अकस्मात्=सहसा । वक्त्रे=आनने । स्मितं=मन्दहास्यम् । दृशि=चक्षुषि पटुकटाक्षः=स्वभावप्रकाशनसमर्थं तिर्यगवलोकनम् तस्य ऊर्मिः=परम्परा सैव लीला=विलासः । हरौ=माधवे । वल्लवीनां = व्रजवनितानाम् । ईदृग् = एतद्विधम् । प्रवरललितम्—प्रवरं=श्रेष्ठं ललितं=हावभावम् जीयात्=सर्वोत्कृष्ट स्यात् ।

हिन्दी—जहाँ एक चरण में क्रमशः यगण मगण नगण सगण रगण के साथ गुरु हो वह प्रवरललित नामक छन्द कहलाता है ।

यथा—आकाश में चञ्चल वलयों की झङ्कार से भुजाओं का फैलाव नूपुरों की ध्वनि को प्रकट करने वाला व्यर्थ पादक्षेप अकस्मात् मुख में मन्द-हास्य, दृष्टि में अपना भाव प्रकट करने में समर्थ कटाक्षों की परम्परा का विलास श्री कृष्ण के सम्बन्ध में गोप वनिताओं का इस प्रकार का उत्तम हाव-भाव सर्वोत्कृष्ट होवे ।

ल

। । । । । । । । । । । । । । । ।

द्विगुणितवसुलघुभिरचलधृतिरिह ॥ ८ ॥

तरणिदुहितृतटरुचिरतरवसति-
रमरमुनिमुखजनविहितनुतिरिह ।
मुररिपुरभिनवजलधररुचितनु-
रचलधृतिरुदयति सुकृतिहृदि खलु ॥

व्याख्या—द्विगुणितवसुलघुभिः—द्विगुणितैः=द्विरावृत्तैः वसुभिः = अष्टैः लघुभिः = लघुवर्णैः इह = अत्रच्छन्दसि अचलधृतिः = अचलधृतिनाम वृत्तं भवति ।

यथा—इह = अस्मिन् संसारे । तरणिदुहितृतटरुचिरतरवसतिः—तरणिदुहितुः=यमुनायाः तटे=पुलिने रुचिरतरा=अतिमनोरमा वसतिः=निवासः यस्य तथाविधः । अमरमुनिमुखजनविहितनुतिः—अमरमुनिषु=सुरर्षिषु मुखजनैः=प्रमुखजनैः नारदादिभिः विहिता=कृता नुतिः=स्तुतिर्यस्य तथाविधः । अभिनवजलधररुचितनुः—अभिनवस्य = नवीनस्य जलधरस्य=जलदस्य रुचिः=कान्तिरिव=मनोरमा तनुः = शरीरम् यस्य तथाविधः । अचलधृतिः—अचला=स्थिरा धृतिः धैर्यं यस्य सः=पर्वतसमः । मुररिपुः = मुरारिः माधवः । सुकृतिनां = पुण्यजनानाम् हृदि=चेतसि । उदयति=प्रकाशते खलु-किलेति ।

हिन्दी—१६ लघु वर्णों से बना अचलधृति नामक छन्द होता है ।

यथा—इस संसार में यमुना तट पर अतिमनोरम निवास वाले, देवर्षियों नारदादि मुख्यों द्वारा जिनकी स्तुति की गई है, नूतन जलधर की कान्ति सदृश मनोहर शरीर वाले, पर्वत के समान धैर्यवान् मुरारिमाधव पुण्यात्माओं के हृदय में निश्चित रूप से प्रकाशित होते हैं ।

न ज भ ज त ग

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ

गरुडरुतं नजौ भजतगा यदा स्युस्तदा ॥ ९ ॥

अमरमयूरमानसमुदे पयोदध्वनि-
र्गरुडरुतं सुरारिभुजगेन्द्रसन्त्रासने ।
धरणिभरावतारविधिडिण्डिमाडम्बरः
स जयति कंसरङ्गभुवि सिंहनादो हरेः ॥

व्याख्या—यदा नगणः जगणः भगणः जगणः तगणस्तत्पश्चाच्च गुरु स्यात् तदा गरुडरुत नाम वृत्तं कथ्यते ।

यथा—अमरमयूरमानसमुदे—अमराः = सुराः एव मयूराः=केकिनस्तेषां मानसस्य—चेतसः मुदे=प्रसन्नतायै । पयोदध्वनिः—पयोदानां=घनानां ध्वनिः=रवः सुरारिभुजगेन्द्रसन्त्रासने—सुरारयः = दैत्या एव भुजगेन्द्राः= नागास्तेषां सन्त्रासने=भयङ्करे । गरुडरुतं-गरुडस्य=वैनतेयस्य रुतं=ध्वनिः । धरणिभरावतारविधिडिण्डिमाडम्बरः—धरणेः=भूमेः भरावतारविधौ = भारहरणकार्ये डिण्डिमस्य=वाद्यविशेषस्य (नगाड़ा इति भाषायामित्येतस्य)

आडम्बरः = ध्वनिः। हरेः = माधवस्य। कंसरङ्गभुवि = कंसस्य रंगभुवि = युद्धभूमौ। सः = असौ प्रसिद्धः सिंहनादः = मृगेन्द्रगर्जनम्। जयति = सर्वोत्कृष्टं भवति।

हिन्दी—जब एक चरण में क्रमशः नगण जगण भगण जगण तगण तथा गुरु हो तो वह **गरुडरुत** नामक छन्द होता है।

यथा—देव रूपी मयूरों के हृदयों को प्रसन्न करने के लिए मेघों की ध्वनि देव रिपु-रूपी साँपों को भयभीत करने में पक्षिराज गरुड की ध्वनि पृथिवी के भारहरण क्रिया में डिण्डिम (नगाड़ा) की ध्वनि भगवान् श्रीकृष्ण का कंस की युद्धभूमि में प्रसिद्ध सिंहनाद सर्वोत्कृष्ट होता है। विजय प्राप्त करता है।

यत्र वृत्तरत्नाकरे तत्परिशिष्टे च इमानि छन्दांस्यधिकानि दृश्यन्ते—

भ र न र न ग

SI I SIS III SI SII S

सङ्कुथिता भरौ नरनगाश्च धीरललिता ॥ १ ॥

भ भ भ भ भ ग

SI I S II S I I S I I S I I S

पञ्चभकारयुताऽश्वगतिर्यदि चान्त्यगुरुः ॥ २ ॥

न ज र भ भ ग

I I I I S I S I S S I I S I I S

नजरभभेण गेन च स्यान्मणिकल्पलता ॥ ३ ॥

ग

S S SSS SSS SSS SSSS S

यस्मिन् सर्वे गा राजन्ते ब्रह्माद्यं तद्रूपं नाम ॥ ४ ॥

भ र य न न ग

S I I S I S I I S I I I I I I S

भो रयना नगौ च यस्यां वरयुवतिरियम् ॥ ५ ॥

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः भगणः रगणः नगणः रगणः नगण गुरुश्च तद्धीरललिता, भगणाश्च गुरुश्चैकस्तदश्वगतिः, नगणः जगण रगणः भगणः भगण: गुरुश्च तन्मणिकल्पलता, सर्वे गुरवो यत्र तद् ब्रह्मरूपं, भगणः रगणः यगणः द्वौ नगणौ गुरुश्च सा वरयुवतिश्छन्दः।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः भगण, रगण, नगण, रगण, नगण तथा गुरु हो तो **धीरललित**, पाँचों भगण तथा अन्त में गुरु हो तो **अश्वगति**, नगण, जगण, रगण, भगण, भगण और अन्त में गुरु हो तो **मणिकल्पलता**, जिसमें सभी गुरु हों वह ब्रह्मरूप और भगण रगण यगण नगण नगण तथा अन्त में एक गुरु हो तो **वरयुवति** नामक छन्द होता है।

य म न स भ ल ग

I S S S S S I I I I I S S I I I S

रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी ॥ १ ॥

करादस्य भ्रष्टे ननु शिखरिणीदृश्यतिशिशो-
विलीनाः स्मः सत्यं नियतमवधेयं तदखिलैः।
इति त्रस्यद्गोपाऽनुचितनिभृतालापजनितं
स्मितं बिभ्रद्देवो जगदवतु गोवर्धनधरः ॥

व्याख्या—यत्र यगणः मगणः नगणः सगणः भगण लघुः गुरुश्च भवन्ति सा शिखरिणी।

यथा—ननु भोः ईदृशि = एवंविधौ अतिमहति शिखरिणि गोवर्द्धन-गिरौ। अतिशिशोः = अतिबालस्य एतस्य माधवस्य। करात् = हस्तात्। भ्रष्टे = पतिते सति। नूनमेव सर्वे वयं नष्टाः भविष्यामः, तस्मात्कारणात् अखिलैः = समस्तैः अस्माभिः नियतं = निश्चितम् अवधेयम् = ध्यानं दातव्यम् इति = इत्थम्। त्रस्यतां = भयभीतानां गोपानाम्। अनुचितनिभृता-लापजनितम्—अनुचितम् = अनुपयुक्तेन बाल्यावस्थायामेव गोवर्द्धनगिरि-धारणत्वादिति। निभृतेनालापेन = मन्दकथनेन जनितम् = समुत्पन्नम् स्मितं = मृदुहास्यं बिभ्रद् = धारयत्। गोवर्द्धनधरः = गोवर्द्धनधारी देवः = कृष्णः जगद् = विश्वम्। अवतु = पातु।

हिन्दी—जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण मगण नगण सगण भगण एक लघु तथा एक गुरु हो तो वह **शिखरिणी** वृत्त कहलाता है।

यथा—अरे ओ! 'ऐसे अति महान् शिखर वाले गोवर्द्धन के बहुत छोटे से बालक श्रीकृष्ण के हाथ से गिरते ही निश्चित रूप से हम सब नष्ट हो जायेंगे।

अत एव हम सबको अवश्यमेव ध्यान रखना चाहिए' इस प्रकार भयभीत ग्वालों के अनुचित मन्द वार्तालाप को सुनकर मुस्कराते हुए गोवर्द्धनधारी भगवान् श्रीकृष्ण जी संसार की रक्षा करें।

ज स ज स य ल ग

। ऽ । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ

जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः ॥ २ ॥

दुरन्तदनुजेश्वरप्रकरदुःस्थपृथ्वीभरं
जहार निजलीलया यदुकुलेऽवतीर्याशु यः ।
स एष जगतां गतिर्दुरितभारमस्मादृशां
हरिष्यति हरिः स्तुतिस्मरणचाटुभिस्तोषितः ॥

व्याख्या—जसौ जसयला = जगणः सगणः जगणः सगणः यगणः लघुर्गुरुश्चैकः यत्र सा पृथ्वी नाम । वृत्तेऽस्मिन् वसुग्रहयतिः—वसुभिः=अष्टाभिः ग्रहैः=नवभिः च वर्णैः यतिर्भवति ।

यथा—यो हरिः । यदुकुले = यदुवंशे । अवतीर्य = अवतारं गृहीत्वा । निजलीलया = स्वक्रीडया । दुरन्तदनुजेश्वरप्रकरदुःस्थपृथ्वीभरम्—दुरन्तानां= दुर्जेयानां दनुजेश्वराणां = कंसप्रभृतीनाम् प्रकरेण = समुदायेन दुःस्थः= दुःखेस्थितः सोढुमक्षमः यः पृथ्वीभरः = भूभारस्तम् । आशु = त्वरितम् । जहार = अपहृतवान् दूरीचक्रे वा । जगतां = त्रिभुवनानाम् । गतिः = आधारः सः = असौ । एषः मम हृदयस्थितः हरिः । स्तुतिस्मरणचाटुभिः—स्तुत्या = स्तवनेन, स्मरणेन = ध्यानेन चाटुभिः = मिष्टवचनैश्च तोषितः=प्रसादितः अस्मादृशाम् = अस्मद्विधानां पापिनां = दुरात्मनाम् । दुरितभारं = पापभारं हरिष्यति = दूरीकरिष्यति ।

हिन्दी—जहाँ जगण सगण जगण सगण यगण लघु तथा एक गुरु हो तो वह **पृथ्वी** वृत्त होता है । इसके आठ तथा नौ अक्षरों में यति होती है ।

यथा—जिन श्रीकृष्ण माधव ने यदुवंश में अवतीर्ण होकर अनायास ही अपनी लीलाओं द्वारा दुर्जय कंसादि दनुजेश्वरों के समूह से पृथ्वी के पापभार को शीघ्र दूर कर दिया वह जगदाधार हमारे कृष्ण जी स्तुति, स्मरण तथा ध्यान से एवं मिष्टभाषणों से प्रसन्न होते हुए हमारे समान पापियों के पापपुञ्ज को दूर कर देंगे ।

भ र न भ न ल ग

ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । । । । । ऽ

दिङ्मुनिवंशपत्रपतितं भरनभनलगैः ॥ ३ ॥

(क) नूतनवंशपत्रपतितं रजनिजललवं
पश्य मुकुन्द ! मौक्तिकमिवोत्तममरकतगम् ।
एव च तं चकोरनिकरः प्रपिबति मुदितो
वान्तमवेत्य चन्द्रकिरणैरमृतकणमिव ॥

(ख) तम्प्रति लब्धजन्म शनकैः कथमपि लघुनि
क्षीणपयस्युपेयुषि भिदां जलधरपटले ।
खण्डितविग्रहं बलभिदो धनुरिह विविधाः
पूरयितुं भवन्ति विभवः शिखरमणिरुचः ॥

इति भारविः । (५।४३)

व्याख्या—भगण रगण नगण भगण नगण लघु गुरुभिः वंशपत्रपतितं नाम वृत्तम् यत्र दिङ्मुनिः—दिशश्च मुनयश्च=अष्टौ च सप्त च तेषां समाहारस्तत् यतिस्थानम् ।

यथा—(क) हे मुकुन्द=हे माधव ! नूतनवंशपत्रपतितं – नूतनम् =अभिनवं, हरितं यद् वंशपत्र=वेणुकिसलयं तत्र पतितं=स्खलितम् । रजनिजललवम्=रजनिवारिबिन्दु । उत्तममरकतगम्—उत्तमम्=उत्कृष्टं मरकतगम्=मरकतमणिपात्रस्थितम् । मौक्तिकम् इव=मुक्तामणिरिव पश्य । एषः=अयम् । चकोरनिकरः=चक्रवाकसमुदायः । चन्द्रकिरणैः=सोमरश्मिभिः । वान्तं=प्रस्यन्दितम् । अमृतकणम् इव=सुधाकणसमम् । अवेत्य=विज्ञाय मुदितः=प्रसन्नः सन् प्रपिबति=प्रकर्षेण पानं करोति ।

(ख) सम्प्रति=इदानीम् शरदृतौ । इह = अत्र पर्वतौ । विविधाः= नानाविधाः । शिखरमणिरुचः—शिखरे=शृङ्गे मणिरुचः = रत्नप्रभाः । क्षीणपयसि=जलशून्ये । लघुनि=ह्रस्वे एवं भिदां=भेदम् । उपेयुषि=प्राप्तवति । जलधरपटले=घनमंडले । कथमपि=केनापि प्रकारेण । शनकैः=शनैः शनैः । लब्धजन्म=उत्पन्नम् । खण्डितविग्रहम् = छिन्नमूर्तिम् । बलभिदः=शक्रस्य ।

धनुः=चापम् । इव=यथा । पूरयितुम् = भरितुम् । विभवाः=समर्थाः सक्षमाः भवन्ति ।

हिन्दी—भगण रगण नगण भगण नगण एक लघु तथा एक गुरु हो वह वंशपत्रपतित वृत्त कहलाता है । इसमें आठ तथा सात वर्णों में यति होती है ।

यथा—(क) हे मुकुन्द ! नवीन अर्थात् हरे बाँस के पत्तों पर पड़ी ओस की बूँदें उत्तम मरकतमणि निर्मित पात्र में रखे मोती जैसी देखो । यह चकोर पक्षियों का समुदाय चन्द्रकिरणों से अभिवृष्ट अमृतकण जानकर प्रसन्न होकर पी रहा है ।

(ख) इस शरद् ऋतु में इस पर्वत पर विविध शिखर मणि कान्ति जलहीन थोड़े छिन्नभिन्न मेघ-मण्डल में किसी प्रकार धीरे-धीरे उत्पन्न होकर खण्डित रूप वाले इन्द्रधनुष को पूरा करने में समर्थ हैं ।

म भ न त त गग

SSSS ।। ।।।SS।S S।SS

मन्दाक्रान्ताऽम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्मम् ॥ ४ ॥

प्रेमालापैः प्रियवितरणैः प्रीणितालिङ्गनाद्यै-
मन्दाक्रान्ता तदनु नियतं वश्यतामेति बाला ।
एवं शिक्षावचनसुधया राधिकायाः सखीनां
प्रीतः पायात् स्मितसुवदनो देवकीनन्दनो नः ॥

व्याख्या—मगण भगण नगण द्वि तगण द्वि गुरुवर्णैश्च मन्दाकान्ता भवति । तत्र अम्बुधिरसनगैः=चतुर्भिः षड्भिः सप्तभिर्वर्णैश्च यतिः स्यात् ।

यथा—प्रेमालापैः=प्रीतिवचोभिः । प्रियवितरणैः=प्रियवस्तुप्रदानैः । आलिङ्गनाद्यैः=आलिङ्गनादिक्रियाभिः प्रीणिता = सन्तोषिता । तदनु= तत्पश्चात् मन्दाक्रान्ता—मन्दं=शनैः शनैः आक्रान्ता=रमणार्थं प्रेरिता बाला । नियतम्=अवश्यं वश्यतां=वशीकरणत्वम् एति=गच्छति । एवम्=इत्थम् राधिकायाः=वृषभानुजायाः सखीनाम्=अलिनाम् शिक्षावचनसुधया=उपदेशामृतेन प्रीतः=मुदितः अत एव स्मितेन=मन्दहास्येन सुवदनः शुभाननः देवकीनन्दनः—देवकीसूनुः कृष्णः । नः=अस्मान् पायात्=रक्षेत् ।

हिन्दी—मगण, भगण, नगण दो तगण तथा दो गुरु वर्णों वाला मन्दाक्रान्ता वृत्त होता है । इसमें चौथे, छठे तथा सातवें वर्णों पर यति होती है ।

यथा—प्रीति वचनों तथा प्रियवस्तु प्रदान करने और आलिङ्गन आदि क्रियाओं से सन्तोषित, तत्पश्चात् धीरे-धीरे रमणार्थ प्रेरित वाला अवश्यमेव प्रसन्न हो जाती है । इस प्रकार राधिका की सखियों के उपदेशामृत से प्रसन्न मन्दहास्य से प्रसन्न वदन देवकीनन्दन श्रीकृष्ण जी हमारी रक्षा करें ।

न स म र स लग

।।।।।S SSS।S।।S ।S

नसमरसला गः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता ॥ ५ ॥

व्यधित स विधिनेत्रं नीत्वा ध्रुवं हरिणीगणाद्
व्रजमृगदृशां सन्दोहस्योल्लसन्नयनश्रियम् ।
यदयमनिशं दूर्वाश्यामे मुरारिकलेवरे
व्यकिरदधिकं बद्धाकाङ्क्षे विलोलविलोचनम् ॥

व्याख्या—नगण-सगण-मगण-रगण-सगण-लघु-गुरुभिश्च हरिणीवृत्तम् । अत्र षड्वेदैः=चतुर्भिः, षड्भिः । हयैः=सप्तैः वर्णैः यतिर्भवति ।

यथा—सः=असौ विधिः=विधाता । हरिणीगणात्=मृगीवृन्दात् । नेत्रं=चक्षुः नीत्वा=गृहीत्वा । व्रजमृगदृशाम्=व्रजमृगनयनीनाम् सन्दोहस्य =समूहस्य । उल्लसन्तीं=शोभमानां नयनाश्रियं = नेत्रसुषमाम् । व्यधित= रचितवान् । इति ध्रुवम्=नियतम् । यद्=यतः अयं व्रजाङ्गनानां सन्दोहः= व्रजबालावृन्दम् दूर्वाश्यामे=दूर्वाघासमिव हरिते । बद्धाकांक्षे—बद्धा=संजाता आकांक्षा=अवलोकनेच्छा यस्मिन् तथाविधे । मुरारिकलेवरे—मुरारेः= श्रीकृष्णस्य कलेवरे=शरीरे । विलोलं=चपलं, विलोचनं=नयनम् । अनिशम्=अहर्निशम् । अतिशयम् = अत्यन्तम्, व्यकिरत्=अक्षिपत् ।

कूजन करते हुए) उन नन्दनन्दन कृष्ण जी का मैं सदैव हृदय से चिन्तन करता हूँ ।

म भ न म य ल ग

S S S S I I I I I I S S S I S S I S

वेदर्त्वश्वैर्मभनमयला गश्चेत्तदा हारिणी ॥ ८ ॥

यस्या नित्यं श्रुतिकुवलये श्रीशालिनी लोचने
राग: स्वीयोऽधरकिसलये लाक्षारसारञ्जनम् ।
गौरी कान्तिः प्रकृतिरुचिरा रम्याङ्गरागच्छटा
सा कंसारेरजनि न कथं राधा मनोहारिणी ॥

व्याख्या—यदा चरणे मगण-भगण-नगण-मगण-रगण-लघु-गुरवश्च भवन्ति तदा हारिणीवृत्तं कथ्यते । तत्र चतुर्भिः षड्भिः सप्तभिर्वर्णैश्च यतिर्भवति ।

यथा—यस्याः=राधिकायाः श्रीशालिनी=शोभायुक्ते लोचने= नयने एव श्रुतिकुवलये–श्रुती एव कुवलये ते=कर्णारविन्दे । अधरकिसलये= ओष्ठपल्लवे । स्वीयः=निजः स्वाभाविकः । रागः=रङ्गः एव । लाक्षारसेन=अलक्तकरसेनारञ्जनम्=अरुणीकरणम् । गौरी वर्णा=शुभ्रा । प्रकृतिरुचिरा=स्वभावमनोरमा । कान्तिः=दीप्तिः एव रम्याङ्गरागच्छटा–रम्या= रमणीया अङ्गरागस्य=कुंकुमादिविलोपनशोभा सा राधा=राधिका । कंसारेः=कंसरिपोः श्रीकृष्णस्य । मनोहारिणी=मनोरमा । कथं न अजनि= कथं न जाता ?

हिन्दी—मगण, भगण, नगण, मगण, यगण, एक लघु तथा एक गुरु युक्त छन्द हारिणी होता है। इसमें चार, छह तथा सात वर्णों से यति होती है ।

यथा—जिस राधिका की शोभाशालिनी है, मनोहर आँखों रूपी कर्णारविन्द, अधरपल्लव स्वभाविक रक्तिमा रूपी लाक्षारस (महावर) से आलेपन, गौरवर्ण वाली प्रकृतिरुचिरा शरीर-कान्ति, मनोरम अङ्गरागच्छटा से उत्पन्न कान्ति वाली राधा कंसारि श्रीकृष्ण जी के मन को क्यों नहीं हर लेती है ?

म भ न र स ल ग

S S S S I I I I I I S I S I I S I S

भाराक्रान्ता मभनरसला गुरुः श्रुतिषड्हयैः ॥ ९ ॥

भाराक्रान्ता मम तनुरियं गिरीन्द्रविधारणात्
कम्पं धत्ते श्रमजलकणं तथा परिमुञ्चति ।
इत्यावृण्वञ्जयति जलदस्वनाकुलबल्लवी-
संश्लेषोत्थं स्मरविलसितं विलोक्य गुरुं हरिः ॥

व्याख्या—यत्र मभनरसला गुरुः=मगण-भगण-रगण-सगण-लघवः, एको गुरुश्च स्यात् सा भाराक्रान्ता । तत्र श्रुतिषड्हयैः–श्रुतिभिः=चतुर्भिः षड्भिः हयैः=सप्तभिर्वर्णैश्च यतिर्भवेत् ।

यथा—हरिः=माधवः । गुरं=गुरुजलं विलोक्य गिरीन्द्रविधारणात्= गिरीन्द्रस्य=गोवर्द्धनस्य विधारणात्=संधारणात् । भाराक्रान्ता=भारैः आक्रान्ता=भाराकुलिता इयं=एषा मम=मे तनुः=शरीरं, कम्पम्= वेपनं धत्ते=धारयति, कम्पत इति । तथा श्रमजलकणं=स्वेदकणम् । परिमुञ्चति=त्यजति, प्रकटयति । एवम् जलदस्वनेन जलदस्य=घनस्य स्वनेन=ध्वनिना । आकुलानां=पीडितानाम् वल्लवीनाम्=गोपिकानाम् संश्लेषेण=आलिंगनेनोत्थं=समुत्पन्नम्, स्मरविलसितम्=कामविलासम् । आवृण्वन्=आच्छादयन् जयति ।

हिन्दी—जहाँ क्रमशः मगण, भगण, नगण, रगण, सगण, एक लघु तथा एक गुरु हो वह भाराक्रान्ता वृत्त कहलाता है ।

यथा—श्रीकृष्ण जी गुरुजन को देखकर "गिरिराज गोवर्द्धन धारण करने से भाराक्रान्त यह मेरा शरीर काँप रहा है तथा स्वेदबिन्दु टपक रहे हैं ।" इस प्रकार घन-ध्वनि से आकुलित गोपियों के आलिंगन से उत्पन्न कामविकार को छिपाते हुए विजय प्राप्त करते हैं ।

अत्र वृत्तरत्नाकरपरिशिष्टे इमानि छंदास्यधिकानि दृश्यन्ते—

न न म र स ल ग

I I I I I I S S S S I S I I S I S

रसयुगहययुङ् नौ म्रौ सो लगौ हि यदा हरिः ॥ १ ॥

हिन्दी–मगण, तगण, नगण तथा तीन यगणों वाली कुसुमितलतावेल्लिता होती है। इसमें पञ्चम, षष्ठ तथा सप्तम वर्णों से यति होती है।

यथा–(क) क्रीडा करती हुई कालिन्दी की ललित लहरियों वाले जल से खेलती दक्षिण दिशा वाली शीतल मन्द सुगन्ध वायु से धीरे-धीरे पुष्पित लता वेलों से कम्पित हस्त-पल्लवों से शोभित भ्रमर-पंक्तियों के गीतों से गुञ्जरित ध्वनि ने नृत्य-शोभा को फैलाती हुई चक्रपाणि श्रीकृष्ण के मन को प्रसन्नता से चञ्चल बना दिया।

(ख) शोथ (सूजन) का रोगी व्यक्ति को ग्रामीण बकरे आदि का मांस, जलमें होने वाले कछुए आदि का मांस, पानी वाली भूमि में होने वाले शूकर आदि का मांस, नमक, सूखा साग, नया चावल, गुड़ से बना पदार्थ, पीसा हुआ अन्न, खिचड़ी, दही, विना जल की मदिरा, भारी (गरिष्ट) तथा प्रकृति के प्रतिकूल और अधिक जलन डालने वाला भोजन, दिन में शयन तथा स्त्री, इन सबका परित्याग कर देना चाहिए।

न ज भ ज र र

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ

नजभजरैस्तु रेफसहितैः शिवैर्हयैर्नन्दनम् ॥ २ ॥

(क) तरणिसुतातरङ्गपवनैः सलीलमान्दोलितं
मधुरिपुपादपङ्कजरजःसुपूतपृथ्वीतलम् ।
मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसंस्मारकं
क्षितितलनन्दनं व्रज सखे ! सुखाय वृन्दावनम् ॥

(ख) अहृत धनेश्वरस्य युधि यः समेतमायोधनं
तमहमितो विलोक्य विबुधैः कृतोत्तमायोधनम् ।
विभवमदेन निह्नुतह्रियाऽतिमात्रसम्पन्नकं
व्यथयति सत्पथादधिगताऽथवेह सम्पन्नकम् ? ॥

इति भट्टौ १०।३६ ॥

व्याख्या—रेफसहितैः अन्ते रगणेन युक्तैः नगण-जगण-भगण-जगण-रगणैः नन्दनं नाम वृत्तं भवति। अत्र शिवैः = एकादशभिः हयैः = सप्तभिश्च यतिर्भवति।

(क) सखे=हे मित्र ! तरणिसुतातरङ्गपवनैः—तरणिसुतायाः = यमुनायाः तरङ्गैः = तरङ्गयुक्तैः पवनैः =वातैः। सलीलम् = सविलासम्, आन्दोलितं = कम्पितं मधुरिपुपादपङ्कजरजःसुपूतपृथ्वीतलम्—मधुरिपोः = माधवस्य पादपङ्कजयोः = चरणकमलयोः रजः तेन सुपूतं = सम्यक् पवित्रीकृतम् पृथ्वीतलम् = भूतलम् यत्र तथाविधम्। मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसंस्मारकं—मुरहरस्य= कृष्णस्य यानि चित्राणि=अद्भुतानि चेष्टितानि=गोवर्द्धनधारणादीनि कलाः =नृत्यादिकलाः तासां कलापस्य समुदायस्य संस्मारकं=स्मृतिदायकम्। क्षितितलनन्दनं=भूतलनन्दनम् स्वर्गकाननम् इव=स्वर्गोद्यानं नन्दनवनमिव स्थितं वृन्दावनं=वृन्दावनस्थानम् सुखाय=आनन्दाय व्रज=प्रयाहि।

(ख) यः=रावणः युधि=रणे। समेता=अवलम्बिता। मायः= मायावी धनस्य=कुबेरस्य। धनम्=कोषम्। अहृत=अहरत् विबुधैः=सुरैः सह कृतोत्तमायोधनम्—कृतं=विहितम् उत्तमं=श्रेष्ठम् आयोधनं=युद्धं येन तम् निह्नुतह्रिया—निह्नुता=दूरीकृता ह्री = त्रपा येन=लज्जापहारकेण। विभवमदेन=ऐश्वर्याभिमानेन। अतिमात्रम्=अत्यन्तम् सम्पन्नकं=संयुक्तं तं =रावणम्। विलोक्य=दृष्ट्वा। अहम् इतः आगतः। अथवा=वा। इह= लोकेऽस्मिन् अधिगता=प्राप्ता सम्पद्=सम्पत्तिः कं=कं जनं न व्यथयति= पीडयति।

हिन्दी—नगण, जगण, भगण, जगण तथा दो रगण होने पर नन्दन नामक छन्द होता है। इसमें ११ तथा ७ पर यति होती है।

(क) सखे ! यमुना की तरङ्गों वाली वायु से कौतुक सहित आन्दोलित माधव के पाद पद्मों की रज से पवित्र भूतल वाला मुरारि श्रीकृष्ण की अद्भुत चेष्टाएँ गोवर्द्धन पर्वतादि धारण करने के क्रिया कलापों की याद दिलाने वाले भूतल का नन्दन वने बृन्दावन को आनन्द के लिए जाओ।

(ख) जिस रावण ने युद्ध में छल कपट से कुवेर का खजाना छीन लिया और देवताओं के साथ महान् युद्ध किया, उस निर्लज्ज (रावण) को विभव के मद से अत्यन्त सम्पन्न देखकर मैं इधर आया हूँ। अथवा इस संसार में प्राप्त हुई सम्पत्ति किस व्यक्ति को सत्पथ से विचलित नहीं कर देती है।

न न र र र र

। । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

इह ननरचतुष्कसृष्टन्तु नाराचमाचक्षते ॥ ३ ॥

(क) दिनकरतनयातटीकानेन चारुसञ्चारिणी
श्रवणनिकटकृष्टमेणेक्षणा कृष्ण ! राधा त्वयि ।
ननु विकिरति नेत्रनाराचमेषाऽतिहृच्छेदनं
तदिह मदनविभ्रमोद्भ्रान्तचित्तां विधत्स्व द्रुतम् ॥

(ख) रघुपतिरपि जातवेदोविशुद्धां प्रगृह्य प्रियां
प्रियसुहृदि विभीषणे सङ्गमय्य श्रियं वैरिणः ।
रविसुतसहितेन तेनानुयातः ससौमित्रिणा
भुजविजितविमानरत्नाधिरूढः प्रतस्थे पुरीम् ॥

इति रघौ १२।१०४ ॥

व्याख्या—नगणद्वयेन रगणचतुष्टयेन च सृष्टं = जातं, नाराचनामकं वृत्तं भवति ।

यथा—(क) कृष्ण = हे माधव ! दिनकरतनयातटीकानेन = दिनकरतनया = कालिन्दी तस्या या तटी = तटभूमिः, तस्याः कानने = अरण्ये । चारुसञ्चारिणी—चारु = रुचिरं यथा तथा सञ्चारिणी = भ्रमयन्ती । एणेक्षणा—एण्याः = हरिण्याः ईक्षणे इव ईक्षणे यस्याः सा = मृगीदृशी । एषा = इयं राधा = वृषभानुजा । त्वयि = तवोपरि । श्रवणनिकटं = कर्णपार्श्वम् । कृष्टम् = आकृष्टम् । अतिहृच्छेदनम् —अतिशयेन हृदः छेदनम् = अतीवहृदयपीडाकरम् । नेत्रनाराचम् = नयनधनुर्बाणविशेषम् । विकिरति = प्रक्षिपति । तत् = अतः अस्मिन् समये = अस्मिन् कालेऽत्र तां = राधिकाम् । द्रुतं = त्वरितम् । मदनविभ्रमोद्भ्रान्तचित्तां—मदनस्य = मन्मथस्य विभ्रमेण = विलासेन उद्भ्रान्तं = चपलं चित्तं यस्याः सा, ताम् । विधत्स्व = धारय, सावधानो भव ।

(ख) रघुपतिः = दाशरथिः रामः । अपि जातवेदसि = अग्नौ विशुद्धां = शुद्धां प्रियां = मैथिलीम् । प्रगृह्य = गृहीत्वा प्रियसुहृदि = प्रियमित्रे विभीषणे । वैरिणः = रिपोः रावणस्य । श्रियं = राज्यलक्ष्मीम् । सङ्गमय्य = सङ्गं कृत्वा । रविसुतसहितेन = सुग्रीवसहितेन ससौमित्रिणा—सुमित्रायाः सुतः सौमित्रिः तेन सहितं ससौमित्रिः तेन = सलक्ष्मणेन तेन = विभीषणेन अनुयातः = अनुगच्छतः सन् विमानं रत्नमिव इति विमानरत्नम् भुजजितं यद् विमानरत्नं तदारूढं = बाहुबलजितपुष्पकविमानम् आरूढः सन् । पुरीं = अयोध्याम् । प्रतस्थे = प्रचलितवान् ।

हिन्दी—दो नगण तथा चार रगणों से युक्त नाराच छन्द कहलाता है ।

यथा—(क) हे कृष्ण ! यमुना-तटवर्ती कानन में मनोरम भ्रमण करने वाली यह राधा मृगनयनी तुम्हारे ऊपर कानों तक खींच कर अतिहृदयविदारक नयनबाण चलाती है अतएव इस समय इस कानन में उस राधा को शीघ्र कामविलास से उद्भ्रान्तचित्त को सावधान करो ।

(ख) रघुपति भी अग्नि परीक्षा में विशुद्ध प्रिया सीता को स्वीकार कर प्रिय मित्र विभीषण पर शत्रु रावण की राज्यलक्ष्मी डाल कर रविसुत सुग्रीव के साथ लक्ष्मण सहित विभीषण द्वारा अनुगमन करते हुए, बाहुबल से जीते पुष्पक विमान पर बैठकर अयोध्या पुरी को चल दिये ।

म भ न ल त त ग ग

ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

मन्दाक्रान्ता नपरलघुयुता कीर्तिता चित्रलेखा ॥ ४ ॥

शङ्केऽमुष्मिञ्जगति मृगदृशां साररूपं यदासी-
दाकृष्येदं व्रजयुवतिसभा वेधसा सा व्यधायि ।
नैतादृक् चेत्कथमुदधिसुतामन्तरेणाच्युतस्य
प्रीतं तस्यां नयनयुगमभूच्चित्रलेखाद्भुतायाम् ॥

म स ज स त स

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । । । ऽ

मः सो जः सतसा दिनेशऋतुभिः शार्दूलललितम् ॥ ५ ॥

कृत्वा कंसमृगे पराक्रमविधिं शार्दूलललितं
यश्चक्रे क्षितिभारकारिषु दरं चैद्यप्रभृतिषु ।
सन्तोषं परमं तु देवनिवहे त्रैलोक्यशरणं
श्रेयो नः स तनोत्वपारमहिमा लक्ष्मीप्रियतमः ॥

व्याख्या—मन्दाक्रान्तालक्षणयुता—मगण-भगण-नगण-लघु-सगणाः द्वौ गुरू यत्र सा चित्रलेखा।

यथा—अमुष्मिन्=अस्मिन् जगति संसारे। मृगदृशां=मृगनयनीनाम् स्त्रीणाम् यत्साररूपं=यदुत्तमांशभूतम्। सौन्दर्यमासीत्, वेधसा=विधात्रा इदं साररूपम् आकृष्य=गृहीत्वा सा व्रजयुवतिसभा=व्रजतरुणिपरिषत्। व्यधायि=विरचिता इत्यहं शंके=तर्कयामि। चेत्=यदि। एतादृक्=एतद् विधं न स्यात् तदा कथम् उदधिसुतां=कमलाम् अन्तरेण=विना। चित्रलेखाद्भुतायां=चित्रितायामिवाद्भुतरूपायां तस्यां व्रजतरुणिसभायाम्। अच्युतस्य=माधवस्य। नयनयुगं=नेत्रयुगलम्। प्रीतं=हृदयहारि अभूत्=बभूव।

हिन्दी—मन्दाक्रान्ता लक्षणों वाली क्रमशः मगण, भगण, नगण, एक लघु, तगण, सगण तथा दो गुरु हों वह चित्रलेखा वृत्त होता है।

यथा—इस संसार में मृगनयनी स्त्रियों का जो साररूप श्रेष्ठ-अंश-सौन्दर्य था वह विधाता ने सार रूप में खींचकर व्रज-युवतियों की सभा बनाई है, मैं यह शंका करता हूँ। यदि इस प्रकार न हो तो कैसे लक्ष्मी के बिना चित्रित-सी विचित्र-रूपा उस व्रज-युवती-सभा में अच्युत श्रीकृष्ण जी के दोनों नयन प्रीतिमान् हो गये थे।

अत्र वृत्तरत्नाकरपशिष्टेऽष्टनानि चछन्दांस्यधिकानि दृश्यन्ते—

म स ज ज भ र
S S S I I S I S I I S I S I I S I S

मात्सो जौ भरसंयुतौ करिबाणकैर्हरिणप्लुतम् ॥ १ ॥

भ भ भ भ भ स
S I I S I I S I I S I I S I I I I S

पञ्चभकारयुताश्वगतिर्यदि चान्तसरचिता ॥ २ ॥

य म न स त स
I S S S S S I I I I I S S S I I I S

सुधातर्कैस्तर्कैर्भवति ऋतुभिर्यो मोनसततसाः ॥ ३ ॥

म न न त त म
S S S I I I I I I S S I S S I S S S

वर्णाश्वैर्मननततमकैः कीर्तिता चित्रलेखेयम् ॥ ४ ॥

भ र न न न स
S I I S I S I I I I I I I I I I I S

भाद् रनना नसौ भ्रमरपदकमिदमभिहितम् ॥ ५ ॥

म स ज स र म
S S S I I S I S I I I S S I S S S S

शार्दूलं वद मासषट्कयति मः सो जसौ रो मश्चेत् ॥ ६ ॥

म भ न य र र
S S S S I I I I I I S S S I S S I S

अर्थाश्वाश्वैर्मभनयरयुगैर्वृत्तं मतं केसरम् ॥ ७ ॥

म भ न ज भ र
S S S S I I I I I I S I S I I S I S

म्भौ न्जौ भ्रौ चेच्चलमिदमुदितं युगैर्मुनिभिः स्वरैः ॥ ८ ॥

न न र र र र
I I I I I I S I S S I S S I S S I S

यदिह नयुगलं ततो वेदरेफैर्महामालिका ॥ ९ ॥

व्याख्या—पादे मात् = मगणात् सगण-जगण-जगण-भगण-रगणैर्युतं हरिणप्लुतं वृत्तम्। अत्र अष्टाभिः, पञ्चभिः, पञ्चभिश्च विरामो भवति। पंचभगणैः सगणेन च युता अश्वगतिः भवति। यगण-मगण-नगण-सगण-तगण-सगणैः सुधावृत्तम्। तत्र षड्भिः षड्भिः षड्भिश्चाक्षरैर्विरामो भवति। मगण-नगण-नगण-तगण-तगण-मगणैश्चित्रलेखावृत्तं, यत्र वर्णाश्वैः=चतुर्भिः सप्तभिश्च विरामो भवति। भगणात् परं रगण-नगण-नगण-नगण-सगणैः भ्रमरपदकं नाम वृत्तम्। मगण-सगण-जगण-सगण-रगण-मगणैः शार्दूलं नाम वृत्तम् यत्र मासैः=द्वादशभिः षड्भिश्चाक्षरैर्विरामः स्यात्। मगण-भगण-नगण-यगण-रगण-रगणैः केसरं नाम वृत्तम्। यत्र चतुर्भिः सप्तभिः सप्तभिश्चाक्षरैर्विरामो भवेत्। मगण-सगण-नगण-जगण-यगण-सगणैः चलं नाम वृत्तम्। तत्र युगैः=चतुर्भिः स्वरैः=सप्तभिः सप्तभिश्च वर्णैर्यतिः भवति। नगण-द्वयेन रगण-चतुष्टयेन च महामालिका नाम वृत्तं भवति।

हिन्दी—जहाँ मगण के बाद सगण, दो जगण, भगण और रगण हों और आठ, पाँच, पाँच अक्षरों से विराम हो वह हरिणप्लुत, पाँच मगणों से युक्त अन्त में सगण होने पर अश्वगति, यगण, मगण, नगण, सगण, तगण तथा सगण और छः, छः, छः वर्णों से विराम होने पर सुधा, मगण, दो नगण, दो तगण, मगण तथा चार तथा सात वर्णों से विराम होने पर चित्रलेखा; भगण के बाद रगण, तीन नगण और सगण हो वह भ्रमरपदक, जहाँ मगण, सगण, जगण, सगण, रगण और मगण हों तो शार्दूल वृत्त होता है, इसमें १२ तथा ६ अक्षरों से विराम होता है. मगण, भगण, नगण, यगण तथा दो रगण और चार, सात व सात अक्षरों से विराम होने पर केसर, मगण, भगण, नगण, जगण, भगण और रगण एवं चार, सात तथा सात अक्षरों से यति हो तो चल नामक छन्द और दो नगण एवं चार रगण युक्त महामालिका वृत्त होता है।

(१९) अतिधृतिः (ऊनविंशत्यक्षरा वृत्तिः)।

य म न स र र ग

I S S S S S I I I I I S S I S S I S S

रसर्त्वश्वैर्य्मौन्सौ ररगुरुयुतौ मेघविस्फूर्जिता स्यात् ॥ १ ॥

(क) कदम्बामोदाढ्या विपिनपवनाः केकिनः कान्तकेका
विनिद्राः कन्दल्यो दिशि दिशि मुदा दर्दुरा दृप्तनादाः।
निशा नृत्यद्विद्युद्विलसितलसन्मेघविस्फूर्जिता चेत्
प्रियः स्वाधीनोऽसौ दनुजदलनो राज्यमस्मात्किमन्यत् ॥

(ख) उदञ्चत्कावेरीलहरिषु परिष्वङ्गरङ्गे लुठन्तः
कुहूकण्ठीकण्ठीरवरवलवत्रासितप्रोषितेभाः।
अमी चैत्रे मैत्रावरुणितरुणीकेलिकङ्केलिमल्ली-
चलद्वल्लीहल्लीसकसुरभयश्चण्डि ! चञ्चन्ति वाताः ॥

इति कस्यचित्।

व्याख्या—यगण मगण नगण सगण रगण रगण गुरवः यत्र भवन्ति सा मेघविस्फूर्जिता भवति। अत्र रसैः=षड्भिः ऋतुभिः=षड्भिः अश्वैः=सप्तभिश्च यतिर्भवति।

यथा—(क) विपिनपवनाः—विपिनस्य = काननस्य पवनाः=वायवः। कदम्बामोदाढ्याः—कदम्बानां = कदम्बकुसुमानामामोदेन = सौरभेनाढ्या =सम्पृक्ताः। केकिनः=मयूराः कान्तकेकाः—कान्ता = मधुरा केका ध्वनिर्येषां ते। कन्दल्यः=भूकदलीविशेषाः। विनिद्राः=विकचिताः दिशि दिशि=सर्वासु दिक्षु। दर्दुराः=मण्डूकाः मुदा=आमोदेन दृप्तः = गर्वितः नादः=रवः येषां तथाविधाः। निशाः=यामिन्यः नृत्यन्तीनां=विस्फुरन्तीनां विद्युतां=सौदामिनीनां विलसितेन=स्फुरणेन लसन्=विलसन् यो मेघः घनः तस्य विस्फूर्जितं=गर्जनं यस्यां तथाविधा अस्तीति। चेत्=यदि इदानीं प्रियः=प्रेमयुतः असौ दनुजदलनः—दनुजानां=दानवानां दलनः=नाशकः= श्रीकृष्णः। स्वाधीनः=स्वछन्दः स्यात्तर्हि, अस्मात्=एतस्मात् प्रियसमागमात् अन्यद्=अतिरिक्तं राज्यं=राज्यसुखं किम् ?

(ख) चण्डि=हे कोपने ! चैत्रे=चैत्रमासे। उदञ्चत्कावेरीलहरिषु—उदञ्चतीषु = उच्छलन्तीषु कावेर्याः=कावेरीनद्याः लहरिषु=तरंगेषु। परिष्वंग-रंगे—परिष्वंगः=आलिंगनम् स एव रंगः = नृत्यमञ्चस्तत्र लुठन्तः कावेरीचञ्चलतरंगसंसर्गशीतलाः इति। कुहू इति ध्वनिः कण्ठे यस्याः सा कुहूकण्ठी=कोकिला सैव कण्ठीरवः=सिंहस्तस्य रवलवेन = गर्जनलवेन, अल्पध्वनेरित्यर्थः। त्रासिताः—भयं प्रापिताः प्रोषिताः=विदेशगताः विरहिणः, त एव इभाः=गजाः यैस्ते तथाविधाः। मैत्रावरुणितरुणीकेलिकङ्केलिमल्ली—मैत्रावरुणेः=अगस्त्यस्य तरुण्याः=युवत्याः भार्यायाः लोपमुद्रायाः केल्यै=क्रीडार्थं यः कङ्केलिः=अशोकपादपः मल्ली=मल्लिका चलद्वल्ली=चपला लता च, तासां हल्लीसकेन वृत्ताकारेण नृत्येन तद्वशात् पतितैः पुष्पैरिति सुरभयः=सौरभाणि वाताः=पवनाः। चान्ति=वहन्ति, चलन्ति।

हिन्दी—जहाँ यगण, यगण, नगण, सगण, रगण, रगण और एक गुरु हो तथा छह, छह, सात वर्णों से यति हो तो मेघविस्फूरिता वृत्त होता है।

यथा—(क) वन-वायु कदम्ब-पुष्पों की सुगन्ध से सम्पृक्त है। मयूरों की कर्णप्रिय ध्वनि कन्दली के फूल सभी दिशाओं में ही मेढक प्रसन्नता से उद्धत

नाद करते व स्फुरित होती हुई बिजलियों के विलास से शोभायमान मेघ के निर्घोष वाली रात्रि है। ऐसे समय पर यदि प्रिय श्रीकृष्ण इच्छानुसार कार्य करने वाले बन जायें तो इससे बढ़कर और राज्य क्या हो सकता है?

(ख) हे क्रोधयुक्ते! वसन्त में उफनाती हुई कावेरी नदी की लोल लहरों में क्रीडा करने वाला, कोयल रूपी सिंह की थोड़ी गर्जन से भी विरही जन रूपी हाथियों को भयभीत करने वाला, अगस्त्य मुनि की पत्नी लोपमुद्रा की क्रीडा के लिए उगाये हुए, अशोक मल्लिका तथा विलसित लताओं के घूम-घूम कर किये गये नृत्य के कारण पुष्पों के संसर्ग से सुगन्धयुक्त वायु चल रही थी।

य म न स त त ग

। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

भवेत्सेवच्छाया तयुगगयुता स्याद् द्वादशान्ते यदा ॥ २ ॥

अभीष्टं जुष्टो यो वितरति लसद्दोश्चारुशाखोज्ज्वलः
स्फुरन्नानारत्नस्तबकिततनुश्चित्रांशुकालम्बितः।
न यस्याङ्घ्रैश्छायामुपगतवतां संसारतीव्रातप-
स्तनोति प्रोत्तापं स जगदवतात् कंसारिकल्पद्रुमः॥

व्याख्या—यगण-मगण-नगण-सगण-तगण-तगणाः-गुरवः यत्र क्रमशः स्युः, द्वादशाक्षरैः विरामश्च सा छाया कथ्यते।

यथा—लसद्दोश्चारुशाखोज्ज्वलः—लसन्तः=शोभायमानाः दोषो भुजा एव चारु शाखाभिः = मनोरमलताभिरुज्ज्वलाः=देदीप्यमानः। स्फुरन् नानारत्नस्तबकिततनुः—स्फुरद्भिः=कान्तियुक्तैर्नानारत्नैः= विविधमणिभिः स्तबकिता=गुच्छान्विता तनुः=शरीरं यस्य सः चित्रांशुकालम्बितः—चित्रैः = अद्भुतैः अंशुकैः = वासोभिः आलम्बितं = आधारितं येन तथाविधः यः कंसारिकल्पद्रुमः—कंसस्य=औग्रसेनिनः अरिः=रिपुः श्रीकृष्णस्वरूपः कल्पद्रुमः=सुरतरुः। जुष्टः=सेवितः सन्। अभीष्टं=मनोवाञ्छितं पदार्थं, वितरति = वितरणं करोति, ददाति। यस्य=श्रीकृष्णरूपसुरपादपस्य। अंघ्रैः=पादैः। छायां = प्रच्छायं, संसारतीव्रातपः=संसार एव=लोक एव तीव्रातपः = तीक्ष्णश्चासौ आतपः=घर्मः उपगतवतां=

सम्प्राप्तवताम् भक्तानां, प्रोत्तापं = पीडाम् न तनोति=नैव विस्तारयति। सः=तथाविधः श्रीकृष्णसुरपादपः जगत्=विश्वम्, अवतात्=रक्षतु।

हिन्दी—यगण, मगण, नगण, सगण-दो तगण तथा एक गुरु होने पर छाया नामक छन्द होता है। यहाँ द्वादशाक्षरों पर विराम होता है।

यथा—शोभायमान मनोरम भुजलताओं से उज्ज्वल, कान्तियुक्त विविध रत्नों से गुच्छान्वित (गुलदस्ता-सा बने हुए) शरीर वाले; अद्भुत वस्त्रों से आलम्बित कंसारि श्रीकृष्ण रूपी कल्पवृक्ष सेवित होते हुए मनोवांछित वस्तु प्रदान करता है, जिस श्रीकृष्ण रूप कल्पवृक्ष के चरणों से की गई छाया को संसार के तीव्र आतप प्राप्त किये हुए भक्तों को उत्ताप नहीं वितरित करता है। ऐसे कंसारि श्रीकृष्ण रूपी कल्पवृक्ष संसार की रक्षा करे।

म स ज स त त ग

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ३ ॥

गोविन्दं प्रणमोत्तमाङ्ग! रसने! तंघोषयाऽहर्निशं
पाणी! पूजय तं, मनः! स्मर, पदे तस्यालयं गच्छतम्।
एवञ्चेत् कुरुथाखिलं मम हितं शीर्षादयस्तद् ध्रुवं
न प्रेक्षे भवतां कृते भवमहाशार्दूलविक्रीडितम्॥

व्याख्या—यत्र मगणात् सगणः जगणः सगणः द्वौ तगणौ गुरुश्च तत् शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्। तत्र सूर्यैः=द्वादशभिः अश्वैः=सप्तभिश्च वर्णैः यतिर्भवति।

यथा—'उत्तमाङ्ग! भो शिरः! गोविन्दं = माधवम्। प्रणय= नमनं कुरु। रसने=अयि जिह्वे। तं=माधवम् एव। अहर्निशं=रात्रिन्दिवं घोषय=उच्चारय। पाणी=रे हस्तौ। तं=माधवमेव पूजय=पूजनं कुरुतम्। मनः=हे चेतः। तं माधवमेव स्मर = चिन्तय। पदे=हे चरणौ! तस्य=माधवस्यैव आलयम्=आश्रयं गच्छतम्=प्रयातम्। हे शीर्षादयः। इत्थम् अखिलं= संपूर्णं मम=मे हितं = कल्याणं कुरुथ चेत्=यदि सम्पादयथ तर्हि भवतां कृते= भवदर्थं भवमहाशार्दूलविक्रीडितं–भवः=जगद्रूपो यो महाशार्दूलः=महासिंहस्तेन विक्रीडितं = पराक्रमितम्, आक्रमणादिकम्। न प्रेक्षे=नैव पश्यामि।

हिन्दी—जहाँ मगण के बाद सगण, जगण, दो तगण तथा एक गुरु हो वह शार्दूलविक्रीडित छन्द कहलाता है, इसमें द्वादश तथा सप्त वर्णों से यति होती है।

यथा—हे शिर ! गोविन्द को प्रणाम कर। जिह्वे ! उन श्रीकृष्ण जी का ही नाम रात दिन उच्चारण कर। रे दोनों हाथों ! तुम उन्हीं माधव का पूजन करो। रे मन ! तू उन्हीं कृष्ण जी का चिन्तन कर। हे दोनों चरण ! तुम उन्हीं गोविन्द की शरण में जाओ। हे शिर आदिकों ! इस प्रकार तुम समस्त मेरा हित यदि करते हो तो आपके निमित्त संसार रूपी महासिंह द्वारा किया गया आक्रमणादि मैं नहीं गिनता हूँ, यह निश्चित है।

म र भ न य न ग

ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ।। । । । । ऽ ऽ । ।। ऽ

म्रौ भ्नौ यो नौ गुरुश्चेत्स्वरमुनिकरणैराह सुरसाम् ॥ ४ ॥

कामक्रीडासतृष्णो मधुसमयसमारम्भरभसात्।
कालिन्दीकूलकुञ्जे विहरणकुतुकाकृष्टहृदयः।
गोविन्दो वल्लवीनामधररससुधां प्राप्य सुरसां
शङ्के पीयूषपानप्रचयकृतसुखं व्यस्मरदसौ ॥

व्याख्या—चेत्=यदि मगण-रगण-भगण नगण-गुरवः स्युः तदा सुरसा नामच्छन्दः। अत्र स्वरैः=सप्तभिः मुनिभिः=सप्तभिः करणैः=पञ्चभिश्च यतिर्भवति।

यथा—मधुसमय-समारम्भरभसात्—मधुसमयस्य=वसन्ततौः समारम्भेण= सञ्जातेन रभसा=हर्षेण। कामक्रीडासतृष्णः—कामक्रीडायां=मदनरति-क्रीडायां तृष्णया सहितः=लोलुपः। कालिन्दीकुलकुञ्जे—कालिन्द्याः=यमुनायाः कूलस्य=तटस्य कुञ्जे=वने। विहरणकुतुकाकृष्टहृदयः—विहरणे=विचरणे यत् कुतुकम्=औत्कण्ठ्यम्, तेन कृष्टं=प्रेरितं हृदयं=चेतः यस्य सः असौ=सः गोविन्दः=माधवः। सुरसां=मधुरां वल्लवीनां=गोपस्त्रीणाम् अधररससुधां= अधरपानजातामृतानन्दम्। प्राप्य=लब्ध्वा। पीयूषपानप्रचयकृतसुखं–पीयूष-पानानां प्रचयेन=वृन्देन कृतं सुखम्=आनन्दं व्यस्मरत्=विस्मृतवान् इति अहं शङ्के=तर्कयामि।

हिन्दी—जहाँ मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, नगण, एक वर्ण गुरु हो तो वह सुरसा छन्द कहलाता है। इसमें सात-सात तथा पाँच वर्णों पर यति होती है।

यथा—वसन्त के आरम्भ से उत्पन्न काम-क्रीडा में लोलुप बने, यमुनातट के कुञ्ज में विहार के लिए आकृष्ट-हृदय वाले वह गोविन्द हृदयहारिणी गोपियों के अधर-रसामृत प्राप्त कर अमृतपान के समूह से किये आनन्द को बार-बार भूलने लगे।

म ग ग न न त त ग ग

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

मो गौ नौ तौ गौ शरहयतुरगैः फुल्लदाम प्रसिद्धम् ॥ ५ ॥

शश्वल्लोकानां प्रकटितकदनं ध्वस्तमालोक्य कंसं
हृष्यच्चेतोभिस्त्रिदिववसतिभिर्व्योमसंस्थैर्विमुक्तम्।
मुग्धामोदेन स्थगितदशदिगाभोगमाहूतभृङ्गं
मौलौ दैत्यारेर्न्यपतदनुपमं स्वस्तरोः फुल्लदाम ॥

व्याख्या—यत्र मगणः द्वौ गुरू द्वौ नगणौ द्वौ तगणौ द्वौ गुरू एते क्रमशः भवन्ति तत् फुल्लदामवृत्तं स्यात्। अत्र शरैः=पञ्चभिः हयैः=सप्तभिः तुरगैः सप्तभिश्च यतिर्भवति।

यथा—शश्वत्=निरन्तरम्। लोकानां = जनानाम्। प्रकटितकदनं प्रकटितं=कृतं कदनं=पीडनं येन तथाविधम्। कंसं=कंसनृपम्। ध्वस्तं= नष्टम् आलोक्य=दृष्ट्वा। हृष्यच्चेतोभिः=मुदितमानसैः त्रिदिववसतिभिः– त्रिदिवे=स्वर्गे वसतिः=निवासः येषां ते, तैः=अमरैः। व्योमसंस्थैः- व्योम्नि= नभसि संस्थैः=स्थितैः। विमुक्तं=युक्तं, अभिवृष्टम्। मुग्धामोदेन=मुग्धेना-मोदेन=मनोरमसुगन्धिना। स्थगितदशदिशाभोगम्—स्थगितः=व्याप्तः दशदिशाम्=सर्वाशानाम् भोगः=विस्तारो येन तथाविधम्। आहूतभृङ्गम्– आहूताः=आकृष्टाः भृङ्गाः=मधुपाः येन तथाविधम्। अनुपमम्=अतुलनीयम्। स्वस्तरोः=स्वसः=स्वर्गस्य तरोः=पादपस्य कल्पवृक्षस्य। फुल्लदाम= विकसितमाला। दैत्यारेः=असुरशत्रोः श्रीकृष्णस्य। मौलौ=मस्तके न्यपतत्=पपात।

हिन्दी—जहाँ मगण, दो गुरु, दो नगण, दो तगण, तथा दो गुरु क्रमशः हों तो फुल्लदाम नामक छन्द होता है।

यथा—निरन्तर लोगों के किये गये पीडन वाले कंस को नष्ट देख कर मुदित-मन स्वर्गवासी देवताओं द्वारा आकाश में स्थित छोड़ी गई सुगन्ध से पर्वत फैले हुए भ्रमरों को आकर्षित करने वाली परिजात भी विकसित पुष्पमाला श्रीकृष्णजी के शिर पर गिरी।

अत्र वृत्तरत्नाकरपरिशिष्टे इमानि छन्दांसि दृश्यन्तेऽधिकानि—

म त न स त त ग

S S S S S I I I I I I S S S I S S I S

वृत्तं बिम्बाख्यं शरमुनितुरगैर्म्तौन्सौ ततौ चेद् गुरुः ॥१॥

य म न स ज ज ग

I S S S S I I I I I S I S I I S I S

रसैः षड्भिर्लोकैर्यमनसजजा गुरुर्मकरन्दिका ॥२॥

य भ न य ज ज ग

I S S S I I I I I S S I S I I S I S

इनाश्वैः स्याद् यभनयजजगाः कीर्तिता मणिमञ्जरी ॥३॥

ज स ज स त भ ग

I S I I I S I S I I I S S S I S I I S

गजाब्धितुरगैर्जसौ जसतभा गश्चेत् समुद्रलता ॥४॥

व्याख्या—यत्रमग ण–तगण–नगण–सगण–तगण–तगण–गुरवः भवन्ति, पंचभिः सप्तभिः सप्तभिर्विरामैर्यतिस्तद् विभुनामच्छन्दः; यगण–मगण–नगण–सगण–जगण–जगण–गुरवः, षड्भिः षड्भिः सप्तभिश्चाक्षरै विरामः सा मकरन्दिका, यगण–सगण–जगण–सगण–तगण–भगण–गुरवः सा मणिमञ्जरी; जगण–सगण–जगण–सगण–तगण–तगण–गुरवः सा समुद्रलता कथ्यते। अत्राष्टभिश्चतुर्भिः सप्तभिरक्षरैर्विरामो भवति।

हिन्दी—जहाँ मगण तगण नगण सगण तगण तगण और एक गुरु तथा पांच सात सात अक्षरों से यति हो तो विभु, यगण मगण नगण सगण जगण जगण और एक गुरु तथा छह-छह एवं सात अक्षरों से यति हो तो मकरन्दिका, यगण सगण जगण सगण तगण भगण और एक गुरु तथा बारह एवं सात अक्षरों से यति हो तो मणिमञ्जरी और जगण सगण जगण सगण तगण भगण और एक गुरु तथा पांच, सात और सात अक्षरों से यति हो तो समुद्रलता नामक छन्द होते हैं।

(२०) कृतिः (विंशत्यक्षरा वृत्तिः)।

म र भ न य भ ल ग

S S S S I S S I I I I I I S S S I I I S

ज्ञेया सप्ताश्वषड्भिर्मरभनययुता भ्लौ गः सुवदना ॥ १ ॥

प्रत्याहृत्येन्द्रियाणि त्वदितरविषयान्नासाऽग्रनयना
त्वां ध्यायन्ती निकुञ्जे परतरपुरुषं हर्षोत्थपुलका।
आनन्दाश्रुप्लुताक्षी वसति सुवदना योगैकरसिका
कामार्तिं त्यक्तुकामा ननु नरकरिपो! राधा मम सखी॥

व्याख्या—यत्र क्रमशः मगणः रगणः भगणः नगणः यगणः भगणः एको लघुरेकश्च गुरुः सा सुवदना कथ्यते।

यथा—ननु नरकरिपो = हे नरकशत्रो श्रीकृष्ण! सुवदना—शोभनं वदनं यस्याः सा=शुभानना। मम=मे सखी राधा = वृषभानुसुता। कामार्तिम्=कामपीडां त्यक्तुकामा = परित्यागमिच्छन्ती। योगैकरसिका—योगे=मनोवृत्तिनिरोधे एको मुख्यः रसः=अनुरागो यस्याः सा। निकुञ्जे=लतागृहे। वसति=तिष्ठति। त्वदितरविषयात्=त्वद्भिन्नविषयात्। इन्द्रियाणि=चक्षुरादीनि प्रत्याहृत्य=परावृत्य, त्वयि एव स्थापयित्वा नासाग्रे=नासिकाग्रभागे नयने=चक्षुषी। परपुरुषतरं=परमात्मानं त्वां चिन्तयन्ती। हर्षेण=आनन्देन उत्थं=समुद्भूतं पुलकं=रोमाञ्चो यस्याः सा आनन्दाश्रुभिः=अनुरागजातनयनवारिभिः, प्लुते=सिक्ते अक्षिणी=चक्षुषी यस्याः सा तथाविधा वर्तते।

हिन्दी—जहाँ मगण रगण भगण नगण यगण भगण लघु तथा गुरु हों एवं सप्त सप्त और षड् अक्षरों से यति हो वह सुवदना छन्द कहलाता है।

यथा—हे नरकरिपो माधव! शुभानना मेरी सखी राधा कामपीडा को त्यागने की अभिलाषा से योग में चित्तवृत्ति लगाकर एकमात्र प्रमुख अनुराग

वाली लताकुञ्ज में रहती है। उससे अतिरिक्त विषय से चक्षुरादि इन्द्रियों को हटाकर नासिका के अग्र भाग पर नयन स्थापित करती हुई आप परमात्मा का ध्यान करती हुई हर्ष से उत्पन्न हुए रोमाञ्च वाली आनन्दाश्रु से सरोवर नेत्रों वाली बन गई है।

स ज ज भ र स ल ग

। । S । S । । S । S । । S । S । । S । S

सजजा भरौ सलगा यदा कथिता तदा खलु गीतिका। २॥

करतालचञ्चलकङ्कणस्वनमिश्रणेन मनोरमा
रमणीयवेणुनिनादरङ्गिमसङ्गमेन सुखावहा।
बहुलानुरागनिवासरासससमुद्भवा भवरागिणं
विदधौ हरिं खलु बल्लवीजनचारुचामरगीतिका॥
इति महाकाव्ये।

व्याख्या—यत्र प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः सगणः द्वौ जगणौ भगणः रगणः सगणः लघुः गुरुश्च भवन्ति तदा खलु = किल गीतिका कथिता= वर्णिता।

यथा—करतालचञ्चलकङ्कणस्वनमिश्रणेन—करतालेन = हस्ततालप्रदानेन चञ्चलं = चपलं यत्कंकणं = वलयस्तस्य स्वनं = ध्वनिः तस्य मिश्रणेन = संसर्गेण। मनोरमा = मनोहरा। रमणीयवेणुनिनादरंगिमसंगमेन रमणीयः=मनोरमः यः वेणुनिनादः = वंशीध्वनिः तस्य यः रंगिमा=लयविशेषः तस्य संगमेन=साहचर्येण सुखावहा = आनन्ददायिका वंशीताललयसमन्वित-बहुलानुरागसमुद्भवा—बहुलस्य = अधिकस्यानुरागस्य = अनुरक्तेः निवासः =वासः यो रासः = रासक्रीडा तत्र समुद्भवति इति समुद्भवा = सञ्जाता। बल्लवीजनस्य=गोपिकाजनस्य चारु=मनोरमं चामरं=गोपुच्छविशेषः यस्यां सा च असौ। गीतिका=गायनविशेषः। हरिं = माधवम्। भवरागिणं= विश्वासक्तम् विदधौ=अकरोत्।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः सगण दो जगण भगण रगण सगण एक लघु तथा एक गुरु हो तो वह गीतिका वृत्त कहलाता है।

यथा—हस्त ताल देने से चञ्चल वलय की ध्वनि से मिश्रित मनोरम रमणीय वेणुनिनाद के लयविशेष संगम द्वारा आनन्दप्रद, अत्यधिक अनुराग

का आश्रय जो रास क्रीडा उसमें उत्पन्न गोपियों के मनोहर चामर वाली गीतिका (गान विशेष) ने श्रीकृष्ण को संसार प्रेमी बना दिया।

र ज र ज र ज ग ल

S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S ।

वृत्तमीदृशन्तु नामतो रजौ रजौ रजौ गुरुर्लघुश्च॥ ३॥

चित्रवृत्तलीलया निसर्गरम्यदेहरूपविभ्रमेण
राजमानसद्वयोविलाससम्पदा कलाकुतूहलेन।
यः समं व्रजाङ्गनाजनैः सुराङ्गनानिभैः सुखं समेत्य
विष्णुरुल्ललास चित्तपद्मकोषषट्पदः स मे सदाऽस्तु॥

व्याख्या—यत्र पादे क्रमशः रगणः जगणः रगणः जगणः रगणः जगणः गुरुः लघुश्च तद्वृत्तनामकं वृत्तम्।

यथा—यः विष्णुः=हरिः। चित्रवृत्तलीलया=अद्भुतचरितविलासेन (वृत्तं पद्ये चरित्रे च इत्यमरः)। राजमानसद्वयोविलाससम्पदा—राजमानं=शोभायमानं यत्सद्वयः=किशोरावस्था, तस्य विलाससम्पदा= विलासवैभवेन। कलासु=नृत्यादिचतुःषष्ठिकलासु। कुतूहलेन=कौतुकेन। निसर्गरम्यदेहरूपविभ्रमेण-निसर्गेण=प्रकृत्या रम्यः मनोरमः यो देहस्तस्य रूपविभ्रमेण=सौन्दर्यविलासेन, सुराङ्गनानिभैः=अप्सरःसमैः। व्रजाङ्गनाजनैः=गोपीजनैः। समं=साकम्। सुखं=आनन्दम्। समेत्य=सम्प्राप्य। उल्ललास=राजक्रीडामकरोत्। सः=असौ विष्णुः। मे=मम चित्तं=मनः एव पद्मं=कमलं तस्य कोषमध्ये षट्पदः=अलिरूपः अस्तु=भवतु।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः रगण जगण रगण जगण रगण जगण गुरु तथा लघु हों तो वह वृत्त वृत्त नामक होता है।

यथा—जिन विष्णु भगवान् ने अद्भुत चरित्र क्रीडा के द्वारा शोभायमान किशोरावस्थारूपी सम्पत्ति से चौंसठ कलाओं में कौतूहल से स्वाभाविक रमणीय देह के सौन्दर्य विलास से अप्सराओं के समान व्रजाङ्गनाओं के साथ आनन्द प्राप्त कर रासक्रीडा की, वही विष्णु भगवान् मेरे मन में चरण कमल के कोष मध्य भ्रमर रूप में विराजमान हों।

य म न न ग र र ग
। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ

रसाश्वाश्वैः शोभा नयुगगजठरा मेघविस्फूर्जिता चेत् ॥ ४ ॥

सदा पूषोन्मीलत्सरसिजयुगला मध्यनम्रा फलाभ्यां
तयोरूर्ध्वं राजत्तरलकिसलयाश्लिष्टसुस्निग्धशाखा ।
लसन्मुक्तारक्तोत्पलकुवलयवच्चन्द्रबिम्बाञ्चिताग्रा
महाशोभा मौलौ मिलदलिपटलैः कृष्ण ! सा काऽपि वल्ली ॥

व्याख्या—यत्र भगण-मगण-नगण-नगण-गुरु-रगण-रगण-गुरवस्तत्र शोभानाम वृत्तम् ।

अत्र रसैः=षड्भिः अश्वैः अश्वैः=सप्तभिः सप्तभिश्चवर्णैः यतिर्भवति ।

यथा—कृष्ण = हे माधव ! सदा=नित्यम् । पूषोन्मीलत्सरसिजयुगला= पूष्णा=रविणा उन्मीलत्=विकसितं सरसिजयुगलं=कमलद्वन्द्वम् = चरण-युग्मम् इति यस्याः सा । मध्ये=मध्यभागे । फलाभ्यां=फलरूपाभ्याम् पयोधराभ्याम् । नम्रा=नमिता तयोः फलयोः ऊर्ध्वं राजन्ती = शोभमाने तरले=चञ्चले च ये किसलये=पल्लवे हस्तौ, ताभ्यामाश्लिष्टे = बद्धे सुस्निग्धे = रुचिरे भुजौ= बाहू यस्याः सा । लसन्मुक्तारक्तोत्पलकुवलयवत्—लसन्त्यः=शोभमाना मुक्ताः = मौक्तिकानि, दन्ताः इति रक्तोत्पलम्=अधरबिम्बम् । कुवलये = कमले नयने यस्मिस्तत् । एतद्विधं चन्द्रमण्डलं=मुखमण्डलम्, तेन अञ्चितः शोभमानः अग्रभागः यस्याः सा मौलौ = मस्तके मिलद्भिः=सङ्गतैः अलिपटलैः = चञ्चरीकसमूहैः महती शोभा यस्याः सा महाशोभा एतद्विधा कापि अनिर्वचनीया त्वया सततमनुभूता वा वल्ली=वल्ली राधिकारूपा । तव समीपे शोभत इति शेषः ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण मगण दो नगण गुरु दो रगण तथा गुरु हों और सात सात अक्षरों से यति होती है वह शोभा नामक छन्द होता है ।

यथा—हे कृष्ण ! सदा सूर्य द्वारा विकसित कमल द्वन्द्वरूपी चरण कमलवाली, मध्यभाग में फल तथा रूपात्मक पयोधर युगल से अवनत, उन दोनों फलों (पयोधरों) के ऊपर शोभित चञ्चल किसलय हाथों से सम्बद्ध स्निग्ध भुजाओं वाली, शोभित मुक्तादन्तवाली रक्त कमल सदृश अधर बिम्ब वाली, सुनयना, चन्द्रबिम्ब से शोभित अग्रभागवाली, मस्तक पर मिल रहे भ्रमर कुल से अति शोभित अवर्णनीया राधिका तुम्हारे समीप बैठी है ।

(२१) प्रकृतिः (एकविंशत्यक्षरा वृत्तिः) ।

म र भ न य य य
ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ॥ १ ॥

व्याकोषेन्दीवराभा कनककषलसत्पीतवासाः सुहासा
बर्हैरुच्चन्द्रकान्तैर्वलयितचिकुरा चारुकर्णावतंसा ।
अंसव्यासक्तवंशीध्वनिसुखितजगद्बल्लवीभिर्लसन्ती
मूर्तिर्गोपस्य विष्णोरवतु जगति नः स्रग्धरा हारिहारा ॥

व्याख्या—यत्र पादे क्रमशः मगणः रगणः भगणः नगणः यगणः द्विरगणः गुरुश्च भवन्ति तत् स्रग्धरा कीर्त्तिता=प्रसिद्धा । अत्र त्रिवार मुनियतियुता= सप्तभिः सप्तभिश्च वर्णैः यतिर्भवति ।

यथा—व्याकोषेन्दीवराभा—व्याकोषं = विकचितमिन्दीवरं = नीलकमलम् तस्यामेव आभा = कान्तिर्यस्याः सा । कनककषलसत्पीतवासाः—कनककषः=स्वर्णलेखा तद्वल्लसत्=शोभितं पीतं वासो यस्या सा=पीताम्बरा । सुहासा = मन्दहासयुता उत्=ऊर्ध्वं चन्द्रकान्तानाम्=मयूरपिच्छवर्तिनाम् अन्ताः= अन्तभागाः यत्र तथाविधैः उच्चन्द्रैः कान्तानि = मनोरमाणि, तैर्वा बर्हैः=मयूर-पिच्छैः । वलयितचिकुरा—वलयिता=संयता चिकुराः=केशाः यस्यां सा । चारु-कर्णावतंसा—चारुणी=सुन्दरौ कर्णावतंसौ=कर्णभूषणे यस्यां सा । अंसव्यासक्त-वंशीध्वनिसुखितजगद्वल्लवीभिः—अंसे=स्कन्धे व्यासक्ताः = सम्बद्धा या वंशी= मुरली तस्याः ध्वनिभिः=शब्दैः सुखितम्=आनन्दयुक्तं जगत्=विश्वं यया सा वल्लवीभिः=गोपस्त्रीभिः लसन्ती = शोभमाना । गोपीभिः सह क्रीडन्ती वा । विष्णोः=हरेः श्रीकृष्णरूपस्य मूर्तिः=प्रतिमा स्वरूपं वा नः=अस्मान् अवतु=पातु ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में क्रमशः मगण रगण भगण नगण और तीन

यगण हो तो वह स्रग्धरा वृत्त कहलाता है। इसमें सप्त सप्त सप्त वर्णों से यति होती है।

न ज भ ज ज ज र

। । । । ऽ । ऽ । । । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

नजभजजा जरौ यदि तदा गदिता सरसी कवीश्वरः ॥२॥

(क) चिकुरकलापशैवलकृतप्रमदासु लसद्रसोर्मिषु
स्फुटवदनाम्बुजासु विलसद्भुजबालमृणालवल्लिषु।
कुचयुगचक्रवाकमिथुनानुगतासु कलाकुतूहलो
व्यरचयदच्युतो व्रजमृगीनयनासरसीषु विभ्रमम् ॥

(ख) तुरगशताकुलस्य परितः परमेकतुरङ्गजन्मनः।
प्रमथितभूभृतः प्रतिपथं मथितस्य भृशं महीभृता।
परिचलतो बलानुजबलस्य पुरः सततं धृतश्रिय-
श्चिरगलितश्रियो जलनिधेश्च तदाऽभवदन्तरं महत् ॥

इति माघे (६।८२)।

सिंहकमिदमन्यत्र।

व्याख्या—यदि प्रत्येकस्मिन् पादे क्रमशः नगणः जगणः भगणः त्रिजगणाः रगणश्च भवन्ति तदा कवीश्वरः = कविश्रेष्ठः 'सरसी' इति गदिता = भणिता।

यथा—(क) चिकुरकलापशैवलकृतप्रमदासु—चिकुरकलापः = कचसमूहः एव शैवलं तेन कृतः=विहितः प्रमदः=आनन्दं याभिस्ताः, तासु लसद्रसोर्मिषु—लसन्त्यः=शोभमाना रसोर्मयः=रसवीचयः यासु तासु। स्फुटवदनाम्बुजासु=स्फुटानि=विकचितानि वदनानि=मुखानि एव अम्बुजानि=कमलानि यासु तासु। विलसन्तः = शोभमानाः भुजाः एव बालमृणालवल्लयः = लताः यासां तासु। कुचयुगचक्रवाकमिथुनानुगतासु—कुचयुगानि = पयोधरयुगलान्येव चक्रवाकमिथुनानि = चक्रवाकयुग्मानि तैः अनुगतासु=युक्तासु। व्रजमृगीनयना = व्रजसुन्दर्यः एव सरस्यः = सरांसि, तासु। कलाकुतूहली—कलायै = क्रीडानिमित्तं कुतूहली=समुत्सुका। अच्युतः = माधवः। विभ्रमं = विलासं व्यरचयत - रचनां चकार।

(ख) परितः = अभितः तुरगशतैः = असंख्याश्वैः आकुलस्य = व्याप्तस्य। प्रतिपथं = मार्गे मार्गे। प्रमथिताः = पराजिताः भूभृतः = राजानः पर्वताश्च येन, न तु केनापि स्वयं मथितस्येति भावः। सततम् = अनवरतम्। धृतश्रियः—धृता = सम्पन्ना श्रीः = शोभा लक्ष्मीः येन तस्य। पुरः = नगरात् अग्रे वा परिचलतः = प्रतिष्ठमानस्य बलानुजस्य = श्रीकृष्णस्य बलस्य = सेनायाः परं = केवलम् एकस्यैव तुरंगस्य = उच्चैःश्रवसः जन्म यस्मात् तस्य। महीभृता = मन्दराचलेन भृशम् = अत्यन्तम् मथितस्य चिरं = चिरकालम् गलिता = विनष्टा श्रीः = कान्तिः, लक्ष्मीश्च यस्य। लक्ष्म्या हरिणा परिगृहीतत्वात् तथाविधस्य जलनिधेः = सिन्धोः। तदा प्रस्थानकाले महत् अन्तरं भेदः तारतम्यं चाभूत्।

हिन्दी—यदि पाद में नगण जगण भगण तीन जगण तथा रगण हों तो उसे कवीश्वर सरसी वृत्त कहते हैं।

यथा—(क) केशपाश रूपी शिवाल से हर्षित प्रेम रूपी जल लहरियों से शोभित प्रसन्न वदन, विलसित भुजाओं वाली, बालमृणाल रूपी लताओं वाली, पयोधर युगल रूपी चक्रवाकों से समन्वित व्रज वनिताओं रूपी झीलों (सरोवरों) में क्रीडा करने को उत्सुक अच्युत श्री कृष्णजी ने विहार किया।

(ख) सर्वत्र असंख्य अश्वों से व्याप्त प्रत्येक मार्ग पर पराजित राजाओं और पर्वतों वाला श्रीकृष्ण जी का सैन्य दल था जो कि सदा शोभायुक्त था। किन्तु समुद्र में मात्र एक उच्चैःश्रवा नामक घोड़े ने जन्म लिया था। मन्दराचल ने उसे पददलित कर दिया था तथा उसकी श्री चिरकाल से अपहृत की जा चुकी थी।

(२२) आकृतिः (द्वाविंशत्यक्षरा वृत्तिः)।

म म ग ग न न न न ग ग

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । । । । । । । ऽ ऽ

मौ गौ नाश्चत्वारो गो गो वसुभुवनयतिरिति भवति हंसी ॥१॥

सार्धं कान्तेनैकान्तेऽसौ विकचकमलमधु सुरभि पिबन्ती
कामक्रीडाकूतस्फीतप्रमदसरसतरमलघु रसन्ती।
कालिन्दीये पद्मारण्ये पवनपतनपरितरलपरागे
कंसाराते! पश्य स्वेच्छं सरभसगतिरिह विलसति हंसी ॥

व्याख्या—यत्र द्वौ मगणौ द्वौ गुरू चत्वारो नगणाः द्वौ गुरू इति भवन्ति सा हंसी कथ्यते । अत्र अष्टभिस्त्रिभिः द्वाभ्यां च यतिर्भवति ।

यथा—हे कंसाराते=हे कंसरिपो ! श्रीकृष्ण ! कान्तेन=प्रियेण सार्द्धं=साकम् । एकान्ते=निर्जने । कालिन्दीये=यमुनापार्श्ववर्तिनि । पवनपतनेन=वायुसञ्चारेण परितरलः=चपलः परागः=केसरः यत्र तथा विधे । पद्मारण्ये=कमलवने सुरभिः=सुगन्धिः । विकचकमलमधु=विकचितानां=विकसितानां कमलानां=पद्मानां मधु=पुष्परसम् पिबन्ती=पानं कुर्वन्ती । कामक्रीडाकूतेन=कामस्य=सुरतस्य क्रीडायाः आकूतेन=अभिप्रायेण । स्फीतेन=प्रवृद्धेन प्रमदेन=हर्षेण सरसतरम्=अतिमधुरम् । अलघु=उच्चैः रसन्ती=कूजन्ती । सरभसगतिः=सानन्दगतिः असौ हंसी स्वेच्छं=इच्छानुसारम् । विलसति=क्रीडां करोति इति परश्य=अवलोकय ।

हिन्दी—जहाँ दो मगण दो गुरु चार नगण तथा अन्त में दो गुरु हों तो वह हंसी छन्द होता है । इसमें आठ तीन और दो अक्षरों से यति होती है ।

यथा—हे कंस निषूदन कृष्ण ! प्रिय के साथ एकान्त निर्जन कालिन्दी के समीपवर्ती वायु के सञ्चार से चञ्चलवने पराग वाले कमल वन में सुगन्धित, विकसित पुष्पों के मधु रस का पान करती हुई काम क्रीडा के सुरत से बढ़े हर्षौत्सुक्य से अति मधुर उच्च स्वर-सी कूजती हुई सानन्द गति वाली यह हंसी स्वेच्छया क्रीडा कर रही है देखो ।

भ भ भ भ भ भ भ ग

ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ

सप्तभकारयुतैकगुरुर्गदितेयमुदारतरा मदिरा ॥ २ ॥

माधवमासि विकस्वरकेसरपुष्पलसन्मदिरामुदितै-
भृङ्गकुलैरुपगीतवने वनमालिनमालि ! कलानिलयम् ।
कुञ्जगृहोदरपल्लवकल्पिततल्पमनल्पमनोजरसं
तं भज माधविकामृदुनर्तकयामुनवातकृतोपगमा ॥

व्याख्या—सप्तभिर्भगणैरन्ते चैकेन गुरुणा युता इयम्=एषा उदारतरा=महदुदारा मदिरा गदिता ।

यथा—हे आलि=हे सखि ! माधवमासि=वैशाखमासे । विकस्वराणि=प्रस्फुटितानि यानि केसरपुष्पाणि=केसर कुसुमान्यो सलते 'नि–षु

शोभन्त्या मदिरया=सुरया, मकरन्देन वा मुदितैः=प्रसन्नैः भृङ्गकुलैः=अलिवृन्दैः । उपगीतवने=गुञ्जितारण्ये । माधविकायाः=माधवीलतायाः मृदु=मन्द यथा तथा नर्तकेन=कम्पनविधिना । यामुनवातेन=यमुनायाः तटवर्तिना वातेन=पवनेन कृत उपगमः=सान्निध्यम् यस्यास्तथाविधां त्वाम् कुञ्जगृहोदरे=लतामण्डपगृहे । पल्लवैः=दलैः कल्पितं=निष्पादितं तल्पं=शयनीयं यस्य तथाविधम् । अनल्पम्=अधिकम् मनोजरसं=कामानुरागम् । कलानिलयम्—कलानां=नृत्यादीनां निलयम्=गृहम्, कलाविदम् । तं वनमालिनं=भगवन्तं श्रीकृष्णं, भज=स्मर ।

हिन्दी—जहाँ सात भगण तथा अन्तिम वर्ण गुरु हो वह मदिरा वृत्त कहलाता है ।

यथा—हे सखि ! वैशाख मास में विकसित केसर पुष्पों में शोभित हो रहे मकरन्द से मुदित भृङ्ग कुलों से गुञ्जित उपवन में माधवी लता को मन्द-मन्द कम्पित करने वाले यमुना तटवर्ती पवन से किये गये सान्निध्य-वाली तू अत्यन्त कामानुरागी नृत्यादिकलाओं में निपुण उन वनमाली श्री कृष्ण का भजन कर ।

अत्र वृत्तरत्नाकरतत्परिशिष्टयोः छन्दांसीमान्यधिकानि दृश्यन्ते—

भ र न र न र न ग

ऽ । । ऽ। ऽ । । । ऽ। ऽ । । । ऽ । ऽ । । । ऽ

भ्रौ नरना रनावथ गुरुर्दिगर्कविरमं हि भद्रकमिदम् ॥१॥

म स र स त ज न ग

ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ। ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । । । ऽ

लालित्यं भुजगेन्द्रेण भाषितमेतच्चेन्मसरस्तजनगुरु ॥२॥

स ज त न स र र ग

। । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

सजता नसौ ररौ गः फणितुरगहयैः स्यान्महास्रग्धराऽऽख्या ॥३॥

व्याख्या—यत्र क्रमशः भगण-रगण-नगण-रगण-नगण-रगण-नगण-गुरवः स्युस्तद् भद्रकम् । अत्र द्वादशभिर्द्वादशभिश्चाक्षरैर्विरामो भवति । मगण-सगण-रगण-सगण-तगण-जगण-नगण-गुरवश्च यत्र तत् भुजगेन्द्रेण=नागराजेन लालित्यं

नाम छन्दो भाषितम्, सगण-जगण-तगण-नगण-सगण-द्विरगण-गुरवश्च यत्र स्युस्तन्महास्रग्धरावृत्तम् यत्राष्टभिः सप्तभिश्च विरामो भवति ।

हिन्दी—जहाँ भगण रगण नगण रगण नगण रगण जगण तथा गुरु हों तो भद्रक वृत्त होता है । यहाँ बारह अक्षरों से विराम होता है । मगण सगण रगण सगण तगण जगण नगण तथा गुरु होने पर लालित्य तथा सगण जगण तगण नगण सगण रगण रगण तथा गुरु हों तो महास्रग्धरा वृत्त होता है । इसमें आठ अक्षरों से विराम होता है ।

(२३) विकृतिः (त्रयोविंशत्यक्षरा वृत्तिः) ।

न ज भ ज भ ज भ ल ग

। । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । । । ऽ । ऽ । । । ऽ

नजभजभा जभौ लघुगुरू बुधैस्तु गदितेयमद्रितनया ॥ १ ॥

(क) खरतरशौर्यपाकशिखापतङ्गनिभभग्नदृप्तदनुजो
जलधिसुताविलासवसतिः सतां गतिरशेषमान्यमहिमा ।
भुवनहितावतारचतुरश्चराचरधरोऽवतीर्ण इह हि
क्षितिवलयेऽस्ति कंस ! शमनस्तवेति तमवोचदद्रितनया ॥

(ख) विलुलितपुष्परेणुकपिशं प्रशान्तकलिकापलाशकुसुमं
कुसुमनिपातचित्रवसुधं सशब्दनिपद्द्रुमोत्कशकुनम् ।
शकुननिनादनादितककुब्विलोलविपलायमानहरिणं
हरिणविलोचनाधिवसतिं बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम् ॥

इति भट्टी । ८।१३१ ।
अश्वललितमिदमन्यत्र ।

यथा—(क) कंस ! खरतरशौर्यपाकशिखापतङ्गनिभभग्नदृप्तदनुजः-खरतरम्=अतितीक्ष्णं यत् शौर्यं=पराक्रमः, तदेव पावकः=अग्निः, तस्य शिखया=ज्वालया पतङ्गनिभाः=शलभसमाः भग्नाः=दग्धा दृप्ताः=गर्विताः दनुजाः=दैत्याः येन तथाविधः । जलधिसुताविलासवसतिः=-जलधिसुतायाः=कमलायाः विलासस्य=रतिप्रभृतिक्रीडायाः वसतिः=आश्रयः । सतां=सत्पुरुषाणाम् गतिः=अवलम्बनम् । अशेषमान्यमहिमा—अशेषैः=समस्तैः सुरासुरमानवैः मान्यः=

पूज्यः महिमा=महत्ता यस्य सः । भुवनहितावतारचतुरः—भुवनानां=त्रिभुवनानां हिताय=कल्याणाय अवतारे=अवतरणे चतुरः=दक्षः । चराचरधरः—चराचरान्=स्थावर-जंगमान् सकलान् धरतीति=सर्वधारकः श्रीकृष्णः । तव ते । शमनः=यमरूप इह=अत्र क्षितिवलये=धरामण्डले । हि=किल अवतीर्णः इति अद्रितनया=योगमाया कंसं=कंसनृपम् अवोचत्=जगाद ।

(ख) पवनात्मजः = वातात्मजो हनुमान् । विलुलितपुष्परेणुकपिशं—विलुलितानां = मर्दितानां, पुष्पाणां=सुमनानाम् रेणुभिः = परागरजोभिः कपिशं=पिंगलवर्णम् । प्रशान्तकलिकापलासकुसुमकुसुमनिपातचित्रवसुधं—प्रशान्तानि=विनष्टानि कलिकाः=कोरकाः पलासकुसुमानि=पलासपुष्पाणि च यत्र तत्, कुसुमानां निपातेन=पुष्पपतनेन चित्रा=बहुवर्णा वसुधा यत्र तत् । सशब्दनिपतद्द्रुमोत्कशकुनम्—सशब्दे=ध्वनिसहितं निपतद्भिः=च्युतैः द्रुमैः=पादपैः उत्काः=अन्यस्थानं गन्तुमुन्मुखाः शकुनाः=पक्षिणः यत्र तत् । शकुननिनादनादितककुब्विलोलविपलायमानहरिणहरिणविलोचनाधिवसतिं—शकुनानां=खगानां निनादेन=कलरवेण नादिता=ध्वनिताः ककुभः=दिशः यत्र तत्, विलोलाः=व्याकुलाः सन्तः विपलायमानहरिणाः=पलायमानमृगा यत्र तत् । हरिणविलोचनाधिवसतिं=हरिणलोचनायाः=मृगाक्ष्याः सीतायाः अधिवसतिं=निवासस्थानम् रावणस्य पञ्चवटीम् । बभञ्ज=विनष्टं चकार ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण जगण भगण जगण भगण जगण भगण लघु तथा गुरु हों तो वह अद्रितनया वृत्त कहलाता है ।

यथा—(क) "अति प्रचण्ड पराक्रम रूपी अग्नि की शिखा से पतिंगे सदृश जले, गर्वित दैत्यों को जिसने नष्ट कर दिया, जो लक्ष्मी का विलासाश्रय है तथा जो सज्जनों की गति का अवलम्बन है, जो समस्त देवताओं तथा दानवों आदि से पूजनीय महत्व वाला है, जो त्रिभुवन के कल्याणार्थ अवतार ग्रहण करने में प्रवीण है, जो स्थावर जंगम समस्त का पालक है वही श्रीकृष्ण तुम्हारे लिए यम रूप (काल के स्वरूप) में इस भूमण्डल पर निश्चित रूप से अवतीर्ण हो चुका है ।" ऐसा योग माया ने उस कंस से कहा ।

(ख) पवन पुत्र हनुमान ने रौंदे हुए फूलों की पराग रज से कपिशवर्ण, विनष्ट कलियों और पत्तों वाले, फूलों के गिरने से विविध वर्ण की भूमि वाले,

गिरते हुए वृक्षों से अन्यत्र गमनोन्मुख पक्षियों वाले, पक्षियों के निनाद से दसो दिशाओं को भरने वाले, व्याकुल मृगियों वाले, मृगनयनी सीता के निवास स्थान (पञ्चवटी) का विनाश कर दिया।

म म ग ग ग ल ग
ऽऽ ऽऽऽऽऽ ऽ। ।।।।।।।।।।।।। ऽ

मत्ताक्रीडं वस्विष्वाशायति मयुगगयुगमनलघुगुरुभिः ॥ २ ॥

मुग्धोन्मीलन्मत्ताक्रीडं मधुसमयसुलभमधुररसाद्
गाने याने किञ्चित्स्पन्दत्पदमरुणनयनयुगलसरसिजम्।
रासोल्लासक्रीडत्कन्याव्रजयुवतिवलयविहितभुजरसं
सान्द्रानन्दं वृन्दारण्ये स्मरत हरिमनघचरणपरिचयम् ॥

व्याख्या—यत्र द्वौ मगणौ द्वौ गुरू चतुर्दश लघवः अन्ते च गुरुः सा मत्ताक्रीडा। अत्र अष्टभिः पञ्चभिः दशवर्णैश्च यतिर्भवति।

यथा—हे सज्जना ! यूयं वृन्दारण्ये=वृन्दावने। मुग्धोन्मीलन्–मुग्धं=सुन्दरं यथा स्यात्तथा उन्मीलन्ती=विकसन्ती मत्तस्य=क्षीवस्य यथाऽक्रीडा विलासो यस्य तम्। मधुसमयसुलभमधुररसात्—मधुसमये=वसन्तकाले सुलभं=सुप्राप्यं मधुरं=मिष्टं यन्मधु=मकरन्दः, तस्य रसात् हेतोः। गाने=संगीते याने=प्रयाणे च किञ्चित्स्पन्दत्=स्खलत् पदं=चरणं च यस्य तम् अरुणनयनयुगलसरसिजं—अरुणं=लोहितवर्णं नयनयुगलसरसिजं=नेत्रयुग्मपद्मम् यस्य तम्। रासोल्लासक्रीडत्कन्याव्रजयुवतिवलयविहितभुजरसं—रासे=रासक्रीडाकाले उल्लासेन=आनन्देन क्रीडन्तीनां कन्याणां=मदनतप्तानां व्रजयुवतिनां=गोपीनां वलयेषु=मण्डलेषु विहितः=कृतः भुजरसः=भुजालिंगनं येन तम्। सान्द्रानन्दं—सान्द्रं=गाढः आनन्दः यस्य तम्। अनघचरणपरिचयम्—नास्ति अघं=पापं यस्मात् तथाविधश्चरणपरिचयः=चरणसेवा यस्य तम्। हरिं=माधवं स्मरत=ध्यानं कुरुत।

हिन्दी—जहाँ दो मगण दो गुरु और चौदह लघु तथा अन्त में गुरु हो तो वह मत्ताक्रीडा नामक वृत्त कहलाता है इसमें आठ पाँच तथा दश अक्षरों से यति होती है।

यथा—हे सज्जनों ! तुम लोग वृन्दावन में सुन्दर विकसित हो रही कली जैसा मत्ता विलास वाले, वसन्त काल में सुलभ मधुर स्वाद वाले, मकरन्द रस के आस्वादन से संगीत तथा गमन में कुछ लड़खड़ाते पद तथा चरणों वाले, अरुण कमल नयन युगल वाले, रासक्रीडा में आनन्द से खेलती हुई कामातुर गोपियों के मण्डलों में किये गये भुजालिंगन वाले, सघन आनन्द वाले, निष्कलुष चरणसेवा वाले श्रीकृष्ण जी का स्मरण करो।

(२४) संस्कृतिः (चतुर्विंशत्यक्षरा वृत्तिः)।

भ त न स भ भ न य
ऽ।। ऽऽ। ।।। ।।ऽ ऽ।। ऽ।। ।।। ।ऽऽ

भूतमुनीनैर्यतिरिह भतनाः स्भौ भयनाश्च यदि भवति तन्वी ॥१॥

माधव ! मुग्धैर्मधुकरविरुतैः कोकिलकूजितमलयसमीरैः
कम्पमुपेता मलयजसलिलैः प्लावनतोऽप्यविगततनुदाहा।
पद्मपलाशैर्विरचितशयना देहजसंज्वरभरपरिदूने-
निश्वसती सा मुहुरतिपरुषं ध्यानलये तव निवसति तन्वी ॥

व्याख्या—यदि मगण-तगण-नगण-सगणाः भगणौ नगण-यगणौ स्युः तदा तन्वीनाम वृत्तं भवति। तत्र भूतैः=पञ्चभिः मुनिभिः=सप्तभिः इनैः=सूर्यैः=द्वादशभिश्च वर्णैः यतिर्भवति।

यथा—हे माधव=हे मुरारे ! मुग्धैः=कर्णसुखदैः। मधुकरविरुतैः=भ्रमरगुञ्जारवैः। कोकिलकूजितमलयसमीरैः—कोकिलानां–परभृतानां कूजितैः=गुञ्जारवैः, मलयसमीरैः=मलयपर्वतस्य शीतलमन्दसुगन्धवातैः प्लावनतोऽपि=सेचनादपि अविगततनुदाहः—अविगतः=अशान्तः तनोः=शरीरस्य दाहः=सन्तापः यस्यास्तादृशी तन्वी=क्षीणा=दुर्बला सा राधा। अतिपरुषं=महद्रूक्षं पुनः मुहुर्मुहुः निःश्वसती=निःश्वसनं कुर्वन्ती तव=ते ध्यानलये=अवधानरूपे योगे निवसति=वासं करोति।

हिन्दी—जहाँ भगण तगण नगण सगण दो भगण और नगण यगण हों वह तन्वी नामक छन्द होता है। इसमें आठ सात तथा द्वादश अक्षरों से यति होती है।

यथा—हे माधव ! कर्णप्रिय मधुकरों की गुनगुनाहट वाले मलयानिल से

सेचन से भी अज्ञात अशान्त शरीर के दाह ताप वाली दुर्बल शरीरा राधा अति कर्कश बार बार निःश्वास लेती हुई तुम्हारे ध्यान रूपी योग में निवास कर रही है।

(२५) अतिकृतिः (पञ्चविंशत्यक्षरा वृत्तिः)।

भ म स भ ल ग

ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । । । । । । । । । । । । । ऽ

क्रौञ्चपदा स्याद् भो मसभाश्चेदिषुशरवसुमुनियतिरिनलघुगं ॥१॥

कौञ्चपदाली चित्रिततीरा मदकलखगकुलकलकलरुचिरा
फुल्लसरोजश्रेणिविलासा मधुमुदितमधुपरवरभसकरी।
फेनविलासप्रोज्ज्वलहासा ललितलहरिभरपुलकितसुतनुः
पश्य हरेऽसौ कस्य न चेतो हरति तरलगतिरहिमकिरणजा ॥

व्याख्या—यत्र क्रमशः भगण-मगण-सगण-भगणाः द्वादश लघवश्चैको गुरुर्भवति सा क्रौंचपदा। अत्र पञ्चभिः पञ्चभिः अष्टभिः सप्तभिश्च यतिर्भवति।

यथा—क्रौञ्चपदाली-क्रौंचानां=पक्षिविशेषाणां पदालीभिः=चरणपंक्तिभिश्चित्रितं तीरं=तटं यस्याः सा। मदकलखगकुलकलकलरुचिरा—मदकलानां=मदमत्तानां खगानां=विहगानां कुलं=समूहस्तस्य कलकलेन=कोलाहलेन रुचिरा=मनोरमा। फुल्लसरोजश्रेणिविलासः—फुल्लानां = विकसितानां सरोजाणां=कमलानां श्रेण्याः = पंक्त्याः विलासः=आनन्दः शोभा वा यस्याः सा। मधुमुदितमधुपरवरभसकरी—मधुना = मकरन्देन मुदिता=प्रसन्ना मधुपानां = भ्रमराणां रवेण=गुञ्जारवेण रभसकरी=हर्षकारिणी। फेनविलासप्रोज्ज्वलहासा—फेनानां=डिण्डिराणां विलासः एव प्रोज्ज्वलः = उद्दीप्तः हासो यस्याः सा। ललितलहरिभरपुलकितसुतनुः—ललितेन = सुन्दरेण लहरिभरेण = तरंगभारेण पुलकिता = रोमाञ्चयुक्ता सुतनुः=सुन्दरं शरीरं यस्याः सा। तरलगतिः=चपलगतिः असौ अहिमकिरणजा—सूर्यतनया यमुना कस्य चेतः= कस्य मनः न हरति=नाकर्षति।

हिन्दी—जहाँ भगण मगण सगण भगणा द्वादश लघुवर्ण और गुरु हो वह क्रौंचपदा कहलाती है। यहाँ पाँच पाँच आठ और सात अक्षरों से यति होती है।

यथा—क्रौंच पक्षियों की पद पंक्ति से चित्रित तट वाली, मत्त खग कुल के कलरव से मनोरम, विकसित कमल पंक्ति की शोभा वाली, मधुरस से प्रसन्न भ्रमरों के निनाद से हर्षोत्पादिनी, फेन विलास से उद्दीप्त हँसी वाली, सुन्दर लहरों के भार से रोमाञ्चित शरीर वाली तालगति युक्त वह सूर्यतनया यमुना किसके चित्त को आकृष्ट नहीं करती है।

(२६) उत्कृतिः (षड्विंशत्यक्षरा वृत्तिः)।

म म त न न न र स ल ग

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । । । । । । । । । । । । ऽ । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ

वस्वीशाश्वैश्छेदोपेतं ममतनयुगनरसलगैर्भुजङ्गविजृम्भितम् ॥१॥

हेलोदञ्चन्न्यञ्चत्पादप्रकटविकटनटनभरो रणत्करतालक-
श्चारुप्रेङ्खच्चूडाबर्हः श्रुतितरलनवकिसलयस्तरङ्गितहारधृक्।
त्रस्यन्नागस्त्रीभिर्भक्त्या मुकुलितकरकमलयुगं कृतस्तुतिरच्युतः
पायान्नश्छिन्दन् कालिन्दीह्रदकृतनिजवसतिबृहद्भुजङ्गविजृम्भितम् ॥

व्याख्या—यत्र क्रमशः द्वौ मगणौ तगणः त्रिनगणाः रगणः सगणः लघुर्गुरुश्च स्युः तद्भुजङ्गविजृम्भितं नाम वृत्तम्। अत्र अष्टभिः एकादशभिः सप्तभिर्वर्णैः यतिः भवति।

यथा—हेलोदञ्चन्न्यञ्चत्पादप्रकटविकटनटनभरः—हेलया=लीलया उद्भ्रन्तौ = उद्गच्छन्तौ न्यञ्चन्तौ = अधःपतन्तौ पादौ = चरणौ यस्मिन् सः। प्रकटविकटनटनभरः—प्रकटः=प्रस्फुटः विकटः=धृष्टः विलक्षणो वा नटनभरः = नर्तनानन्दो यस्य सः। रणत्करतालकः—रणत्=क्वणत् करतालकं यस्य सः। चारुप्रेङ्खच्चूडाबर्हः—चारु = रुचिरं प्रेङ्खन् = चञ्चलः चूडाबर्हः = मस्तकस्थमयूरपिच्छं यस्य सः। श्रुतितरलनवकिसलयः—श्रुत्योः = कर्णयोस्तरलं=चपलं नवकिसलयं=नूतनदलं यस्य सः। तरङ्गितहारधृक्—तरङ्गितं = लोलं हारं = स्रक्धरतीति तम्। त्रस्यन्तीभिः=भीताभिः। नागस्त्रीभिः=सर्पिणीभिः। भक्त्या = आदरेण। मुकुलितकरकमलयुगम्—मुकुलितं = कोरकितं करकमलयोः=हस्तारविन्दयोः युगं यस्मिन्, तत् = कराञ्जलिपुटम्। कृतस्तुतिः—कृता = विहिता स्तुतिः = स्तवनं यस्य सः अच्युतः = माधवः। कालिन्दीह्रदकृतनिजवसतिबृहद्भुजङ्गविजृम्भितम्—कालिन्दीह्रदे=यमुनाकुण्डे कृता वसतिः=

वासः येन तथाविधः यः वृहद्भुजङ्गः=महानागः कालियनामा, तस्य विजृम्भितं=चेष्टितं छिन्दन्=नाशयन् सन् । नः=अस्मान् पायात्=रक्षेत् ।

हिन्दी—जहाँ दो मगण तगण तीन नगण रगण सगण लघु तथा एक गुरु हो, वह भुजंग विजृम्भित वृत्त कहलाता है। इसमें आठ ग्यारह तथा सात वर्णों से यति होती है।

यथा—अनायास ही पैर उठाते और नीचे रखते हुए स्पष्ट रूप से विलक्षण नृत्य करते हैं और करताल की ध्वनि करते हुए रमणीक नाट्य विलास वाले मस्तक पर चञ्चल मयूरपिच्छ (मोरपंख) धारण किये, कानों में चञ्चल नूतन पल्लवों के आभूषण बनाये, नृत्यवश तरंगित हार धारण किये हुए, भयभीत सर्पिणियों से स्तुति किये जाते हुए भगवान् श्रीकृष्ण कालिन्दी कुण्ड में निवास किये हुए विशाल नाग कालिय की चेष्टाओं को नष्ट करते हुए हमारी रक्षा करे।

अत्र वृत्तरत्नाकरेऽदश्छन्दोऽधिको दृश्यते—

म न न न न न न स ग ग

S S S । S S S

मो नाः षट् सगगितियदि नवरसरसशरयतियुतमपवाहाख्यम् ॥१॥

व्याख्या—यदि पादेः क्रमशः मगणः षण्णगणाः द्वौ गुरू च इति सर्वे भवन्ति तदा तद् अपवाहवृत्तं भवति । अत्र नवभिः षड्भिः षड्भिः पञ्चभिरक्षरैश्च यतिर्भवति ।

हिन्दी—जहाँ मगण छह नगण सगण दो गुरु तथा नव, छह, छह एवं पाँच वर्णों से यति हो तो वह अपवाह नामक छन्द होता है।

अथ दण्डकाः

न न र र र र र र र

। । । । । । S । S S । S S । S S । S S । S S । S S । S S । S

यदिह नयुगलं ततः सप्त रेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रपातो भवेद्दण्डकः ॥१॥

प्रलयघनघटामहारम्भमेघावलीचण्डवृष्टिप्रपाताकुलं गोकुलं
सपदि समवलोक्य सव्येन हस्तेन गोवर्धनं नाम शैलं दधल्लीलया ।
कमलनयन ! रक्ष रक्षेति जल्पत्त्रसन्मुग्धगोपाङ्गनाऽऽलिङ्गनानन्दितो
गलदभिनवधातुधाराविचित्राङ्गरागो मुरारातिरस्तु प्रमोदाय नः॥

व्याख्या— यदा द्वौ नगणौ सप्तरगणाश्च भवन्ति तदा चण्डवृष्टिप्रपातो नाम दण्डको भवति ।

यथा—गोकुलं प्रलये=प्रलयकाले घनघटानां=सघनमेघानां यथा महान् आरम्भो यस्याः, तथाविधाः मेघावल्याः चण्डवृष्टिप्रपातेन=घोरवर्षणधारयाऽऽकुलं=पीडितं समवलोक्य=दृष्ट्वा । सपदि=शीघ्रं लीलया=अनायासेन । सव्येन=वामेन हस्तेन=करेण गोवर्द्धनं नाम=गोवर्द्धनाभिधं, शैलं=पर्वतम् । दधन्=धारयन् । गलदभिनवधातुधाराविचित्राङ्गरागः—गलन्तीभिः अभिनवाभिः=नूतनाभिः धातुधाराभिः=मनःशिलादीनां धाराभिः विचित्रः=विविधवर्णः अङ्गरागो यस्य सः । हे कमलनयन = हे पद्माक्ष ! रक्ष रक्ष=रक्षां कुरु, रक्षां कुरु इति=एवं जल्पन्तीनां=कथयन्तीनाम् । भयभीतानां=मुग्धानां सुन्दरीणाम् गोपाङ्गनानां=गोपीनाम् । आलिगनेन=आश्लिष्टेन । आनन्दितः=प्रसन्नः । मुरारातिः=मुरारिः कृष्ण स नः=अस्माकं प्रमोदाय=प्रसन्नतायै । अस्तु = भवतु ।

हिन्दी—जहाँ दो नगण और सात रगण हों वह चण्डवृष्टि दण्डक वृत्त कहलाता है।

यथा–गोकुल में प्रलय काल में घनघोर घटाओं वाली प्रचण वृष्टि से पीड़ित देख कर शीघ्र विना परिश्रम किये ही बाये हाथ से गोवर्द्धन नामक पर्वत को धारण करते हुए गिरती हुई नूतन मनःशिलादि धातु धाराओं से विविध रंग अंग राग (लेपन) वाले हे कमल नयन 'बचाओ बचाओ' इस प्रकार कहती हुई भयभीत सुन्दरी गोपिकाओं के आलिंगन से प्रसन्न मुरारि श्रीकृष्ण हम सबको प्रसन्न बनायें।

**प्रतिचरणविवृद्धरेफाः स्युरर्णोऽर्णव-
व्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशङ्खादयः ॥ २ ॥**

जय जय जगदीश ! विष्णो ! हरे ! राम !
दामोदर ! श्रीनिवासाच्युतानन्त ! नारायण !
त्रिदशगणगुरो ! मुरारे ! मुकुन्दासुरारे !
हृषीकेश ! पीताम्बर ! श्रीपते ! माधव ! ।

गरुडगमन ! कृष्ण ! वैकुण्ठ ! गोविन्द !
विश्वम्भरोपेन्द्र ! चक्रायुधाधोक्षज ! श्रीनिधे !
बलिदमन ! नृसिंह ! शौरे ! भवाम्भोधि-
घोरार्णसि त्वं निमज्जन्तमभ्युद्धरोपेत्य माम् ॥

एवमर्णवादीनामप्युदाहरणानि बोध्यानि ।

व्याख्या—प्रतिचरणविवृद्धरेफाः—चरणे चरणे प्रतिचरणं विवृद्धः रेफः=रगणः यत्र ते दण्डकाः अर्णोऽर्णवादयः स्युः । सर्वेषु दण्डकेषु आदौ नगण-द्वयान्तरं नवसु रेफेषु अर्णवः, दशसु व्यालः, एकादशसु जीमूतः द्वादशसु लीलाकरः त्रयोदशसु उद्दामः चतुर्दशसु शंखो नाम दण्डको भवति ।

यथा – अथ जय जय जगदीश ! विष्णो !···त्वं जय=जयं प्राप्नोहि । शौरे ! त्वम् उपेत्य=पार्श्वमागत्य भवाम्भोधिघोरार्णसि=भव एव अम्भोधिः=सागरः तस्य घोरे=भीषणे अर्णसि=नीरे निमज्जन्तं = ब्रुडन्तं माम् अभ्युद्धर=निष्कासय ।

हिन्दी—सभी दण्डकों के आरम्भ में दो नगण अवश्य होते हैं । तदनन्तर सात से अधिक एक एक रगण बढ़ाते जाने पर अर्ण, अर्णव, व्याल, जीमूत आदि अनेक दण्डक बन जाते हैं । दो नगण और आठ रगण होने पर अर्ण, नौ में अर्णव, दश में व्याल, ग्यारह में जीमूत, बारह में लीलाकर, तेरह में उद्दाम, चौदह होने पर शङ्ख नामक दण्डक होते हैं ।

यथा—हे जगदीश विष्णो ! तुम्हारी विजय हो, हे शौरे ! आप मेरे पास आकर दुस्तर अपार संसार सागर में डूबते हुये मेरा उद्धार करें । आप सर्वश्रेष्ठ हैं । (जगदीश आदि सब विष्णु भगवान् के विशेषण हैं ।)

न न य य य य य य य
। । । । । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

प्रचितकसमभिधो धीरधीभिः स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरैः सप्तभिर्यैः ॥

मुरहर ! यदुकुलाम्भोधिचन्द्र ! प्रभो ! देवकीगर्भरत्न ! त्रिलोकैकनाथ !
प्रचितकपटसुरारिव्रजोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्र !
चरणनखरसुधांशुच्छटोन्मेषनिःशेषितध्यायिचेतोनिविष्टान्धकार !
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलोच्छेदमेघ ! प्रसीद प्रसीद प्रसीद ॥

व्याख्या—यत्र पादे द्वौ नगणौ षड्यगणाश्च स्युः तद् प्रचितकसमभिध-दण्डकवृत्तम् ।

यथा—हे मुरहर=हे मुरनाशक ! यदुकुलाम्भोधिचन्द्र = यदुकुलम् एव अम्भोधिः=सिन्धुः तस्य चन्द्रः तत्सम्बोधने=हे यदुवंशसिन्धुचन्द्र ! प्रभो=हे स्वामिन् ! देवकीगर्भरत्न=हे देवक्याः गर्भेषु रत्नमिव तत्सम्बोधने । हे त्रिलोकैकनाथ=हे त्रिभुवनस्वामिन् ! प्रचितकपटसुरारिव्रजोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे—प्रचितः=प्रवृद्धः कपटः=छलं यस्य तथाविधस्य सुरारिव्रजः=दैत्यवृन्दम्, तदेवोद्दाम=निरर्गलः दन्तावलस्तोमः—दन्तावलानां=करिणां स्तोमः=समुदायः तस्य विद्रावणे=विनाशे । केशरीन्द्र =हे मृगेन्द्रवर । चरणनखररूपा ये सुधांशवश्चन्द्राः तेषां छटोन्मेषेण—छटायाः =शोभायाः उन्मेषेण=प्रकाशेन निःशेषितः=समाप्तः ध्यायिनां=ध्यानकर्तां भक्तानां यः परितापः=सन्तापः स एव चेतोनिविष्टः=मनः स्थितः अंधकारः= अज्ञानं तत्सम्बोधने । प्रणतजनानाम्=नतभक्तानां यः परितापः=सन्तापः स तव उग्रः=प्रचण्डः दावानलः=दावाग्निः तस्य उच्छेदे=विनाशे मेघस्वरूप= हे घनरूप । प्रसीद=प्रसन्नो भव । प्रसीद=अस्मान् प्रति प्रसन्नो भवेति ।

हिन्दी —जहाँ दो नगण शेष छह यगण हों वह प्रचितकसमभिध दण्डक कहलाता है ।

यथा—हे मुरारे ! हे यदुकुल रूपी सागर के चन्द्र ! हे प्रभो ! हे देवकी के रत्नगर्भ ! हे त्रिभुवनस्वामिन् ! हे दैत्य वृन्द के प्रवृद्ध कपटरूपी हाथियों के लिए सिंहराज ! अपने चरणनख रूपी अमृत किरणों के प्रकाश से भक्तजनों के हृदयान्धकार को नष्ट करने वाले ! हे भक्तों के सन्ताप रूपी प्रचण्ड दावानल के लिए मेघ स्वरूप भगवन् ! मुझ पर प्रसन्न हो जाइये, प्रसन्न हो जाइये ।

स स स स स स स स स
। । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । । ऽ । । ऽ

सगणः सकलः खलु यत्र भवेत्तमिह प्रवदन्ति बुधाः कुसुमस्तबकम् ॥४॥

विरराज यदीयकरः कनकद्युतिबन्धुरवामदृशः कुचकुड्मलगो
भ्रमरप्रकरेण यथाऽऽवृतमूर्तिरशोकलताविलसत्कुसुमस्तबकः ।
स नवीनतमालदलप्रतिमच्छवि बिभ्रदतीव विलोचनहारि वपु-
श्चपलारुधिरांशुकवल्लिधरो हरिरस्तु मदीयहृदम्बुजमध्यगतः ॥

व्याख्या—यत्र वृत्ते सकलः=समस्तः सगण एव; सप्तविंशत्यक्षरघटित-पादस्य दण्डकस्य; बुधाः=विद्वांसः कुसुमस्तबकं नाम दण्डकच्छन्दः भवति।

यथा—यदीयकरः=यस्य हस्तम्। कनकद्युतिवत्=स्वर्णकान्तिसमम्। वन्धुरा=मनोरमा या वामदृक्=वामाक्षिवामा, तस्याः कुचकुड्मले=पयोधरकोरके गच्छतीति=कुचोपरि स्थितः। भ्रमरप्रकरेण—भ्रमराणां=मधुपानां प्रकरेण=समूहेन। आवृता=आच्छादिता मूर्तिः=स्वरूपं यस्य तथाभूतः अशोकलतायाः=वकुलवीरुधः विलसत्=शोभमानः कुसुमस्तबकः=पुष्पगुच्छः यथा विरराज=रेजे। नवीनतमालदलप्रतिमच्छवि—नवीनस्य तमालदलस्य प्रतिमा छविर्यस्य तथाविधम्=नूतनतमालपत्रतुल्यकान्तम्। अतीव=अत्यन्तं विलोचनहारि=नयनमनोरमं, वपुः=शरीरं, विभ्रद्=धारयन् चपलावत्=तडिदिव रुचिरा=मनोहरा या अंशुकवल्लिः=पटवल्लिः, तां धरतीति तथाविधः सः=असौ, हरिः=माधवः मदीये हृदयाम्बुजे=मम हृत्पद्मे मध्यगतः=स्थितः अस्तु=वर्तताम्।

हिन्दी—जहाँ समस्त चरण में सगण ही हो उसे कुसुमस्तबक छन्द विद्वान् कहते हैं।

यथा—जिनका हाथ स्वर्णकान्ति-सा गौरवर्ण व्रजवनिताओं के पयोधर कोरकों पर स्थित, अलिवृन्द से आवृत स्वरूप वाले, अशोक लता के विलसित पुष्पगुच्छ सा शोभित हुआ शीघ्र प्रस्फुटित तमाल पत्र सदृश कान्ति वाले अतीव नयनाकर्षक शरीर को धारण करते हुए विजली के समान मनोज्ञ उत्तरीय वस्त्रलताधारी ऐसे माधव मेरे हृदय कमल के बीच में स्थित (बना) रहे।

र र र र र
ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ

यत्र रेफः परं स्वेच्छया गुम्फितः स स्मृतो

र र र र
ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ

दण्डको मत्तमातङ्गलीलाकरः ॥ ५ ॥

हेमगौरं वसानोऽशुकं शक्रनीलासिते वर्ष्मणि स्पष्टदिव्यानुलेपाङ्किते तारहारांशुवक्षोनभश्चित्रमालाऽञ्चितो भव्यभूषोज्ज्वलाङ्गः समं सीरिणा अञ्जनाभाम्बरेणेन्दुकुन्दाभदेहेन लीलापरीहासहासोर्मिकौतूहलैः कंसरङ्गाद्रिगः पातु नश्चक्रपाणिर्गतिक्रीडया मत्तमातङ्गलीलाकरः ॥

व्याख्या—यत्र सर्वे (नव) रगणाः स्युः स मत्तमातंगलीलाकरः नाम वृत्तम्।

यथा—शक्रनीलासिते—इन्द्रनीलमणिसदृशश्यामवर्णे। स्पष्टदिव्यानुलेपांकिते—स्पष्टः = प्रकटितः दिव्यः = अलौकिकः यः अनुलेपः = अङ्गरागः, तेनाङ्किते = लांछिते वर्ष्मणि = शरीरे। हेमगौरं=काञ्चनकान्तम् अंशुकं=वस्त्रं पीताम्बरं वसानः = विभ्राणः तारहारांशुवक्षोनभश्चित्रमालाऽञ्चितः—तारः=उच्चो यो हारः, तस्यांशवः=किरणाः यत्र तादृशं वक्षः एव नभः=गगनं तस्मिन् चित्रमालया=विविधरङ्गमालया अंचितः = शोभितः। भव्यभूषोज्ज्वलाङ्गः—भव्या=मनोहरा या भूषा=अलङ्कारः तया उज्ज्वलमंगं यस्य सः। अञ्जनाभं = कज्जलकान्तम् श्यामवर्णम् अम्बरं=वासः यस्य तेन। सीरिणा=बलभद्रेण समं=सह लीलाविलासः=परिहासः नर्मवचनं हासो हास्यं तेषां ऊर्मिभिः = तरङ्गैः कौतूहलैः उपलक्षितः कंसस्य रंगः=युद्धभूमिरेव अद्रिः=पर्वतः तत्र गच्छति इति तथाविधः गतिक्रीडया=गतिविलासेन हेतुना मत्तस्य=क्षीवस्य मातंगस्य=गजस्य लीलां=विलासं करोतीति तथाविधः चक्रपाणिः—चक्रं पाणौ यस्य सः=सुदर्शनहस्तो विष्णुः नः=अस्मान् पातु=अवतु।

हिन्दी—जहाँ सभी (नौ) रगण हों वह मत्तमातंगलीलाकर नामक दण्डक होता है।

यथा—इन्द्र नीलमणि सदृश श्यामल, अलौकिक अंगराग से अलंकृत शरीर पर स्वर्णकान्त पीताम्बर धारण किये हुए उच्चहार की किरण वाले; वक्षःस्थल रूपी आकाश में विचित्र रंग माला से विभूषित कज्जल सदृश श्याम वर्ण वस्त्र वाले, चन्द्रमा तथा कुन्द पुष्पवत् शरीर कान्ति वाले, श्रीकृष्ण बलराम के साथ लीला, हास, परिहास, नर्म वचन वाली परम्पराओं से तथा कौतूहल से उपलक्षित कंस की रंगभूमि रूपी पर्वत पर गये हुए गमन विलास

के कारण मत्त हाथी का विलास करने वाले चक्रपाणि भगवान् विष्णु हम सब लोगों की रक्षा करें।

। S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S

लघुर्गुरुर्निजेच्छया यदा निवेश्यते तदैष दण्डको भवत्यनङ्गशेखरः ॥६॥

उदेत्यसौ सुधाकरः पुरो विलोकयाद्य राधिके ! विजृम्भमाणगौरदीधिती-
रतिस्वहस्तनिर्मितः कलाकुतूहलेन चारुचम्पकैरनङ्गशेखरः किमु ? ।
इति प्रमोदकारिणीं प्रियाप्रसादलक्षणां गिरं समुद्गिरन्मुरारिरद्भुतां
प्रदोषकालसङ्गमोल्लसन्मना मनोजकेलिकौतुकी करोतु वः कृतार्थताम्॥

व्याख्या—यदा निजेच्छया = स्वेच्छया क्रमशः लघुः गुरुः च निवेश्यते = स्थाप्यते तदाऽनंगशेखरः दण्डको भवति ।

यथा—हे राधिके=अयि वृषभानुसुते ! अद्य = सम्प्रति । पुरः=समक्षम् पूर्वस्यां दिशि विजृम्भमाणाः=समुल्लसन्त्यः गौरवर्णाः दीधितयः यस्य सः । असौ = एषः सुधाकरः=चन्द्रः उदेति = उदितो भवति इति विलोकय = अवलोकय । असौ=एषः चन्द्रः कलाकुतूहलेन = रचनाकौतुकेन चारुचम्पकैः= रुचिरचम्पकपुष्पैः करणभूतैः । रत्या = कामभार्यया स्वहस्तेन निर्मितः= रचितः । अनंगशेखरः—अनंगस्य=मदनस्य शेखरः=शिरोभूषणं किमु ? इति प्रमोदकारिणीं=आनन्दकारिणीं प्रियायाः = राधिकायाः प्रसादः = प्रसन्नता। तल्लक्षणाम् अद्भुतां=विचित्राम् । गिरं = वाणीम् । समुद्गिरन्=उच्चारयन् । मनोजस्य=मदनस्य या केलिः=क्रीडा तत्र कौतुकी = उत्सुकः । प्रदोषकाल-संगमोल्लसन्मनः = प्रदोषकाले = निशाया आरम्भे यः संगमः = सुरतं तस्मिन् उल्लसद्=आसक्तं मनो यस्य तथाविधः मुरारिः=मुररिपुः श्रीकृष्णः । वः= युष्माकं कृतार्थताम्=सफलतां करोतु=विदधातु ।

हिन्दी—जहाँ स्वेच्छा से क्रमशः लघु तथा गुरु हो वह **अनंगशेखर** दण्डक कहलाता है ।

यथा—हे राधिके ! अब पूर्व दिशा में उज्ज्वल रश्मियों वाला चन्द्रमा उदित हो रहा है । देखो यह चन्द्रमा रचना-कौतुक के कारण रुचिर चम्पा के पुष्पों से रति के द्वारा अपने हाथ से बनाये काम का शिरोभूषण बनाया गया है । इस प्रकार हर्षप्रद प्रिया राधिका की प्रसन्न करने वाली अद्भुत वाणी

को कहते हुए मनोज की क्रीडा में उत्सुक प्रदोष काल में सुरत में आसक्त मन वाले मुरारि श्रीकृष्ण तुम सबको कृतार्थ करें ।

S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S । S ।

यत्र दृश्यते गुरोः परो लघुः क्रमात्स उच्यते बुधैरशोकपुष्पमञ्जरीति।७॥

मूर्ध्नि चारुचम्पकस्रजा सलीलवेष्टनं लसल्लवङ्गचारुचन्द्रिका कचेषु
कर्णयोरशोकपुष्पमञ्जरीवतंसको गले च कान्तकेसरोपक्लृप्तदाम ।
फुल्लनागकेसरादिपुष्परेणुरूषणं तनौ विचित्रमित्युपात्तवेश एष
केशवः पुनातु नः सुपुष्पभूषितः सुमूर्तिमानिवागतो मधुर्विहर्तुमत्र ॥

व्याख्या—यत्र क्रमशः गुरु-लघुवर्णाः सर्वत्र भवन्ति तदशोकपुष्प-मञ्जरी वृत्तं कथ्यते ।

यथा—मूर्ध्नि=उत्तमांगे । चारु = रुचिरा या चम्पकस्रक् = चम्पकपुष्प-माला तया सलीलं=सकौतुकं वेष्टनं=बन्धनं, कचेषु=कुन्तलेषु लसन्ति = शोभमानानि लवंगानि=लवंगपुष्पाणि च।रुचन्द्रिका=मनोरममल्लिका कुसुमं च कर्णयोः = श्रोत्रयोः अशोकपुष्पमंजरीवतंसकः = अशोकमञ्जर्याः कृतः = अशोकपुष्पकृतः वतंसकः=विभूषणं, गले = कण्ठदेशे । कान्तं=मनोहरं केसरो-पक्लृप्तं=वकुलकुसुमनिर्मितं दाम=माल्यं, तनौ = देहे फुल्लनागकेसरादिपुष्प-रेणुरूपणं—फुल्लानां=विकसितानां नागकेसरादिपुष्पाणां रेणुभिः=परागकणैः रूपणं=रञ्जनम् इति=एवं विचित्रम् = अद्भुतं यथा स्यात्तथा उपात्तः=गृहीतः वेशः येन तथाभूतः, सुपुष्पैः = श्रेष्ठकुसुमैः भूषितः = अलंकृतः अत्र = अस्मिन् वने । विहर्तुं=विहारं कर्तुम् आगतः=आयातः । मूर्तिमान्=शरीरधारी वसन्त इव प्रतीपमानः केशवः नः=अस्मान् पातु=अवतु ।

हिन्दी—जहाँ समस्त चरण में गुरु के बाद लघु हों वह अशोकपुष्प-मञ्जरी छन्द कहलाता है ।

यथा—शिर पर मनोहर चम्पक पुष्पों की माला से सविलास बन्धन, बालों में शोभित लौंग के फूल और मनोरम वकुल कुसुम, कानों पर अशोक पुष्प मंजरी के भूषण, गले में मनोरम पराग कणों से लेपन, इस प्रकार अद्भुत वेश धारण किये, सुन्दर पुष्पों से अलंकृत इस वन में विहार करने को आया मूर्तिमान् वसन्त जैसे केशव हमारी रक्षा करें ।

अत्रैते दण्डकाः पुस्तकान्तरेष्वधिका दृश्यन्ते—

य य य य य य

I S S I S S I S S I S S I S S I S S

यकारैः कवीच्छाऽनुरोधान्निबद्धैः प्रसिद्धो

य य य य य

I S S I S S I S S I S S I S S

विशुद्धोऽपरो दण्डकः सिंहविक्रान्तनामा ॥ १ ॥

र ज र ज र ज

S I S I S I S I S I S I S I S I S I S I S ।

स्वेच्छया रजौ क्रमेण सन्निवेशयत्युदारधीः क-

र ज र ज र

S I S I S I S I S I S I S I S I S I S I S

विः स दण्डकः स्मृतो जगत्यशोकमञ्जरी ॥ २ ॥

र र र र र र र

S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S

यत्र रेफान् कविः स्वेच्छया पाठसौकर्यसापेक्षया रोपय-

र र र र र र र

S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S

त्येष धीरैः स्मृतो दण्डको मत्तमातङ्गलीलाकरः ॥३॥

इति छन्दोमञ्जर्या समवृत्ताख्यो द्वितीयः स्तबकः ।

व्याख्या—यत्र पादे सर्वे यगणाः स्युस्तत् सिंहविक्रान्तनाम दण्डको भवति यत्रः क्रमशः रगणजगणौ स्तः तदशोकमञ्जरी दण्डकः । यत्र पादे सर्वे रगणाः स्युः तन्मत्तमातंगलीलाकरनामा दण्डको भवति ।

हिन्दी—जहाँ प्रत्येक पाद में यगण ही हों वह सिंहविक्रान्त दण्डक, जहाँ क्रमशः रगण तथा जगण हो वह अशोकमञ्जरी तथा जहाँ सभी रगण हों वह मत्तमातंग लीलाकर दण्डक होता है ।

इति परमेश्वर दीन पाण्डेय कृतायाः सुधासंस्कृतहिन्दी-
व्याख्याद्वयोपेतायाः छन्दोमञ्जर्याः समवृत्ताख्यः
द्वितीयः स्तबकः ।

—: ० :—

तृतीयः स्तबकः

अर्धसमवृत्तम्

स स स ल ग भ भ भ ग ग

I I S I I S I I S I S S I I S I I S I I S S

विषमे यदि सौ सलगा दले, भौ युजि भाद् गुरुकावुपचित्रम् ॥१॥

द्विरावृत्त्या पूरणीयः श्लोकः ।

मुरवैरिवपुस्तनुतां मुदं, हेमनिभांशुकचन्दनलिप्तम् ।
गगनं चपलामिलितं यथा, शारदनीरधरैरुपचित्रम् ॥

व्याख्या—यदि प्रथमे तृतीये च पादे सौ=सगणद्वयं सलगाः=सगणः लघुः गुरुश्च स्यात् युजि=द्वितीये चतुर्थे च दले=पादे भात् =भगणात् परं भौ=भगणद्वयं द्वौ गुरू च भवेतां तदुपचित्रं नाम वृत्तम् ।

यथा—हेमनिभं=स्वर्णकान्तम् । पीताभं=पीतवर्णम् । अंशुकं=वस्त्रं पीताम्बरम् यत्र । चन्दनैः लिप्तं=चन्दनर्चचितम् । मुरवैरिवपुः-मुरवैरिणः= मुरारेः वपुः=शरीरम् चपलामिलितम्—चपलायाः=विद्युतः मिलितम्=सहितं शारदनीरधरैः=शरदृतोः नीरधरैः=घनैः गगनं=व्योममण्डलम् । यथा= इव मुदं=आमोदं तनुतां=विस्तारयतु ।

हिन्दी—जहाँ प्रथम तथा तृतीय चरण में सगण तीन, लघु गुरु भगण के पश्चात् दो भगण और दो गुरु हों वह उपचित्र नामक वृत्त होता है ।

यथा—सुवर्ण के समान पीतवर्ण वस्त्र (पीताम्बर) चन्दन चर्चित शरीर मुरारि श्रीकृष्ण का शरीर बिजली के सहित शरत्कालीन बादलों से आकाश-मण्डल सदृश आनन्द का प्रसार करें ।

ल ल भ भ ग ग भ भ भ ग ग

I I S I I S I I S S S I I S I I S I I S S

विषमे प्रथमाक्षरहीनं, दोधकमेव हि वेगवती स्यात् ॥ २ ॥

स्मरवेगवती व्रजरामा, केशववंशरवैरतिमुग्धा ।
रभसान्न गुरून् गणयन्ती, केलिनिकुञ्जगृहाय जगाम ॥

व्याख्या —यदि दोधक विषमे = प्रथमे तृतीये च पादे प्रथमाक्षरहीनं = प्रथमवर्णरहितं स्यात् तद् वेगवतीवृत्तं कथ्यते ।

यथा—स्मरवेगवती–स्मरस्य वेगवती = कामपीडिता । काचित् व्रज-रामा = व्रजाङ्गना । केशवस्य = श्रीकृष्णस्य वंशरवैः = वेणुध्वनिभिः अतिमुग्धा = अतीव मोहमादधाना । गुरून् = गुरुजनान् श्वसुरादीन् । न गणयन्ती = ध्यानं न कुर्वन्ती । केलिनिकुञ्जगृहाय = क्रीडाकुञ्जभवनाय । रभसात् = वेगात् जगाम = गतवती ।

हिन्दी — यदि दोधक वृत्त प्रथम तथा तृतीय चरण में प्रथम अक्षरहीन हो तो वह वेगवती वृत्त कहलाता है ।

यथा—कामार्त्त कोई व्रजांगना श्रीकृष्ण जी की मुरली की तान से अति मुग्ध श्वसुर आदि गुरुजनों की उपेक्षा कर क्रीडा कुञ्ज भवन के लिए शीघ्रता से चली गई ।

ल ल भ भ र न भ भ र

। । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

अयुजि प्रथमेन विवर्जितं द्रुतविलम्बितकं हरिणप्लुता ॥ ३ ॥

स्फुटफेनचया हरिणप्लुता, बलिमनोज्ञतटा तरणेः सुता ।
कलहंसकुलारवशालिनी, विहरतो हरति स्म हरेर्मनः ॥

व्याख्या—यदा द्रुतविलम्बितम् अयुजि = प्रथमे तृतीये च पादे प्रथमाक्षरेण हीनं स्यात् तदा हरिणप्लुतानामकं वृत्तं भवति ।

यथा—स्फुटफेनचया—स्फुटः = स्पष्टः फेनचयः = फेनविसरो यस्याः सा । हरिणप्लुता—हरिणानां = मृगाणां प्लुतम् = उत्प्लुतम् यत्र सा । बलिमनोज्ञतटा—बलिभिः = अक्षतपुष्पचन्दनादिभिः मनोज्ञं = मनोरमं तटं = तीरं यस्याः सा । कलहंसकुलारवशालिनी–कलाः = रुचिराः ये हंसास्तेषां कुलानाम् आरवैः = निनादैः शालिनी = शोभिनी । तरणेः = सूर्यस्य सुता = दुहिता, यमुना । हरेः = माधवस्य । मनः = चेतः हरतिस्म = मोहयतिस्म ।

हिन्दी—जहाँ द्रुतविलम्बित वृत्त में प्रथम तथा तृतीय चरण में प्रथमाक्षर रहित हो वह हरिणप्लुता वृत्त कहलाता है ।

यथा—स्फुट फेन राशि से युक्त, उछलते कूदते हिरणों वाली अक्षत पुष्प चन्दनादि से मनोरम तट वाली, रुचिर हंसों के निनाद से शोभित सूर्यतनया यमुना का तट श्रीकृष्ण के मन को मोहित कर रहा था ।

न न र ल ग न ज ज र

। । । । । । ऽ । ऽ । ऽ । । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ

अयुजि ननरला गुरुः समे, तदपरवक्त्रमिदं नजौ जरौ ॥ ४ ॥

स्फुटसुमधुरवेणुगीतिभिस्तमपरवक्त्रमवेत्य माधवम् ।
मृगयुवतिगणैः समं स्थिता व्रजवनिता धृतचित्तविभ्रमाः ॥

व्याख्या — यस्य वृत्तस्य अयुजि = प्रथमे तृतीये च पादे नगणः नगणः रगणः लघुः गुरुश्च स्यात् । समे = द्वितीये चतुर्थे च पादे नगणः जगणः जगणः रगणश्च भवेत् तदपरवक्त्रं वृत्तम् ।

यथा—स्फुटसुमधुरवेणुगीतिभिः = स्पष्टाः = प्रकटिताः सुमधुराः = मनोरमाः याः वेणुगीतयः; वंशीध्वनयस्ताभिः । अपरवक्त्रम्—नास्तिपरं श्रेष्ठं यस्मात्तादपरं = असाधारणं वक्त्रम् आननम् यस्य तम् । माधवं = श्रीकृष्णम् अवेत्य = विज्ञाय धृतचित्तविभ्रमाः धृतः चित्तविभ्रमः = आश्चर्यं याभिस्तथाविधाः व्रजवनिताः = व्रजाङ्गनाः । मृगयुवतिगणैः = हरिणीवृन्दैः समं = सह स्थिताः = अवस्थिताः ।

हिन्दी—जहाँ प्रथम तथा तृतीय चरण में दो नगण रगण लघु गुरु हों और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में नगण दो जगण और रगण हो तो वह अपरवक्त्र नामक छन्द कहलाता है ।

यथा—सुस्पष्ट मधुर वंशी ध्वनि से असाधारण मुख बाले माधव को जानकर चित्त में आश्चर्य उत्पन्न करती हुई व्रजवनिताएँ हरिणी समूहों के साथ मुरली ध्वनि सुनकर खड़ी रहीं ।

न न र य न ज ज र ग

। । । । । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ । । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

अयुजि नयगरेफतो यकारो, युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ॥५॥

वैतालीयं पुष्पिताग्राञ्चेच्छन्त्यपरवक्त्रकम् ।

करकिसलयशोभया विभान्ती, कुचफलभारविनम्रदेहयष्टिः ।
स्मितरुचिरविलासपुष्पिताग्रा, व्रजयुवतिव्रततिर्हरेर्मुदेऽभूत् ॥

व्याख्या—यदा अयुजि=विषमे प्रथमे तथा तृतीये पादे द्वौ नगणौ रगणः यगणः युजि=समे द्वितीये चतुर्थे च चरणे नगणः द्वौ जगणौ रगणः गुरुः च स्यात् तत्पुष्पिताग्रावृत्तम् ।

यथा—करकिसलयशोभया—करौ एव किसलये=पाणिपल्लवे ताभ्यां या शोभा तया । विभान्ती=शोभयन्ती । कुचफलभारविनम्रदेहयष्टिः—कुचौ एव फले तयोः भारेण विनम्रा=अवनता देहयष्टिः=शरीरयष्टिः यस्याः सा । स्मित-रुचिर-विलासपुष्पिताग्रा—स्मितस्य यो रुचिरः विलासः=मृदुहास-मृदुलविलासः स एव पुष्पं तद् एवाग्रं यस्याः सा=मन्दहासविलासकुसुमवदना । व्रजयुवति-व्रततिः=व्रजांगना-पंक्तिः । हरेः=माधवस्य । मुदे=प्रसन्नतायै । अभूत्=बभूव ।

हिन्दी—जहाँ अयुज अर्थात् विषम प्रथम तृतीय चरणों में दो नगण रगण यगण और युज अर्थात् सम द्वितीय और चतुर्थ चरणों में नगण दो जगण रगण तथा गुरु हो तो वह पुष्पिताग्रा वृत्त होता है ।

यथा—करपल्लव की शोभा से शोभित पयोधर रूपी फलों के बोझ से नमन शील शरीर वाली मत्तहास के रुचिर विलास के कुसुम सदृश वदन वाली व्रजङ्गनारूपी लता श्रीकृष्ण को आमोद बढ़ा रही थी ।

स स ज ग स भ र ल ग
। । S । । S । S । S । । S S । । S । S । S

अयुजोर्यदि सौ जगौ युजोः, सभरा लगौ यदि सुन्दरी तदा ॥ ६ ॥

यदवोचत वीक्ष्य मानिनी, परितः स्नेहमयेन चक्षुषा ।
अपि वागधिपस्य दुर्वचं, वचनं तद्विदधीत विस्मयम् ॥

व्याख्या—यदि अयुजोः=प्रथमतृतीयपादयोः द्वौ सगणौ जगणः गुरुश्च स्यात् युजोः=द्वितीय-चतुर्थपादयोः सगणः भगणः रगणः लघुः गुरुश्च स्यात् तत् सुन्दरी नाम वृत्तं भवति ।

यथा—मानिनी=मानवती द्रौपदी । स्नेहमयेन=प्रेमपूर्णेन चक्षुषा=दृष्ट्या परितः=सर्वतः वीक्ष्य=अवलोक्य यद् अवोचत=यत्कथितवती, हिताहितं—हितं=हितकरम् अहितमनिष्टकरञ्च यदुक्तवती । वागधिपस्य=बृहस्पतेः अपि दुर्वचं=कथयितुमशक्यं तद् वचनम् । विस्मयम्=आश्चर्यम् विदधीत=कुर्वीत । अन्येषां तु कथैव का ।

हिन्दी—जहाँ विषम अर्थात् प्रथम तृतीय चरणों में क्रमशः दो सगण जगण और एक गुरु तथा सम अर्थात् द्वितीय चतुर्थ चरणों में सगण भगण रगण लघु और गुरु हों तो वह सुन्दरी नामक वृत्त कहलाता है ।

यथा—स्वाभिमानिनी द्रौपदी ने स्नेह मयी दृष्टि से चारों ओर देखकर जो कुछ कहा वह वागधिपति बृहस्पति को भी कहने में असमर्थ विस्मय-कारक था ।

एतानि छन्दांस्यधिकानि दृश्यन्ते वृत्तरत्नाकरे तत्परिशिष्टे च—

भ भ भ ग ग न ज ज य
S । । S । । S । । S S । । । । S । । S । S S

भत्रयमोजगतं गुरुणी चेद्, युजि च नजौ ज्ययुतौ द्रुतमध्या ॥ १ ॥

त ज र ग म स ज ग ग
S S । । S । S । S S S S S । । S । S । S S

ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चेत्, म्सौ ज्गौ ग् भद्रविराड भवेदनोजे ॥ २ ॥

स ज स ग भ र न ग ग
। । S । S । । । S S S । । S । S । । । S S

असमे सजौ सगुरुयुक्तौ, केतुमती समे भरनगाद् गः ॥ ३ ॥

त त ज ग ग ज त ज ग ग
S S । S S । । S । S S । S । S S । । S । S S

आख्यानकी तौ जगुरू ग ओजे, जतावनोजे जगुरू गुरुश्चेत् ॥ ४ ॥

ज त ज ग ग त त ज ग ग
। S । S S । । S । S S S S । S S । । S । S S

जतौ जगौ गो विषमे समे चेत्, तौ ज्गौ ग एषा विपरीतपूर्वा ॥ ५ ॥

र ज र य ज र ज र ग
S I S I S I S I S I S S I S I S I S I S I S I S S

स्यादयुग्मके रजौ रयौ समे चेत्, जरौ जरौ गुरुर्यवात्परामतीयम् ॥६॥

र स लग स ज ज ग
S I S I I S I S I I S I S I I S I S

सौ लगौ विषमे यदि, सजजा गुरुर्ललिता समे ॥ ७ ॥

त ज र ज ग ग ग
S S I I S I S I S I S I S S S

ओजे तपरौ जरौ जगौ गुरू समे जौ यौ,

र ज र य
S I S I S I S I S I S S

कीर्तिता बुधैरियं तु षट्पदाख्या ॥ ८ ॥

र ज र ज त र ज र ग
S I S I S I S I S I S S I S I S I S I S I S S

रो जरौ जसंयुतौ पदेऽसमेऽथ, युग्मे तरौ जरौ गुरुर्मृगीयवानी ॥ ९ ॥

न न भ भ न न र र
I I I I I I S I I S I I I I I I I I S I S S I S

अयुजि ननभभाः समकेऽपि तु, नयुगरयुगलं तदा कौमुदी ॥१०॥

न ज ज र स ज य र ल ग
I I I I S I I S I S I S I I S I S I I S S S I S I S

यदि विषमे भवतो नजौ जरौ, सजयाः समे तु रलौ गो मञ्जुसौरभम्॥११॥

स स ज ग ग स भ र य
I I S I I S I S I S S I I S S I I S I S I S S

विषमे ससजा यदा गुरू चेत्, सभरा येन तु कालभारिणीयम् ॥१२॥

इति छन्दोमञ्जर्याम् अर्धसमवृत्ताख्यस्तृतीयः स्तबकः ।

व्याख्या—यदि ओजगतं=विषमपादगतं भत्रयम्=त्रिभगणाः गुरुद्वयं= द्वौ गुरू च स्तः; युजि=समे द्वितीये चतुर्थे च पादे नगण-जगण-जगण-यगणाः स्युः तद्द्रुतमध्यावृत्तम् ॥ १ ॥

ओजे=विषमे प्रथमे तृतीये पादे च तगणः जगणः रगणः गुरुश्च स्यात्; द्वितीये चतुर्थे च पादे मगणः सगणः जगणः द्वौ गुरू च स्तः तद्भद्रविराट् नाम वृत्तं भवति ॥ २ ॥

असमे प्रथमे तृतीये च पादे सगणः जगणः सगणः गुरुः स्यात्; समे=द्वितीये चतुर्थे च पादे भगणः नगणः रगणः द्वौ गुरू च स्तः तत् केतुमतीवृत्तम् कथ्यते ॥ ३ ॥

ओजे=प्रथमे तृतीये च पादे द्वौ तगणौ जगणः गुरू च स्तः, अनोजे=समे द्वितीये चतुर्थे च पादे जगणः तगणः जगणः द्वौ गुरू च भवतस्तद् आख्यानकी वृत्तम् ॥ ४ ॥

विषमे=प्रथमे तृतीये च पादे जगणः तगणः जगणः द्वौ गुरू च यत्र, विपरीतपूर्वा समे द्वितीये चतुर्थे च पादे द्वौ तगणौ जगणः द्वौ गुरू च स्तः तद् विपरीतपूर्वा नाम वृत्तम् ॥५॥

अयुग्मके=विषमे प्रथमे तृतीये च पादे रगणः जगणः रगणः यगणः समे द्वितीये चतुर्थे च पादे जगणः रगणः जगणः रगणः गुरुश्च स्यात् तत् परामतीयवमती वा वृत्तम् ॥ ६ ॥

यदि विषमे=प्रथमे तृतीये च पादे रगणः सगणः द्वौ लघुगुरू; समे च सगणः जगणः जगणः गुरुश्च स्यात् सा ललिता वृतम् भवति ॥ ७ ॥

यदा ओजे=विषमे प्रथमे तृतीये च पादे तगणः जगणः रगणः जगणः त्रिगुरवश्च भवन्ति, पुनः विषमे रगणः जगणः रगणः यगणश्च तदा षट्पदा नाम वृत्तं स्यात् ॥ ८ ॥

यदा विषमे=प्रथमे तृतीये च पादे रगणः जगणः रगणः जगणः स्यात्; द्वितीये चतुर्थे च पादे तगणरगणौ जगणरगणौ गुरुश्चैकः स्यात् तन्मृगीयवानी वृत्तम् भवति ॥ ९ ॥

अयुजि=विषमे प्रथमे तृतीये च पादे द्वौ नगणौ द्वौ भगणौ च; समे=द्वितीये चतुर्थपादे च द्वौ नगणौ द्वौ रगणौ स्तः तत्कौमुदी नाम वृत्तं भवति ॥१०॥

यदि विषमे=प्रथमे तृतीये च पादे नगण: जगण: जगण: रगण:, द्वितीये चतुर्थे च पादे सगण: जगण: यगण: रगण: लघु: गुरुश्च स्यात् तन्मञ्जुसौरभं नाम वृत्तं भवति ॥११॥

यदा विषमे=प्रथमे तृतीये च पादे द्वौ सगणौ जगण: दौ गुरू स्त:; द्वितीये चतुर्थे च पादे सगण: भगण: रगण: यगणश्च स्यात् तत्कालभारिणीयं वृत्तं भवति ॥१२॥

इति परमेश्वरदीन पाण्डेय कृताया: सुधासंस्कृत-
हिन्दीव्याख्याद्वयसंवलिताया:
छन्दोमञ्जर्यास्तृतीय: स्तबक: ।

अथ चतुर्थः स्तबकः

(विषम-वृत्तम्)

स ज स ल न स ज ग
IIS IS I I I S I IIIIISISIS

प्रथमे सजौ यदि सलौ च, नसजगुरुकाण्यनन्तरम् ।
भ न भ ग स ज स ज ग
SIIIIIS IIS IIS ISIIISISIS
यद्यथ भनभगाः स्युरथो, सजसा जगौ च भवतीयमुद्गता ॥ १ ॥
विललास गोपरमणीषु, तरणितनया प्रभोद्गता ।
कृष्णनयनचकोरयुगे, दधती सुधांशुकिरणोर्मिविभ्रमम् ॥

व्याख्या—यदि प्रथमे पादे सगण: जगण: सगण: लघुश्च स्यु:, द्वितीये पादे नगण: सगण: जगण: गुरुश्च भवेयु:, तृतीये पादे भगण: नगण: भगण: गुरुश्चतुर्थे च पादे सगण: जगण: सगण: जगण: गुरुश्च स्युस्तदुद्गता नाम वृत्तम् ।

यथा—प्रभोद्गता—प्रभया = दीप्त्या उद्गता = उत्कर्षं गता । तरणितनया=यमुना गोपरमणीषु=गोपिकासु सतीष्वपि । ता: अधरीकृत्य कृष्णनयनचकोरयुगे—कृष्णनयनरूपिणि चकोरयुगे=चक्रवाकयुग्मे । सुधांशो:=अमृतदीधिते: चन्द्रस्य । किरणोर्मिविभ्रमम्=मरीचितरंगभ्रमम् । दधती=धारयती । विललास=रेजे ।

हिन्दी—जहाँ प्रथम पाद में सगण जगण सगण लघु, द्वितीय में नगण सगण जगण गुरु, तृतीय में भगण नगण भगण गुरु तथा चतुर्थ में सगण जगण सगण जगण और गुरु हो तो उद्गता नामक छन्द होता है ।

यथा—कान्तिमती यमुना गोपियों के रहते हुए भी उन्हें आधार बनाकर कृष्ण के नयन रूपी चकोरयुगल में चन्द्रमा की किरणतरंगों का भ्रम करती हुई शोभित हुई ।

प्रथमे सजौ यदि सलौ च, नसजगुरुकाण्यनन्तरम् ।
भ न ज लग
SII IIIISIIS
यद्यथ भनजलगाः स्युरथो, सजसा जगौ च भवतीयमुद्गता ॥२॥
अथ वासवस्य वचनेन, रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।
क्लान्तिरहितमभिराधयितुं, विधिवत्तपांसि विदधे धनञ्जयः ॥
इति भारवावुद्गताभेदः ।

व्याख्या—यत्र प्रथमे पादे सगण: जगण: सगण: लघु:, द्वितीये नगण: सगण: जगण: गुरु:, तृतीये यगण: नगण: जगण: लघु: गुरु:, चतुर्थे च सगण: जगण: गुरुश्च स्यु: तदोद्गता वृत्तं भवति ।

यथा—अथ=अनन्तरम् । वासवस्य=मुररिपो: कृष्णस्य वचनेन=कथनेन रुचिरवदन:=मनोहरानन: । धनञ्जय:=सव्यसाची अर्जुन: । क्लान्तिरहितं=शिवरूपं त्रिलोचनं=शिवम् अभिराधयितुम्=आराधयितुम् । विधिवत्=विधिपूर्वकम् । तपांसि=तपश्चर्याणि विदधे=चकार ।

हिन्दी—जहाँ प्रथम चरण में सगण जगण सगण लघु, द्वितीय में नगण सगण जगण गुरु, तृतीय में भगण नगण जगण लघु तथा चतुर्थ में सगण जगण सगण और गुरु हो तो उद्गता वृत्त होता है।

यथा—तदनन्तर मुरारि श्रीकृष्ण के कहने से सुमुख धनञ्जय शिवस्वरूप त्रिलोचन शिव जी को प्रसन्न करने के लिए विधिवत् तपस्या की।

त्रयमुद्गतासदृशमेव, पदमिह तृतीयमन्यथा।

र न भ ग

S I S I I I S I I S

जायते रनभगैर्ग्रथितं, कथयन्ति सौरभकमेतदीदृशम् ॥ ३ ॥

परिभूतफुल्लशतपत्र-वनविसृतगन्धविभ्रमा।
कस्य हृन्न हरतीह हरे!, मुखपद्मसौरभकला तवाद्भुता ॥

व्याख्या—पदत्रयमुद्गतासदृशं तृतीयं च पदं रगण-नगण-भगण-गुरुयुक्तं स्यात् तदा सौरभकं नाम वृत्तं भवति।

यथा—हे हरे = हे मुरारे! परिभूतफुल्लशतपत्रवनविसृतगन्धविभ्रमा—परिभूताः = तिरस्कृतः फुल्लस्य = विकसितस्य शतपत्रवनस्य = कमलवृन्दस्य विसृतः=प्रसृतः गन्धविभ्रमः=सौरभविस्तारो यया सा तव=भवतः। मुखपद्मसौरभकला—मुखमेव पद्म=वदनसरोजम्, तस्य सौरभकला = सुगन्धिकला। अद्भुता = विचित्रा। कस्य हृत्=कस्य चेतः। इह=अत्र। न हरति= न मोहयति, अपितु सर्वस्य हरत्येव।

हिन्दी—तीन चरण उद्गता छन्द के समान हो तथा तृतीय पाद में रगण नगण भगण और एक गुरु हो तो वह सौरभ नामक वृत्त कहलाता है।

यथा—हे हरे! विकसित कमल वृन्द की सुगन्ध के विस्तार को तिरस्कृत करने वाली तुम्हारे मुखकमल सुगन्ध कला अद्भुत है, वह किसके हृदय को मोहित नहीं कर लेती है।

नयुगं सकारयुगलञ्च, भवति चरणे तृतीयके।

न न स स

I I I I I I I I S I I S

तदुदितमुरुमतिभिर्ललितं, यदि शेषमस्य सकलं यथोद्गता ॥४॥

व्रजसुन्दरीसमुदयेन, मुदितमनसा स्म पीयते।
हिमकरगलितमिवामृतकं, ललितं मुरारिमुखचन्द्रविद्रुतम् ॥

व्याख्या—यदि तृतीये पादे नगणद्वयं सगणद्वयञ्च भवतः शेषं च सर्वमुद्गतेव, तावत् ललितनामकं वृत्तं भवति।

यथा—व्रजसुन्दरीसमुदयेन—व्रजसुन्दरीणां = व्रजरमणीनां समुदयेन = समुदायेन। मुदितमनसा-मुदितेन = हर्षितेन मनसा=मानसेन। मुरारिमुखचन्द्रविद्रुतं—मुरारेः = मुररिपोः श्रीकृष्णस्य मुखचन्द्रात = वदनेन्दोः विद्रुतं=गलितम् ललितम्=मनोहरम्। हिमकरगलितं—हिमकरात्=विधोः गलितं = स्रस्तम् अमृतम् इव = सुधेव। पीयते स्म=पानं क्रियते स्म।

हिन्दी—यदि तृतीय पाद में दो नगण और दो सगण हों तथा शेष सब उद्गता छन्दजैसा हो तो वह ललित छन्द कहलाता है।

यथा—व्रज सुन्दरियों के समुदाय से प्रसन्न मन से मुरारि श्री कृष्ण के मुख चन्द्र से टपके हुए सुन्दर अमृत को चन्द्रमा से टपका हुआ—जैसा पान किया गया।

भवत्यर्धसमं वक्त्रं विषमञ्च कदाचन।
तयोर्द्वयोरुपान्तेऽत्र छन्दस्तदधुनोच्यते ॥ ५ ॥

व्याख्या—वक्त्रं = वक्त्रनाम वृत्तम्। कदाचन=कदाचित्। अर्द्धसमं विषमं च भवति अत्र तयोर्द्वयोः=उभयोः अपि। उपान्ते=अन्तिमवर्णात् पूर्ववर्णे एव छन्दः अधुना = संप्रति उच्यते=कथ्यते।

हिन्दी—वक्त्र नामक छन्द भी कदाचित् अर्द्धसम और कदाचित् विषम हो जाता है अतः अब उन दोनों में अन्तिम वर्ण से पूर्व वर्ण में छन्द का नियम कहते हैं। यहाँ अन्तिम वर्ण के पूर्व वर्ण में ही विशेष नियम होता है, अन्यत्र नहीं।

य म ग य

। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ

वक्त्रं युग्म्यां मगौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभि ख्यातम् ।।

वक्त्राम्भोजं सदा स्मेरं, चक्षुर्नीलोत्पलं फुल्लम् ।
बल्लवीनां मुरारातेश्चेतोभृङ्गं जहारोच्चैः ।।

व्याख्या—अनुष्टुभिः एतन्नामके अष्टवर्णात्मके वृत्ते अब्धेः = चतुर्थवर्णात्परः यगणः स्यात् तथा युग्म्यां = द्वितीयचतुर्थपादयोः यावत् मगणो गुरुश्च स्यात् । तदा वक्त्रं नामकं वृत्तं ख्यातं = प्रसिद्धम् ।

यथा—वल्लवीनां = गोपीनाम् । सदा = सर्वदा । स्मेरत् = मन्दहासच्छटाशोभमानं वक्त्राम्भोजं = मुखकमलं, फुल्लं = विकचितम् । चक्षुर्नीलोत्पलम् = अक्षिनीलकमलम् । मुरारातेः = मुरारेः श्रीकृष्णस्य । चेतोभृङ्गं = मनोमिलिन्दम् उच्चैः = अधिकं जहार = अपहृतवान् ।

हिन्दी—अनुष्टुभ नामक अष्टवर्णात्मक छन्द में चतुर्थ वर्ण के अनन्तर यगण होने से तथा द्वितीय और चतुर्थ पाद में मगण तथा एक गुरु होने से वक्त्र नामक छन्द होता है ।

यथा—गोपियों के सदैव मन्द मुस्कान की शोभा वाले मुख कमल तथा विकसित नेत्ररूपी नीलकमल मुरारि श्रीकृष्ण को मनरूपी भ्रमर को अत्यधिक आकर्षित किया ।

य ज

। ऽ ऽ । ऽ ।

युजोश्चतुर्थतो जेन, पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ।। ६ ।।

रासकेलिसतृष्णस्य, कृष्णस्य मधुवासरे ।
आसीद् गोपमृगाक्षीणां, पथ्या वक्त्रमधुस्रुतिः ।।

व्याख्या—युजोः = द्वितीयचतुर्थचरणयोः । चतुर्थः = चतुर्थवर्णात् अनन्तरं जेन = जगणेन पथ्यावक्त्रं नाम वृत्तं भवति । तिद्वीयचतुर्थपादयोः पञ्चमसप्तमौ वर्णौ लघू षष्ठश्च गुरुः स्यात् । प्रथमतृतीययोस्तु यगण एव ।

यथा—रासकेलिसतृष्णस्य—रासस्य या केलिः = क्रीडा तस्यां सतृष्णस्य = लोलुपस्य कृष्णस्य = मुरारेः ! मधुवासरे = वसन्तकाले । गोपमृगाक्षीणां = गोपिकानाम् । वक्त्रात् = मुखात् या मधुस्रुति = सुधास्रावः सैव पथ्या = अनुकूला आसीदिति ।

हिन्दी—सम अर्थात् द्वितीय चतुर्थ वर्ण के अनन्तर जगण होने से पथ्यावक्त्र छन्द होता है अर्थात् पञ्चम सप्तम वर्ण लघु तथा षष्ठ वर्ण गुरु होता है । प्रथमतृतीय पादमें तो यगण ही रहता है ।

यथा—रास क्रीडा के लिए ललचाए श्रीकृष्ण के वसन्तकाल में गोपिका मृगनयनियों के मुख से टपकती हुई सुधाधारा अनुकूल ही थी ।

ल लगल

। । ऽ ।

पञ्चमं लघु सर्वत्र, सप्तमं द्विचतुर्थयोः ।

न लगल

। । ऽ ।

गुरु षष्ठं च जानीयात् शेषेष्वनियमो मतः ।। ७ ।।
प्रयोगे प्रायिकं प्राहुः केऽप्येतद्वृत्तलक्षणम् ।
लोकेऽनुष्टुबिति ख्यातं तस्याष्टाक्षरता मता ।। ८ ।।

इति छन्दोमञ्जर्यां विषमवृत्ताख्यश्चतुर्थः स्तबकः ।

व्याख्या—अत्र वक्त्रनामच्छन्दसि सर्वत्र = सर्वेषु पादेषु पञ्चमं लघु, द्वितीयचतुर्थयोः पादयोः सप्तमं लघु षष्ठं च गुरु जानीयात् । शेषाक्षरेषु न कोऽपि नियमः । के अपि = केचन विद्वांसः एतल्लक्षणकमपि वृत्तं न स्वीकुर्वन्ति, तेषामस्य वृत्तस्याष्टाक्षररूपत्वं मतम् ।

हिन्दी—वक्त्र नामक वृत्त में सभी चरणों मे पाँचवाँ वर्ण लघु, द्वितीय चतुर्थ चरण में सप्तम वर्ण लघु और षष्ठ गुरु होता है शेष में कोई नियम नहीं है । कुछ विद्वान् इस लक्षण को नहीं मानते हैं तदनुसार केवल अष्टाक्षरता होनी चाहिए । लोक में वह छन्द अनुष्टुप् नाम से प्रख्यात है ।

इति परमेश्वरदीन पाण्डेय कृतायाः सुधासंस्कृत-हिन्दीव्याख्याद्वयोपेतायाः छन्दोमञ्जर्याश्चतुर्थः स्तबकः ।

पञ्चमः स्तबकः

अथ मात्रावृत्तम्

ज
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग
SS S SI IS SSS III SIIIS S

लक्ष्मै तत् सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे जः ।

६
।

षष्ठो जश्च नलघु वा प्रथमेऽर्धे नियतमार्यायाः ।। १ ।।
षष्ठे द्वितीयलात् परके न्ले मुखलाश्च सयतिपदनियमः ।

६
।

चरमेऽर्धे पञ्चके तस्मादिह भवति षष्ठो लः ।। २ ।।

(क) कृष्णः शिशुः सुतो मे बल्लवकुलटाभिराहृतो न गृहे ।
क्षणमपि वसत्यसाविति जगाद गोष्ठ्यां यशोदाऽऽर्या ।।१।।
(ख) वृन्दावने सलीलं वल्गुद्रुमकाण्डनिहिततनुयष्टिः ।
स्मेरमुखार्पितवेणुः कृष्णो यदि मनसि कः स्वर्गः ? ।।२।।

व्याख्या—अन्ते गुरुणा उपेता=संयुता सप्तगणा आर्यायाः प्रथमे अर्द्धे भवन्ति । इह च विषमे=प्रथमतृतीयपञ्चमसप्तमगणेषु 'गोगुरुमध्यगतः' इति लक्षणो जगणो न भवति । षष्ठो गणः जः=जगणः स्यात् यदि वा नलघु=नगणो लघुश्च स्यात् ।

यथा—(क)आर्या=श्रेष्ठगुणोपेता यशोदा=नन्दपत्नी । गोष्ठ्यां=समाजे इति एवं वक्ष्यमाणं जगाद=बभाण । शिशो=हे बाल ! मे सुतः वल्लव-कुलटाभिः=गोपिकाकुलटाभिः आहृतः=अन्यत्र प्रापितः । अतः क्षणमपि गृहे न वसति=न तिष्ठति । एषा जगणषष्ठाऽऽर्या ।

(ख) वृन्दावने = वृन्दावनस्थाने । वल्गुद्रुमकाण्डनिहिततनुयष्टिः—वल्गुनि=मनोज्ञे द्रुमकाण्डे=वृक्षस्कन्धे निहिता=आरोपिता गात्रयष्टिः=शरीरयष्टिः । स्मेरमुखार्पितवेणुः—स्मेरमुखे=विहसितानने अर्पितः=धृतः वेणुः येनासौ कृष्णः=माधवः यदि=चेत् मनसि=चेतसि स्वर्गः=स्वर्गलोकः कः ?

हिन्दी – विषम गण अर्थात् प्रथम तृतीय पञ्चम तथा सप्तम गणों में जगणरहित अंत में गुरु युक्त सात गण वाला आर्या छन्द होता है । इसमें षष्ठ गण या तो जगण होगा अथवा नगण और एक लघु । यहाँ पर गण से तात्पर्य पूर्वोक्त त्रिवर्णात्मक नगण भगण आदि का ग्रहण नहीं होता है बल्कि चतुष्कलात्मक गणों का होता है ।

षष्ठ गण में चारो लघु वर्ण होने पर द्वितीय लघु से पूर्व यति होती है तथा सातवें गण में चारो लघु वर्ण होने पर प्रथम लघु से पूर्व यति होती है शेषार्द्ध में षष्ठगण केवल लघुवर्णात्मक होता है तथा पाँचवे गण के चतुर्लघुवर्णात्मक होने पर प्रथम लघु से पूर्व यति होती है ।

यथा–(क) श्रेष्ठा यशोदा ने गोष्ठी में कहा कि मेरे शिशु कृष्ण को दुष्ट गोपियाँ कहीं बहका कर ले गई हैं अतः वह क्षण भर को भी घर पर नहीं ठहरता है ।

(ख) वृन्दावन में सुन्दर पेड़ के तले बैठ कर हँसते हुए मुरली वजाने वाले मुरली धर का ध्यान यदि मन में है तो स्वर्ग की क्या चिन्ता है । वह तो एक साधारण वस्तु है ।

पथ्या विपुला चपला मुखचपला जघनचपला च ।
गीत्युपगीत्युद्गीतय आर्यागीतिश्च नवधाऽऽर्या ।। ३ ।।

व्याख्या—१. पथ्या, २. विपुला, ३. चपला, ४. मुखचपला, ५. जघन-चपला, ६. गीति, ७. उपगीति, ८. उद्गीति, ९. आर्यागीति इति नवधा=नव प्रकारा आर्या भवति ।

हिन्दी—पथ्या आदि नौ उपर्युक्त भेद आर्या के विद्वानों ने स्वीकार किये हैं।

३

। । । । ऽ । । । । ऽ

प्रथमगणत्रयविरतिर्दलयोरुभयोः प्रकीर्तिता पथ्या।

जय जय नाथ! मुरारे! केशव! कंसान्तकाच्युतानन्त।
कुरु करुणामिति भणितिः पथ्या भवरोगदुःस्थानाम् ॥

व्याख्या—तत्र च=पथ्यायां च उभयोः अर्द्धयोः अन्तरे यदि चतुष्कलात्मक-गणत्रयानन्तरं विरतिः=यतिः स्यात् तदा पथ्यानामकं वृत्त भवति।

यथा—नाथ! मुरारे! केशव! कंसान्तक!=हे कंससंहारक! अच्युत! अनन्त! जय=विजयताम्। (त्वम्) मयि=ममोपरि। करुणां=दयाम् कुरु=सम्पादय। इति एव भणिति=कथनम् भवरोगदुःस्थानां=जगत्क्लेशदुर्दशा-ग्रस्तानां नराणां कृते पथ्या=हितकारिणी।

हिन्दी—पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध दोनों पादों के बाद यति होने पर पथ्या होती है।

यथा—"हे नाथ! मुरारे! केशव! कंससंहारक! अच्युत! अनन्त! आपकी जय हो। आप मुझपर दया करें।" इस प्रकार का कथन संसार के रोगदुर्दशाग्रस्तलोग के लिए कल्याण कर होवे।

३

ऽऽ । । ऽ । । ऽ

संलंघ्य गणत्रयमादिमं शकलयोर्द्वयोर्भवति पादः ॥ ४ ॥

३

ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति।

पुंसां कलिकालव्यालहतानां नास्त्युपहतिरल्पाऽपि।
वीर्यविपुला मुखे चेत् स्याद् गोविन्दाख्यमन्त्रकला ॥

व्याख्या—यस्याः आर्यायाः द्वयोः शकलयोः=उभयोरपि खण्डयोः आदिमं=प्रथमं गणत्रयं संलंघ्य=विहाय। पादो भवति तां पिंगलनागो विपुलां=विपुलाभिधां समाख्याति=कथयति।

यथा—कलिकालव्यालहतानां—कलिकाल एव व्यालः=कलिसर्पः तेन हतानां=दष्टानां पुंसां=नराणाम्। अल्पा=स्वल्पा अपि उपहतिः=हानिः न=नास्ति यदि वीर्यविपुला=पराक्रमबहुला गोविन्दाख्या=गोविन्द-संज्ञका मन्त्रकला—मन्त्रस्य कला मुखे=आनने स्यात्। गोविन्दनामोच्चारणे नरः दुरवस्थां न प्राप्नोति।

हिन्दी—जिस आर्या के दोनों अर्धों में आदि के तीन गणों को छोड़ कर पाद हो उसको पिंगलनागाचार्य विपुला कहते हैं।

यथा—कलिकाल रूपी साँप से काटे हुए लोगों की जरा-सी भी हानि नहीं है। यदि विपुलवीर्या गोविन्दनामोच्चारण मन्त्र की कला उसके मुँह में है। अर्थात् गोविन्द नाम जपने वाला मनुष्य कभी जरा-सी भी दुरवस्था को नहीं प्राप्त होता है।

ज ज
२ ४
। ऽ । । ऽ ।

दलयोर्द्वितीयतुर्यौ गणौ जकारौ तु यत्र चपला सा ॥ ५ ॥

चपला न चेत् कदाचिन्नृणां भवेद् भक्तिभावना कृष्णे।
धर्मार्थकाममोक्षास्तदा करस्था न सन्देहः ॥

व्याख्या—यस्या आर्यायाः दलयोः द्वयोः अप्यर्धयोः द्वितीयचतुर्थौ गणौ जकारौ=जगणौ स्यातां सा चपला नाम्नी आर्या भवति।

यथा—चेत्=यदि। कदाचित् नृणां=नराणाम्। कृष्णे=माधवे। भक्तिभावना भक्तिकृता आस्था चपला=अस्थिरा न स्यात्=न भवेत् तर्हि धर्मार्थकाममोक्षाः=सकलं वर्गचतुष्टयम्। करस्थाः=हस्तगताः भवेयुः, नात्र सन्देहः।

हिन्दी—जिस आर्या के दोनों अर्धकों के दूसरे तथा चौथे गण जगण हों वह चपला आर्या कहलाती है।

यथा—यदि कदाचित् लोगों की श्रीकृष्ण जी में भक्तिभावना चञ्चल न हो जाये तो धर्म अर्थ काम और मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय उसको अनायास ही प्राप्त हो जाते हैं।

ज ज
२ ४
। ऽ । । ऽ ।

आद्यं दलं समस्तं भजेत लक्ष्म चपलागतं यस्याः।

६
।

शेषः पूर्वजलक्ष्मा मुखचपला सोदिता मुनिना॥ ६॥

नन्दसुत ! वञ्चकस्त्वं दृढं न ते प्रेम गच्छ तत्रैव।
यत्र भवति ते रागः क्वापि जगादेति मुखचपला॥

व्याख्या—यस्याः आर्यायाः आद्यं दलं=प्रथमः अर्द्धः। चपलागतं लक्ष्म =चपलाऽऽर्यालक्षणम्। भजेत् शेषः=द्वितीयः अर्द्धः पूर्वजलक्ष्मा=पूर्वोक्तार्या समः स्यात् तदा सा आर्या पिंगलाचार्येण मुखचपला उदिता= कथिता।

यथा—हे नन्दसुत=नन्दनन्दन, त्वम् वञ्चकः=छलयुक्तः असि। ते=तव प्रेम=प्रीतिः दृढं=सुस्थिरम्। न=नास्ति। यत्र क्वापि=कुत्रापि ते रागः=प्रेम भवति विद्यते तत्रैव गच्छ=याहि इति=एवं कापि=काचित् मुखचपला=वावदूका गोपी गोपाङ्गना जगाद=कथितवती।

हिन्दी—जिस आर्या का प्रथमार्ध चपला के समान हो और द्वितीय अर्ध सामान्य आर्या-जैसा हो वह मुखचपला आर्या कहलाती है।

यथा—हे नन्दनन्दन ! तुम बड़े ठग हो, तुम्हारा प्रेम स्थिर नहीं है। जिससे तुम्हारा सच्चा अनुराग है उसी के पास जाओ। इस प्रकार किसी गोपिका (मुखचपला) ने कहा।

ज
६
। ऽ ।

प्राक् प्रतिपादितमर्धे प्रथमे प्रथमेतरे च चपलायाः।

ज ज
२ ४
। ऽ । । ऽ ।

लक्ष्माश्रयेत सोक्ता विशुद्धधीभिर्जघनचपला॥ ७॥

कृष्णः शृङ्गारपटुर्यौवनमदरागचपलललिताङ्गः।
आसीद् व्रजाङ्गनानां मनोहरो जघनचपलानाम्॥

व्याख्या—या आर्या प्रथमे अर्धे प्राक् प्रतिपादितं=पूर्वोक्तम्, लक्ष्म= आर्यालक्षणं, प्रथमेतरे=द्वितीये च चपलायाः लक्षणम्, आश्रयेत=अवलम्बेत सा विशुद्धधीभिः=निर्मलबुद्धि-पण्डितैः, जघनचपला। कथिता=उक्ता।

यथा—यौवनस्य=तारुण्यस्य मदरागाभ्यां=क्षीवप्रेमभ्यां चपलं= चंचलं ललितं=मनोरमं च अङ्गं=शरीरं यस्य सः। शृङ्गारपटुः—शृङ्गारे= सज्जायां पटुः=निपुणः कृष्णः=माधवः जघनचपलानां=नर्त्तनशीलानाम् व्रजांगनानाम् गोपिकानाम् मनोहरः=मनोरमः चित्तप्रियः आसीत्=अभवत्।

हिन्दी—जो प्रथम अर्ध में पर्वोक्त आर्या लक्षण तथा द्वितीय अर्ध में चपला आर्या की भाँति हो उसे निर्मल-बुद्धि विद्वानों ने जघनचपला कहा है।

यथा—यौवन के मद तथा अनुराग से चञ्चल तथा मनोरम शरीर वाले शृङ्गार-निपुण श्रीकृष्ण ने नर्तनशील व्रजाङ्गनाओं के चित्त को आकृष्ट कर लिया।

ज
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ग
ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ

आर्याप्रथमार्धसमं यस्या अपरार्धमाह तां गीतिम्।

केशववंशीगीतिर्लोकमनोहरिणहारिणी जयति।
गोपीमानग्रन्थेर्विमोचनी दिव्यगायनाश्चर्या॥

व्याख्या—यस्याः अपरार्धम्=उत्तरार्धम् । आर्यायाः प्रथमार्धेन=पूर्वार्धेन समं=सदृशं स्यात् तां गीतिं=गीतिनाम्नीं पिंगलाचार्यः आह=कथयामास ।

यथा—केशववंशीगीतिः—केशवस्य=माधवस्य वंशी=मुरलिका, तस्या गीतिः=ध्वनिः । लोकमनोहरिणहारिणी लोकानां=जनानां मनः=चेतः एव हरिणः=मृगस्तस्य हारिणी=हरणशीला । गोपीनां=गोपवनितानां मानग्रन्थेः विमोचिनी=मानमर्दिनी । दिव्यगायनानां=गन्धर्वादीनाम् । अपि सम्पादितम् आश्चर्यम्=अद्भुतं यया सा जयति=सर्वोत्कृष्टा भवति ।

हिन्दी—जिस आर्या का उत्तरार्द्ध उसके पूर्वार्ध के समान हो उसे विद्वानों ने गीतिका कहा है ।

यथा—मोहन की मुरली की धुनि लोगों के मनरूपी हिरण को भी आकृष्ट करने वाली, गोपिकाओं की मान ग्रन्थि को शिथिल करने वाली, दिव्य-गानों (गन्धर्वादि) को भी अचम्भित करने वाली है । उसकी जय हो ।

६
।

आर्यापरार्धतुल्ये दलद्वये प्राहुरुपगीतिम् ॥ ८ ॥

नवगोपसुन्दरीणां रासोल्लासे मुरारातिम् ।
अस्मारयदुपगीतिः स्वर्गकुरङ्गीदृशां गीतेः ॥

व्याख्या—दलद्वये, आर्याया अपरार्धतुल्ये=उत्तरार्धसदृशे सति, उपगीति प्राहुः ।

यथा—रासस्य उल्लासे=रासक्रीडायां, नवा या गोपसुन्दर्यस्तासाम्, उपगीतिः=गानं, मुरारातिं=कृष्णं, स्वर्णकुरङ्गीदृशां=स्वर्गाङ्गनानां, गीतेः=अस्मारयत् ।

हिन्दी—आर्या के उत्तरार्ध के समान दोनों अर्धों के होने पर, उपगीति छन्द होता है ।

यथा—रासलीला के समय गोपियों की गीत-ध्वनि सुनकर श्रीकृष्ण को स्वर्ग-सुन्दरियों के गाने की याद आ गयी ।

६
।

आर्याशकलद्वितये विपरीते पुनरिहोद्गीतिः ।

नारायणस्य सन्ततमुद्गीतिः संस्मृतिर्भक्त्या ।
अर्चायामासक्तिर्दुस्तरसंसारसागरे-तरणिः ॥

व्याख्या—आर्यायाः शकलद्वितये=अर्धद्वितये । विपरीते=विरुद्धे सति अर्थात् पूर्वार्धे स्थाने उत्तरार्द्धम्, उत्तरार्धस्थाने च पूर्वार्धे सति उद्गीतिर्भवति ।

यथा—नारायणस्य=विष्णोः सन्ततं=निरन्तरम् । उद्गीतिः=संकीर्तनम् भक्त्या=भक्तिभावेन । संस्मृतिः = संस्मरणम् । अर्चायाम्=पूजायाम् आसक्तिः=अनुरक्तिः । दुस्तरसंसारसागरे-दुस्तरे=दुर्गमे संसारसागरे=विश्वसिन्धौ तरणिः=नौका इव भवतीति ।

हिन्दी—आर्या के द्वितीयार्ध में पूर्वार्द्ध तथा पूर्वार्ध में द्वितीयार्ध होने पर उद्गीति होती है ।

यथा—भगवान् विष्णु का निरन्तर संकीर्त्तन करना, भक्ति से स्मरण करना तथा पूजा में आसक्ति करना दुर्गम संसार सागर को पार करने के लिए नौका-सदृश हैं ।

७ ग ग

ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । । । । ऽऽ ।ऽ। ऽ ऽ ऽ ऽ

आर्याप्राग्दलमन्तेऽधिकगुरु तादृक् परार्धमार्यागीतिः ॥९॥

(क) हर्षाश्रुस्तिमितदृशः प्रमोदरोमाञ्चकञ्चुकाञ्चितदेहाः ।
आर्यां गीतिं भक्त्या गायन्ति श्रीपतेश्चरितसम्बद्धाम् ॥

(ख) चारुसमीरणरमणे हरिणकलङ्ककिरणावलीसविलासा ।
आबद्धराममोहा वेलामूले विभावरी परिहीणा ॥

इति भट्टौ । १३।१

व्याख्या—आर्यायाः प्राग्दल=पूर्वार्धं यदि अन्ते अधिको गुरुर्यस्य एतादृशं स्यात् तादृगेव च परार्धमुत्तरार्धं स्यात् तदा आर्यागीतिर्भवति ।

यथा—(क) हर्षाश्रुभिः—हर्षस्य=आमोदस्य अश्रुभिः=नयनाम्बुभिः स्तिमिता=आर्द्रा । दृक्=दृष्टिर्येषां ते । प्रमोदरोमाञ्चकञ्चुकाञ्चितदेहा-

प्रमोदरोमाञ्चैरेव कञ्चुकैः=आच्छादनवरत्रविशेषैः अञ्चितः=समाच्छादितो देहः येषां ते । आर्याः=उत्तमजनाः भक्त्या=श्रद्धया श्रीपतेः=विष्णोः चरित सम्बद्धां=चरित्रसम्बन्धिनीम् । गीतिं=गानं गायन्ति ।

(ख) चारुसमीरणरमणे-चारुसमीरणेन=रुचिरपवनेन रमणे = मनोरमे बेलामूले=समुद्रसन्निकटे हरिणकलङ्कस्य=मृगाङ्कस्य चन्द्रस्य किरणावलीस-विलासा— किरणावलीभिः=रश्मिराजिभिः सविला सा=विलासयुक्ता । आबद्धराममोहा-आबद्धः=कृतः रामस्य=रामचन्द्रस्य मोहः यया सा । विभा-वरी=निशा । परिहीणा=व्यतीता ।

हिन्दी—यदि आर्या का पूर्वार्ध अन्त में एक गुरुवर्ण युक्त हो और उत्तरार्ध भी ऐसा ही हो तो उसे आर्यागीति कहते हैं ।

यथा—(क) आनन्दाश्रुपूर्ण तथा रोमाञ्चयुक्त आर्यजन श्रीकृष्णजी के चरित्र से सम्बन्ध रखने वाली गीति को भक्तिपूर्वक गाते हैं ।

(ख) रुचिरवायुवाले समुद्रके किनारे मृगाङ्कचन्द्रमा की सविलासा रश्मिराशि से युक्त, रामचन्द्रके मोह को उत्पन्न करने वाली निशा व्यतीत हो गई ।

अथ वैतालीयम्

६ र ल ग ७ र ल ग

S I I S S I S I S S I I S S S I S I S

षड् विषमेऽष्टौ समे कला,स्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः ।

६ र ल ग ८ र ल ग

I I S I I S I S I S S S S S S I S I S

न समात्र पराश्रिता कला, वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः ॥ १ ॥

घुसृणेन मदेन चर्चितं, तव यन्निन्दति राधिके ! कुचम् ।
मुदमातनुतेऽत्र पाकिमं, वैतालीयमिदं फलं हरेः ॥

व्याख्या—वैतालीये वृत्ते विषमे पादे अर्थात् प्रथमे तृतीये च पादे षट् कलाः=मात्राः समे=द्वितीये चतुर्थे च पादे अष्टौ कलाः स्युः, तासामन्ते रगणो लघुः गुरुश्च स्यात्, समे पादे प्रयुक्ता सकलाः कला निरन्तराः लघ्व्यो गुर्व्यो न भवेयुः । अत्र च सर्वास्वपि कलासु समाः कलाः पराश्रिताः तत्पूर्वया तदुत्तरया च सम्बद्धा न करणीया । एवञ्च विषमपादयोश्चतुर्दशमात्राः समपादयोश्च षोडशमात्राः भवन्ति ।

यथा—हे राधिके=अयि राधे ! घुसृणेन=कुङ्कुमेन मदेन कस्तूरिकया च चर्चितं=लिप्तं तव=ते कुचं=पयोधरम् यत् तालीय=तालवृक्षसम्बन्धि इदं फलं निन्दति । अत्र=अस्मिन् काले पाकिमं=पक्वं तदेव फलं श्रीकृष्णस्य मुदया तनुते=प्रसन्नतां करोति । वै इति पादपूरणाय ।

हिन्दी—वैतालीयवृत्त में विषम अर्थात् प्रथम तृतीय चरण में छः मात्राएँ और सम अर्थात् द्वितीय चतुर्थ पाद में आठ मात्राएँ तथा तदुपरान्त रगण और लघु व गुरु होते है । समपाद में प्रयुक्त आठो मात्राओं में क्रमशः ह्रस्व अथवा दीर्घ मात्र नहीं होनी चाहिए । पूर्ण सम मात्राएँ पहली बाद की विषममात्रा से मिली हुई नहीं चाहिए ।

यथा--हे राधिके ! कुङ्कुम तथा कस्तूरी लेप से युक्त तुम्हारे पयोधरों की समानता करने वाले इस ताल के फल को इस समय पका देखकर श्रीकृष्णको अत्यन्त आनन्द होता है ।

S S

तत्रैवान्तेऽधिके गुरौ स्या,दौपच्छन्दसिकं कवीन्द्रहृद्यम् ॥ २ ॥

आतन्वानं सुरारिकान्तास्वौपच्छन्दसिकं हृदो विनोदम् ।
कंसं यो निर्जघान देवो वन्दे तं जगतां स्थितिं दधानम् ॥

व्याख्या—तत्रैव वैतालीये वृत्ते अन्ते एकस्मिन् गुरौ वर्णेऽधिके सति कवीन्द्राणां हृद्यं=मनोरमम् औपछन्दसिकं नाम वृत्तं स्यात् ।

यथा—यः देवः दिव्यगुणः=अलौकिकगुणसम्पन्नः । सुरारीणाम्= राक्षसानाम् । कान्तासु=रमणीषु औपच्छन्दसिकम्=अभिलाषानुकूलम् । हृदः = मनसः । विनोदं=प्रसन्नताम् । आतन्वानम्=विदधानं कंसं= औग्रसेनिम् । निर्जघान=हतवान् । तं जगतां=लोकानाम् स्थितिं = सत्ताम् दधानं=विभ्राणम् कृष्णं=माधवम् वन्दे = प्रणमामि ।

हिन्दी—वैतालीयछन्द में एक गुरु वर्ण अधिक होने से कवियों के मन को हरने वाला औपच्छन्दसिक नाम छन्द होता है ।

यथा—जिन श्रीकृष्ण ने राक्षसों की भार्याओं के साथ इच्छानुकूल काम क्रीडा करने वाले कंस को मार डाला, जगत की सत्ता को धारण करने वाले उस श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ।

अथ पज्झटिका

१६

९ ९

I I I I I I I I S I I S S S

प्रतिपदयमकितषोडशमात्रा, नवमगुरुत्वविभूषितगात्रा ।

९ ९

S S

पज्झटिका पुनरत्र विवेकः, क्वापि न मध्यगुरुर्गण एकः ॥१॥

तरलवतंसाश्लिष्टस्कन्ध,श्चलतरपज्झटिकाकटिबन्धः ।
मौलिचपलशिखिचन्द्रकवृन्दः कालियशिरसि ननर्त मुकुन्दः ॥

व्याख्या—प्रतिपदं=प्रत्येकचरणं यमकिता युग्मविच्छिन्नाः षोडश मात्राः भवन्ति। नवमात्रायाः गुरुत्वेन विभूषितं गात्रं यस्याः तादृशी पज्झटिका भवति। अस्मिन् पज्झटिकानाम्नि वृत्ते क्वापि एकोऽपि मध्यगुरुर्गणः अर्थात् जगणो न स्यात् इति विवेकः=सिद्धान्तः।

यथा—तरलवतंसेन—तरलेन=चपलेन वतंसेन=कर्णाभूषणेन आश्लिष्टः स्पृष्टः कन्धो यस्य सः। चलतरा=अतिशयचञ्चला या पज्झटिकाः=क्षुद्रघटिकास्ताभिः कटिबन्धः—कटेः बन्धः=बन्धनम् यस्य सः। मौलौ=शिरसि चपलं शिखिनां=मयूराणाम् चन्द्रकवृन्दं यस्य तथाविधः मुकुन्दः=माधवः कालियशिरसि=कालियसर्पस्योपरि। ननर्त=नृत्यं चकार।

हिन्दी—जिस छन्द में प्रत्येक चरण में युग्मविच्छन्न १६ मात्राएँ हो तथा नवम मात्रागुरु हो और एक भी जगण न हो उसे पज्झटिका वृत्त कहते हैं।

यथा—चञ्चल कर्णाभूषण तथा ध्वनित रशना एवं कम्पित मुकुट को धारण करने वाले कृष्ण ने कालियनाग के शिर पर नृत्य किया अर्थात् अनायास ही यमपुरी भेज दिया।

९

|

नवमगुरुत्वं व्यभिचरति च ॥ २ ॥

रणधरणीजितरजनिविहारी।

व्याख्या—नवममात्रायाः गुरुत्वस्य क्वापि व्यभिचारोऽपि दृश्यते। अर्थात् पज्झटिकायां नवमवर्णस्य गुरुतया शोभायाः उत्कृष्टतैव भवति। तस्य लक्षणघटकता च न स्वीकर्तव्या।

यथा—रणधरण्यां=युद्धभूमौ। जितो रजनिविहारी–रजन्यां=निशायां विहरति इति रजनिविहारी=निशाचरः येन सः।

हिन्दी—नवम वर्ण की गुरुता का कहीं कहीं व्यभिचार भी दिखलाई पड़ता है अर्थात् पज्झटिका में गुरुता से शोभा की उत्कृष्टता ही होती है।

यथा—रणभूमि में जिसने निशाचर को जीत लिया।

१३ ११

S S I S I I S I I S S I I I I S I

मात्रात्रयोदशकं यदि, पूर्वं लघुकविरामि ।
पश्चादेकादशकन्तु, दोहडिका द्विगुणेन ॥ ३ ॥

राई दोहडि पठण सुणि हसिओ कण्ण गआल।
विन्दावणघणकुञ्जघर चलिओ कमण रसाल॥

इति छन्दोमञ्जर्यां मात्रावृत्ताख्यः पञ्चमः स्तबकः।

व्याख्या—पूर्वं=प्रथमपादं त्रयोदशमात्रामयं लघुकविरामि=विरामे लघुवर्णयुक्तम् द्वितीयपादे च एकादशमात्राः विरामे च लघुवर्णः स्यात्, तदा दोहडिका नाम वृत्तं स्यात्। द्विरावृत्त्या पूर्यते। अर्थात् तृतीयचतुर्थचरणे प्रथमचतुर्थचरणसदृशे भवतः।

हिन्दी—यदि प्रथम चरण में तेरह मात्राएँ तथा द्वितीय चरण में ग्यारह मात्राएँ हों और इन सब मात्राओं के अन्त में एक लघु हो, तो दोहडिका नामक छन्द है। द्विरावृत्ति से इस छन्द की पूर्ति होती है, अर्थात् तृतीय, चतुर्थ चरण, प्रथम, द्वितीय चरण के समान होते हैं।

यथा—रसिक एवं कामुक कृष्ण राधिका की गीति को सुनकर हँसे और वृन्दावन के घने कुञ्जवन में गये। गोपियों की गीति का नाम 'दोहडिका' है।

इति परमेश्वरदीन पाण्डेय कृतायाः सुधा-संस्कृत-न्दीव्याख्याद्वयसंवलितायाः छन्दोमञ्जर्याः पञ्चमः स्तबकः।

षष्ठः स्तबकः

पद्यं गद्यमिति प्राहुर्वाङ्मयं द्विविधं बुधाः।
प्रागुक्तलक्षणं पद्यं गद्यं सम्प्रति गद्यते ॥ १ ॥
अपादः पदसन्तानो गद्यं तत्तु त्रिधा मतम्।
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदतः ॥ २ ॥
अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः।
तत्तु वैदर्भरीतिस्थं गद्यं हृद्यतरं भवेत् ॥ ३ ॥
भवेदुत्कलिकाप्रायं समासाढ्यं दृढाक्षरम्।
वृत्तैकदेशसम्बन्धाद् वृत्तगन्धि पुनः स्मृतम् ॥ ४ ॥

व्याख्या—बुधाः=काव्यतत्त्वज्ञाः। वाङ्मयं=वाक्यात्मकं काव्यम्। पद्यं=छन्दोमयम् गद्यं=गद्यात्मकं च द्विविधं=द्विप्रकारकम्। प्राहुः=ऊचुः। तत्र सम्प्रति = इदानीम्। गद्यं=गद्यात्मकं काव्यम् गद्यते=भाष्यते ॥१॥

मात्राक्षरनियमानुसारं विनिबद्धो भागः पादः तद्रहितः। तद् गद्यं तु त्रिधा=त्रिप्रकारकम् चूर्णकम्, उत्कलिकाप्रायं, वृत्तगन्धि च इत्येतानि तन्नामानि भवन्ति ॥ २ ॥

तत्र अकठोराक्षरं=सुकुमारवर्णम् अल्पसमासं = दीर्घसमाससंघटनाशून्यम् चूर्णकं विदुः विद्वांसः। तच्च चूर्णकं वैदर्भीरीतिस्थं = वैदर्भीरीतिसंघटितम्। हृद्यतरं=मनोमोहकं भवेत् ॥ ३ ॥

समासाढ्यं=दीर्घकठोरसमासयुक्तम्। दृढाक्षरं=कठोरवर्णयुक्तं गद्यम् उत्कलिकाप्रायं भवेत्। ओजसि चास्य विशेषेण प्रयोगः। वृत्तस्यैकदेशसम्बन्धाच्च वृत्तगन्धीति तृतीयप्रभेदः ॥ ४ ॥

हिन्दी—काव्य मर्मज्ञ विद्वान् वाक्यात्मक काव्य के पद्य तथा गद्य दो भेद कहते हैं। उनमें अब गद्य का निरूपण किया जा रहा है ॥ १ ॥

मात्राक्षरों से नियमित भाग पाद कहलाता है। उस पाद (चरण) से रहित पदों का समुदाय गद्य कहलाता है। गद्यके चूर्णिका, उत्कलिकाप्राय तथा वृत्तगन्धि यह तीन भेद होते हैं ॥ २ ॥

कोमलाक्षर और अल्पसमास वाली गद्यको चूर्णिका कहते हैं। यह वैदर्भी रीति में लिखे जाने पर अति सुन्दर होता है ॥ ३ ॥

समास बहुला कठोर वर्णों वाली उत्कलिकाप्राय कहलाती है। यत्र तत्र पद्य खण्ड की झलक लग जाने से उसका नाम वृत्तगन्धि होता है ॥ ४ ॥

चूर्णकं यथा—

स हि त्रयाणामेव जगतां गतिः परमपुरुषः पुरुषोत्तमो दृप्तदानवभरेण भङ्गुराङ्गीमवनिमवलोक्य करुणार्द्रहृदयस्तस्या भारमवतारयितुं रामकृष्णस्वरूपेणांशतो यदुवंशेऽवतार। यस्तु प्रसङ्गेनापि स्मृतोऽभ्यर्चितो वा गृहीतनामा पुंसा संसारसागरपारमवलोकयति।

व्याख्या—सः=असौ हि त्रयाणामेव जगतां = त्रिभुवनानाम्। गतिः = आश्रयः। परमपुरुषः=महत्पुरुषः पुरुषोत्तमः = पुरुषश्रेष्ठः। दृप्तदानवभरेण= गर्वितराक्षसभारेण। भंगुराङ्गी = नष्टावयवाम् अवनिं = भूमिम् अवलोक्य = दृष्ट्वा। करुणार्द्रहृदयः=दुःखितचेता। तस्याः पृथिव्याः भारम् अवतारयितुम्=दूरीकर्त्तुम्। रामकृष्णस्वरूपेण=रामकृष्णावतारेण अंशतः=अंशसहितः। यदुवंशे=यदुकुले अवततार=अवतीर्णो बभूव। यस्तु प्रसंगेनापि स्मृतः=स्मृतिपथं नीतः, अभ्यर्चितः = पूजितः वा गृहीतनामा पुंसा=विख्यातेन पुरुषेण संसारसागरपारम्=विश्वसिन्धुपारम्। अवलोकयति=पश्यति।

हिन्दी—वही त्रिभुवन का आश्रय परम पुरुष पुरुषोत्तम भगवान् गर्वित राक्षसों के भार से नष्टावयवों वाली पृथ्वी को देखकर करुणासे आर्द्रहृदय उसके भार को उतारने के लिए राम कृष्ण स्वरूप से अंशों सहित यदुकुल में अवतरित हुए। कोई भी प्रसंग से भी स्मरण किये अथवा पूजा कर या नाम लेने पर भी संसार सागर को भी पार कर लेता है।

उत्कलिकाप्रायं यथा—

प्रणिपातप्रवणसप्रधानाशेषसुरादिवृन्दसौन्दर्यप्रकटकिरीटकोटिनिविष्टस्पष्टमणिमयूखच्छटाच्छुरितचरणनखचक्र! विक्रमोद्दामवामपादाङ्गुष्ठनखरशिखरखण्डितब्रह्माण्डविवरनिस्सरच्छरदमृतकरप्रकरभासुरसुरवाहिनीप्रवाहपवित्रीकृतविष्टपत्रितय कैटभारे! क्रूरतरसंसारसागरनानाप्रकारावर्तविवर्त्तमानविग्रहं मामनुगृहाण।

व्याख्या—प्रणिपातप्रवणा = प्रणतिमुखाः ये प्रधानेन = शक्रादिना सहिताः अशेषाः=समस्ताः सुरासुराः = देवदानवाः, तेषां वृन्दस्य=समूहस्य

सौन्दर्येण = सुन्दरतया प्रकटानां भासुराणां किरीटिनां = मुकुटानां कोटिषु=अग्रभागेषु निविष्टाः=जटिताः स्पष्टाः=प्रकाशमानाः ये मणयः तेषां मयूखच्छटाभिः=किरणशोभाभिः छुरितं=व्याप्तं चरणनखचक्रं=पदनखवृन्दं यस्य तत्सम्बुद्धौ। विक्रमोद्दामस्य=बलोद्धतस्य वामपदस्य अंगुष्ठनखरशिखरेण= अंगुष्ठनखाग्रेण खण्डितं=शकलीकृतं यत् ब्रह्माण्डविवरम्, ततः निःसरन्ति= निर्गच्छन्ती या शरदमृतकरस्य=शरदृतोश्चन्द्रस्य करप्रकरवत्=किरणमाला-वत् भासुरा=दीप्ता सुरवाहिनी गङ्गा तत्प्रवाहेण पवित्रीकृतं विष्टपत्रितयं लोकत्रयं येन तत्सम्बोधने कैटभारे=हे कैटभरिपो। विष्णो! क्रूरतरस्य= अतिक्रूरस्य संसारसागरस्य=जगत्सिन्धोः आवर्तेषु=जलभ्रमेषु विवर्तमानः विग्रहः=मूर्तिर्यस्य तम्। अनुग्रहाण=मयि अनुग्रहं कुरु।

हिन्दी—हे प्रणाम करते हुए इन्द्रादि देवताओं और दानवों के वृन्दकी सुन्दरता से प्रदीप्त मुकुटों के अग्रभाग में निविष्ट, स्पष्ट प्रकाशमान मणियों की किरण छटाओं से व्याप्त चरणनख वृन्द वाले! पराक्रम से उद्धत बाये पैर के अंगूठे के नखाग्रसे ब्रह्माण्ड विवर को नष्ट किये और उससे निकल रही शरच्चन्द्र की किरणमाला सदृश दीप्त सुरवाहिनी गंगा उसके प्रवाहसे तीनों लोकों को पवित्र करने वाले हे कैटभारे! अतिदुस्तर संसार सागर के जल भ्रमों (भौंरों) में पड़े (फँसे) शरीर वाले मुझे बचाइये।

वृत्तगन्धि यथा—

जय जय जनार्दन! सुकृतिमनस्तडागविकस्वरचरणपद्म! पद्मपत्र-नयन! पद्मापद्मिनोविनोदराजहंस! भास्वरयशःपटलपूरितभुवनकुहर! हरकमलासनादिवृन्दारकवृन्दवन्दनीयपदारविन्दद्वन्द्व! द्वन्द्वनिर्मुक्त-योगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्कृतनिरञ्जनज्योतिःस्वरूप! विश्वरूप! अनाथ-नाथ! मामनवधिभवदुःखव्याकुलं रक्ष।

व्याख्या—जनार्दन=हे जननामासुरविशेषमर्दकारिन्! सुकृतिमन-स्तडागविकस्वरचरणपद्म—सुकृतिनां = पुण्यवतां मनांसि = चित्तानि एव तडागाः=सरोवराणि, पद्माकरास्तेषु बिकस्वरं=विकसितं चरणपद्मं = पादार-विन्दं यस्य तत्सम्बोधने। पद्मपत्रनयन—पद्मपत्रमिव = कमलदलमिव नयने=

चक्षुषी यस्य सः तत्सम्बोधने। पद्मापद्मिनीविनोदराजहंस!—पद्मा=कमला सैव पद्मिनी = कमलिनी तस्यां विनोदकारी = मनोमोदकः यः राजहंसः इव तत्सम्बुद्धौ। भास्वरयशःपटलपूरितभुवनकुहर—भास्वरं = दिप्तिवन्तं यत् यशःपटलं, तेन परिपूरितं=व्याप्तं भुवनकुहरं=ब्रह्माण्डं येन तत्सम्बोधने। हर-कमलासनादिवृन्दारकवृन्दवन्दनीयपदारविन्दद्वन्द्व—हरः = शम्भुः कमला-सनः=विधाता एतौ आदौ=आरम्भे येषां तथा भूताः ये वृन्दारकाः=सुराः तेषां वृन्देन=समुदायेन वन्दनीयं=नमनीयं पदारविन्दद्वन्द्वं=चरणकमलयुगलम् यस्य तत्सम्बोधने। द्वन्द्वनिर्मुक्तयोगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्कृतनिरञ्जनज्योतिः-स्वरूप—द्वन्द्वैः=सुखदुःखादिभिः निर्मुक्ताः=विरहिताः ये योगीन्द्राः = योगिपुरुषाः तेषां हृदयमन्दिरे=चेतोमन्दिरे आविष्कृतं=प्रकाशितं निरञ्जनम् = अव्यक्तम् ज्योतिःस्वरूपं = तेजोरूपं यस्य तत्सम्बोधने। विश्वरूप=विश्वं = संसारमेव रूप यस्य सः तत्सम्बोधने। अनाथानाम्=असहायानाम् नाथः=पालकः, तत्सम्बुद्धौ। अनवधिदुःखव्याप्त=अनवधिः=असीमितं यद् दुःखं=क्लेशं तेन व्याप्तं=युक्तम्। मां रक्ष=मामव।

हिन्दी—हे जनार्दन! आपकी जय हो। पुण्यात्माओं के मनरूपी तडाग में प्रफुल्लित कमलिनी के सदृश चरणों वाले! कमलाक्ष! कमलिनी में विनोद करने वाले राजहंस! प्रकाशमान कीर्ति पटल से व्याप्त ब्रह्माण्ड वाले! विष्णु शिव तथा ब्रह्मादि देवताओं के समूह से वन्दनीय चरण-कमल-युगल वाले! अनाथनाथ! विश्वरूप! त्रिभुवन स्वामिन्! असीमित संसार क्लेश से व्याकुल मेरी रक्षा करो।

व्यवहारोचितं प्रायो मया छन्दोऽत्र कीर्तितम्।
प्रस्तारादि पुनर्नोक्तं केवलं कौतुकं हि तत्॥ ५॥

व्याख्या—अत्र = छन्दोमञ्जर्यामस्याम्। मया=गंगादासेन प्रायः व्यवहारोचितं=लोकव्यवहारयोग्यम्। छन्दः=पिंगलशास्त्रम् कीर्तितम्= वर्णितम् किन्तु अत्र प्रस्तारादिनोक्तम्=व्यर्थविस्तारं न कथितम्। यतः= यतोहि तत्=प्रस्तारम् केवलं कौतुकम्=लीलामात्रमेव।

हिन्दी—इस छन्दोमञ्जरीमें मैंने (गंगादास ने) प्रायः व्यवहार (प्रयोग)

के योग्य छन्दःशास्त्र का वर्णन किया है व्यर्थ का विस्तार नहीं किया है क्योंकि व्यर्थ का विस्तार केवल कौतुक ही है।

सर्गैः शोडशभिः समुज्ज्वलपदैर्नव्यार्थभव्याशयै-
र्येनाकारि तदच्युतस्य चरितं काव्यं कविप्रीतिदम्।
कंसारेः शतकं दिनेशशतकद्वन्द्वं च तस्यास्त्वसौ
गङ्गादासकवेः श्रुतौ कुतुकिनां सच्छन्दसां मञ्जरी॥ ६॥

॥ इति छन्दोमञ्जर्यां गद्यप्रभेदो नामा षष्ठः स्तबकः॥

व्याख्या—सर्गैरिति। येन गंगादासेन समुज्ज्वलपदैः=चमत्कारिपदैः। नव्यार्थभव्याशयैः—नव्यार्थाः=नूतनार्थाः भव्याशयाः=दिव्याभिप्रायाः येषु तथाविधैः। सर्गैः कविप्रीतिदसूरिप्रमोदकरं काव्यम्=कविकृत्यम्। अच्युतम्=अच्युतचरितं महाकाव्यम्। अकारिः कृतम्। तथा कंसारेः=कंसरिपोः कृष्णस्य शतकम्=शतश्लोकिनम्। दिनेशशतकद्वन्द्वम्—दिनेशस्य=सूर्यस्य शतकद्वन्द्वं=द्वयं=दिनेशद्विशतकनामकं ग्रन्थम्। अकारि=कृतम् तस्य=गंगादासस्य कवेः असौ सच्छन्दसां मंजरी=छन्दोमञ्जरी। कुतुकिनां=छन्दः-श्रवणकौतूहलकृताम्। श्रुतौ=कर्णे। कर्णालङ्कारभूतेति। अस्तु=भवतु।

हिन्दी—जिन गंगादास ने चमत्कारोत्पादक पदों से नूतन अर्थों तथा भव्य अभिप्राय पूर्ण सर्गों द्वारा कवियों को प्रसन्न करने वाले काव्य 'अच्युत-चरित' को बनाया तथा कंसारि श्रीकृष्णके शत श्लोकों और सूर्य द्विशतक की रचना की, उन गंगादास कवि की यह उत्तम छन्दों वाली छन्दोमञ्जरी कौतुकी पुरुषों के कान में कर्णभूषण बने अर्थात् वह पठन-पाठन द्वारा उपयोग में लावें।

इति परमेश्वरदीनपाण्डेय-कृतायाः सुधा-संस्कृत-हिन्दी-
व्याख्याद्वयोपेतायाः छन्दोमञ्जर्याः षष्ठः स्तबकः।

परिशिष्ट—क

छन्दोमञ्जर्याः कारिकाणामनुक्रमणिका

परिशिष्ट-ख

उदाहरणानामनुक्रमणिका

परिशिष्ट ग

व्याख्याकर्तुः परिचयः

अस्त्युत्तरप्रदेशोऽत्र राज्येषु भारतस्य वै ।
हृदयमिव सुराष्ट्रस्य तत्राऽस्ते शाहजीपुरम् ॥ १ ॥

कठिनी-गोमती-गङ्गा-देवहूत्यादिभिः सह ।
पुनन्ति सरितो यस्य भूमिममृतोपमैर्जलैः ॥ २ ॥

यत्र देवो विश्वनाथो दुर्गा दुर्गार्तिहारिणी ।
वनखण्डीनाथरूपोऽसौ शङ्करः शन्तनोति नः ॥ ३ ॥

तस्मिन्मण्डले लोक-विश्रुतो 'नाहिला' अभिधः ।
ग्रामो विप्रप्रमुखाणां विदुषां व्यापारिणामपि ॥ ४ ॥

सनाढ्येषु च तत्रैव सत्सु पाराशरान्वये ।
पाण्डेयोपाह्वविप्रोऽभूच्छिवचरण इतीरितः ॥ ५ ॥

शिवस्य चरणयोर्यस्य प्रीतिरासीन्निरन्तरम् ।
तत्सूनुः पार्वतीजानिः रेवतीरामविश्रुतः ॥ ६ ॥

रेवतीरमणे यस्य नितरां मानसं ह्यभूत् ।
चत्वारश्चाभवंस्तस्य पुत्राः पंक्तिपावनाः ॥ ७ ॥

जगन्नाथोऽथ जयलालो रामलालस्तथैव च ।
प्यारेलाल इति ख्यातो गीतवाद्यविशारदः ॥ ८ ॥

द्वितीयश्च तुरीयश्च तेषु यातावपुत्रिणौ ।
तृतीयो विदुरो जातः कथाकीर्तनकोविदः ॥ ९ ॥

सुदामादेविगर्भादाद्यस्याभवतां सुतौ ।
ज्येष्ठो ज्येष्ठगुणोपेतः रामचन्द्रः प्रतापवान् ॥ १० ॥

परमेश्वरदीनोऽहं कनिष्ठो वागुपासकः ।
स्वाध्यायाध्यापने यस्य कालक्षेपो बभूव वै ॥ ११ ॥

यस्य च वामाऽवामा नयनाभिरामा तन्वंगी ।
यस्याः सुधीः सुधीरः अवनिकुमारश्चापि सुतौ जातौ ॥१२॥

नयनाब्धिवियन्नेत्रे विक्रमे श्रावणीतिथौ ।
शुभे शुक्रे समाकीता छन्दःशास्त्र-विमर्शिनी ॥ १३ ॥

बालानां सुखबोधाय प्रौढानां हर्षकारिणी ।
सुधा-सम्वलिता सैषा छन्दोमञ्छरी भवेत् ॥ १४ ॥

॥ शुभं भूयात् ॥

प्रमुख प्रकाशन

आर्यासप्तशती । श्रीविश्वेश्वरपण्डितविरचिता । ग्रन्थकर्तृकृतव्याख्यासंवलिता । सम्पादक— पण्डित विष्णुप्रसाद भण्डारी । सम्पूर्ण	१५०.००
कादम्बरी । सविमर्श 'भावबोधिनी' संस्कृत-हिन्दा व्याख्योपेता । व्या.— डॉ. जयशङ्करलाल त्रिपाठी । आदितः शुकनासोपदेशांतो भागः	२००.००
कथामुख ९०.००, पूर्वार्द्ध ४२५.००, उत्तरार्द्ध २२५.०० एवं सम्पूर्ण	६५०.००
काव्यप्रकाशः । मम्मटभट्टविरचितः । सविमर्श 'रहस्यबोधिनी' हिन्दी व्याख्या सहित । व्याख्याकार— डॉ. गजानन शास्त्री मुसलगाँवकर। सम्पादक— आचार्य पण्डित सत्यनारायण शास्त्री खण्डूड़ी । १-६ उल्लास १५०.००, ७-१० उल्लास २५०.००, सम्पूर्ण	४००.००
काव्यानुशासनम् । आचार्यहेमचन्द्रविरचितं । स्वोपज्ञालङ्कार चूड़ामणि संज्ञकव्याख्याविवेकसंज्ञकविवरणेनोपबृंहितं 'जयाख्य' हिन्दी टीका सहितम् । टीकाकार— डॉ. रामानन्द शर्मा	३५०.००
काव्यालङ्कार । आद्याचार्य भामहविरचितः। आनन्दाऽऽख्य हिन्दी भाष्य संवलितः । भाष्यकारः साहित्यवारिधि डॉ. रामानन्द शर्मा	२५०.००
किरातार्जुनीयम् । महाकविभारविविरचितं । श्रीमल्लिनाथसूरीकृतया 'घण्टापथ'-व्याख्या अथ च 'सरला' हिन्दीव्याख्योपेतम् । सम्पादक एवं व्याख्याकार— डॉ. सुधाकर मालवीय । सम्पूर्ण	२००.००
कुट्टनीमतम् वा शम्भलीमतम् । दामोदरगुप्त विरचितम्। 'रसदीपिका' व्याख्या सहितम् । व्याख्याकार— तनसुखराम शर्मा त्रिपाठी । अंग्रेजी भूमिका सहित	२५०.००
कुमारसम्भवमहाकाव्यम् । कालिदास । मल्लिनाथकृत 'सञ्जीवनी' व्याख्या एवं 'सरला' हिन्दी टीका सहित । व्याख्या.—डॉ. सुधाकर मालवीय	१५०.००
कुवलयानन्दः। श्रीमदप्पयदीक्षितविरचितः। श्रीमद्गङ्गाधरमनीषिविरचित 'रसिकरञ्जनी' संस्कृत व्याख्या तथा पं. रा. हालास्यनाथविरचित टिप्पणी विभूषित एवं आचार्य जयशंकरलाल त्रिपाठी विरचित 'भावबोधिनी' हिन्दी व्याख्या सहित। सम्पूर्ण। (P. B.) २५०.०० (H.B.)	४२५.००
कृष्णकर्णामृतम् । लीलाशुकबिल्वमङ्गलविरचित । अन्वय, शब्दार्थ, अनुवाद एवं व्याख्या सहित । संपा. एवं व्याख्याकार—डॉ. कल्याणलाल शर्मा (श्रीकृष्णकर्णप्रिय सुललित पदावली जिसे चैतन्यमहाप्रभु दक्षिण भारत के एक मन्दिर से अपने साथ लाये और अपने अनुयायियों में प्रचारित किया)	१५०.००